परलोक की छाया में

(संशोधित संस्करण)

लेखक
मौलाना मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ाँ
संपादक
एस॰ कौसर लईक़

विषय

विषय-सूची

पृष्ठ

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

"ईश्वर दयावान, कृपाशील के नाम से"

दो शब्द

मानव संसार में आता है, यह हम सब देखते हैं। किन्तु क्या वह संसार के लिए आता है? कदापि नहीं। यदि वह संसार के लिए आता तो फिर यहाँ से वह वापस कभी नहीं जाता। उसका ठिकाना तो कहीं और है। मानव को अपना ठिकाना पाना है। उसे अपने असली घर में प्रवेश करना है — उस घर में जिसे छोड़ना न पड़े। जो सच-मुच उसका घर हो। जहाँ उसकी पूर्ण सुरक्षा हो सके। जो उसकी कामनाओं की दुनिया हो। जिसमें किसी प्रकार की कोई कमी शेष न रहे। जहाँ बाधाएँ न हों, अज्ञान न हो। जो मानव-व्यक्तित्व का वास्तविक परिवेश हो — वही मनुष्य की मंज़िल है, वहीं उसे पहुँचना है। उसी को धर्म ने परलोक की संज्ञा दी है। परलोक की दुनिया सबसे उत्तम है, किन्तु परलोक में उत्तम एवं उच्चतम स्थान उन्हीं व्यक्तियों को मिल सकेगा जो उसके योग्य होंगे; और ऐसा होना भी चाहिए। यदि प्रत्येक पात्र और अपात्र को वहाँ समान रूप से उच्च स्थान दिया जाए तो यह उस लोक की प्रतिष्ठा के अनुकूल बात न होगी।

वर्तमान लोक तो चुनाव के लिए है कि कौन उस शाश्वत आनन्द का अधिकारी है और कौन नहीं। यह चुनाव एक प्रकार से मानव को स्वयं करना है। चुनाव की पूरी आज़ादी मनुष्य को दी गई है। चुनाव वास्तव में वही है जो मनुष्य स्वयं करे। किसी मीठे फल का स्वाद लेने के लिए आवश्यक होता है कि उसे खाया जाए। बिना खाए किसी फल का स्वाद नहीं मिल सकता। यह सम्भव नहीं कि खाए कोई अन्य व्यक्ति और मज़ा किसी दूसरे व्यक्ति को मिले।

वर्तमान जीवन तो इसी लिए है और वर्तमान लोक में मनुष्य इसी लिए रखा गया है कि वह उस लोक में प्रवेश पाने का मार्ग अपनाए।

अब यह हमपर निर्भर है कि हम उस मार्ग को अपनाते हैं या इसी वर्तमान लोक को सब कुछ समझकर जीवन व्यतीत कर देते हैं। वर्तमान जीवन वस्तुतः एक क्रिया है और परलोक इस क्रिया का प्रभाव या परिणाम है। वर्तमान-जीवन फल को काटकर मुँह में रखने के सदृश है। इसका स्वाद पारलौकिक जीवन है। जो फल ही न खाए उसे स्वाद कैसे मिल सकता है। इसी प्रकार जो कड़ुवे फल खाए उसे मिठास कहाँ मिल सकती है। जो अच्छे बीज बोएगा, वही अच्छी फ़सल काट सकता है। काँटा बोनेवाले के हिस्से में तो काँटा ही आएगा। प्रस्तुत पुस्तक में जीवन के इसी आधारभूत पहलू पर विचार किया गया है तथा इस सम्बन्ध में जो शंकाएँ की जाती हैं उन्हें दूर करने का प्रयास किया गया है। ईश्वर से हमारी प्रार्थना है कि हमारा यह प्रयास सफल हो और जीवन के वास्तविक लक्ष्य को समझने में यह पुस्तक सहायक हो।

पुस्तक के इस नवीन संस्करण में पुस्तक की शुद्धता की ओर विशेष ध्यान दिया गया है और आवश्यकतानुसार विषय-वस्तु में संशोधन एवं अभिवृद्धि भी की गई है। इसके साथ ही इसकी पूरी कोशिश की गई है कि विभिन्न धर्मग्रन्थों के जो भी उद्धरण इस पुस्तक में उद्धृत किए गए हैं, वे प्रामाणिक एवं विशुद्ध रूप में हों। इसके संशोधन एवं संपादन इत्यादि कार्यों का उत्तरदायित्व बिरादरम जनाब एस॰ कौसर लईक़ साहब के सुपुर्द किया गया था, जिसका निर्वाहण उन्होंने पूरी लगन एवं सफलता के साथ किया है। इसके लिए हम उनके आभारी हैं। हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि ईश्वर उन्हें इसका अच्छा फल प्रदान करे।

अन्त में, पाठकों से अनुरोध करना चाहेंगे कि विशुद्धता एवं प्रामाणिकता की दिशा में हमारे पूर्ण प्रयास के उपरांत भी यदि कहीं कोई भूल-चूक रह गई हो तो पाठक हमें उससे सूचित करें, ताकि भावी संस्करण में उनका सुधार किया जा सके। हम इसके लिए पाठकों के आभारी होंगे।

— मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ाँ

है कोई जो सोचे!

पहेली जीवन की

मानव को जीवन मिला है। उसे इस जीवन का अनुभव भी होता है, किन्तु ऐसे लोग कम हैं जिन्होंने इस जीवन का गंभीरतापूर्वक बोध किया हो। साधारणतया मनुष्य एक तलीय और ऊपरी स्तर पर जीने और आगे बढ़ने के लिए सचेष्ट होता है। उसके जीवन में गहराई के आयाम का लोप ही दीख पड़ता है। ऐसा क्यों है? इसके कुछ जाने-अनजाने कारण हैं।

मनुष्य जिस वातावरण और जिस परिवेश में जीता-जागता है उसमें प्रचलित क्रियाकलापों, भावनाओं आदि का वह कुछ ऐसा अभ्यस्थ हो जाता है कि स्वतः उसके पाँव उसकी दिशा में उठने लगते हैं और उसे इसका अवसर ही नहीं मिल पाता कि वह जीवन-सम्बन्धी गहरे और मौलिक प्रश्नों पर विचार कर सके। ऐसी स्थिति में मानव इस ओर से नितांत लापरवाह हो जाता है कि वह गंभीरता के साथ प्राप्त जीवन और जीवन-सम्बन्धी मौलिक प्रश्नों पर विचार करे।

जीवन का अर्थ क्या है? हम कहाँ से आए हैं और हमें कहाँ जाना है? जीवन और मरण के बीच की इस संक्षिप्त अवधि में हमको क्या करना और क्या बनना चाहिए? जीवन अभिशाप का प्रतिफल है या वरदान का? संयोग है या कोई दायित्व और कर्तव्य? खोज है अथवा परिप्राप्ति? अपने में पूर्ण है या अपूर्ण? भूमिका है या आद्यन्त? इस जीवन का कोई दाता भी है या नहीं? इन प्रश्नों का उत्तर कहाँ खो गया है? वह कहाँ मिलेगा? कौन देगा? यदि कोई जीवन दाता है तो उसने इन प्रश्नों का उत्तर भी दिया है या जीवन दान करके उसने चुप रहना ही उचित समझा है?

इन प्रश्नों का मानव-जीवन से इतना घनिष्ठ सम्बन्ध है कि इनको जीवन से अलग नहीं किया जा सकता। जीवन का प्रादुर्भाव ही इन प्रश्नों के साथ होता है। यही कारण है कि इन प्रश्नों पर मानव सदैव से विचार करता आ रहा है।

जीवन-सम्बन्धी इन प्रश्नों पर सोच-विचार केवल एक दार्शनिक अभिरुचि का विषय नहीं है, बल्कि इसका मानव की जीवन्त इच्छाओं, कामनाओं और आवश्यकताओं से गहरा सम्बन्ध है। मानव हर चीज़ की उपेक्षा कर सकता है, किन्तु वह अपने मन को कहाँ ले जाएगा?

उदाहरणार्थ मानव-मन की यह एक प्रबल कामना है कि उसके जीवन का अन्त न हो। वह एक ऐसे बसन्त का स्वप्न देखता है जिसका कभी अंत न हो। वह धरती में एक बार जागकर सदा-सर्वदा के लिए मिट्टी में विलुप्त हो जाना नहीं चाहता। उसके जीवन का अन्त मृत्यु के रूप में हो, इससे वह सन्तुष्ट नहीं। यही कारण है कि वह मृत्यु के उस पार झाँककर देखना चाहता है और उसके विषय में तरह-तरह की कल्पनाएँ करता है—

इस पार प्रिये मधु है तुम हो,
उस पार न जाने क्या होगा।

जीवन की ख़ुशियाँ उसे कुछ इस प्रकार अपने में व्यस्त कर लेती हैं कि वह यह सोचने के लिए समय नहीं निकाल पाता कि यह जीवन और इसकी ख़ुशियाँ कहाँ से आई हैं और ये कब तक प्राप्त रहेंगी, किन्तु दुःख की प्रकृति कुछ दूसरी होती है। दुःख और कष्ट में वह यह सोचने पर विवश होता है कि यह क्या हो गया? जो ख़ुशी हमें प्राप्त थी वह क्यों छिन गई? क्या वह सदैव के लिए हमसे विलग हो गई? वह कहाँ गई? क्या वह हमें फिर मिल सकती है या नहीं? मानव की यही दुर्बलता है जिसके कारण साधारणतया वह सृष्टि और स्वयं अपने अस्तित्व-स्रोत के विषय में बहुत कम सोचता है। वह इस चिन्ता में नहीं

पड़ता कि उसे यह जीवन कैसे, कहाँ से और क्यों मिला, लेकिन जब वह अपने समक्ष अपने प्रियजनों को विवशता के साथ मरते देखता है तो मृत्यु की कड़ुवाहट उसकी ग़फ़लत और बेसुधी की समाधि को भंग कर देती है और कठोर-से-कठोर हृदयवाले व्यक्ति को भी यह हृदयविदारक दृश्य झकझोरकर रख देता है। और मानसिक शान्ति के लिए उसे भी भौतिक पदार्थों के अतिरिक्त किसी अन्य चीज़ की आवश्यकता का आभास हो उठता है।

मृत्यु और दुःख के अवसर पर कई अन्य गम्भीर बातों की ओर भी हमारा ध्यान जाता है, यह स्वाभाविक भी है। साधारणतया हमारी ज्ञानशक्ति पर जड़ता के पर्दे पड़ जाते हैं और हम जीवन की गहन समस्याओं और गहन विषयों की ओर ध्यान ही नहीं देते। दुःख जड़ता के परदों को फाड़ देता है। यही कारण है कि हम जीवन को गम्भीर रूप से दुःख और वेदना के द्वारा ही देख पाते हैं, सुख और आराम के माध्यम से नहीं। संवेदनशील व्यक्ति जानते हैं कि संसार में सारे सुखों और सुविधाओं के बावजूद आदमी की अनगिनत इच्छाएँ और कामनाएँ ऐसी हैं जो पूरी नहीं होतीं। उसकी कितनी ही कामनाएँ और अभिलाषाएँ तो ऐसी उत्तम एवं आकर्षक होती हैं कि मानव-प्रकृति उनकी उपेक्षा नहीं कर सकती। उनका पूरा न होना अत्यन्त दुःखद प्रतीत होता है।

अपने प्रियजनों का अपने से बिछड़ जाना और सदैव के लिए बिछड़ जाना एक ऐसी हृदयविदारक घटना है जो हमारे धैर्य को नष्ट कर देती है। उनकी ओर से सदैव के लिए निराश हो जाना मनुष्य को ऐसा अपंग कर देता है कि वह अपनी जगह पर तड़पकर रह जाता है। उसका अन्तर्मन यह मानने को तैयार नहीं होता कि जानेवाला सदैव के लिए उससे दूर हो रहा है। अपनी आँखों के सामने सब कुछ होते हुए देखकर भी अचेतन रूप में पुनः मिलन की आशा बनी ही रहती है।

कितने ही ऐसे लोग हैं जो नेकी और भलाई में लगे रहते हैं। उनकी क़ुरबानी और उत्सर्ग महान् होता है। किन्तु उनके हिस्से में दुःख और अनादर के अतिरिक्त कुछ नहीं आ पाता। इसके विपरीत कितने

ही दुर्जन जीवनभर अपनी दुष्टता से लोगों को सताते और उनकी आहें बटोरते रहते हैं। उनके कारण मानव-जगत् में भयंकर आतंक और बिगाड़ पैदा होता है। वे बुराई के ऐसे बीज बो जाते हैं कि शताब्दियों तक लोगों को उनके विषैले फल चखने पड़ते हैं। उनके अत्याचार और अनाचार से जनता कराह उठती है और उसकी हृदयविदारक आवाज़ बहुत ज़माने तक सुनाई देती रहती है। किन्तु वे होते हैं कि सुख और आनन्द का जीवन बिताते हैं। उन्हें किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचती। ऐसे अवसर पर एक विचारशील व्यक्ति यह सोचने लगता है कि आख़िर वह क्या देख रहा है! क्या पुण्यात्माओं को अपनी सेवाओं का कोई फल न मिल सकेगा? क्या संसार में गुणग्राहकता की भावना केवल एक धोखा है? क्या पाप और पुण्य, भलाई और बुराई, सेवा और अत्याचार में सिरे से कोई तात्विक और प्रभावकारी अन्तर ही नहीं है? पाप पापी का पीछा कर सके, क्या पाप कोई ऐसी चीज़ नहीं? क्या पुण्य में इतनी अपुण्यता है कि वह अपने कर्त्ता को सिरे से भुलाकर सन्तुष्ट हो जाए?

फिर विचारशील व्यक्ति के मन में यह प्रश्न भी पैदा होता है कि यह संसार क्या सदैव चलता रहेगा? वह देखता है कि यहाँ एक तरफ़ मनुष्य मरता है तो दूसरी तरफ़ मानवों के पैदा होने का क्रम चल रहा है। एक जाता है तो दूसरा उसका स्थान ग्रहण करता है। यही हाल पशु-पक्षी और वृक्ष आदि का भी है। उनकी भी नस्ल चल रही है जिसके कारण संसार निर्जन और उजाड़ लोक नहीं बन पाता और लोगों को इसका आभास नहीं हो पाता कि उनसे कुछ छीना गया है। यद्यपि संसार-का-संसार इस जगत् से प्रस्थान कर चुका है। उसे दुनिया आबाद-की-आबाद ही दिखाई देती है। यहाँ के क्रियाकलाप और चहल-पहल में कोई अन्तर नहीं आता। लेकिन क्या यह क्रम यूँ ही जारी रहेगा? क्या लोग इसी प्रकार मरते-जीते रहेंगे? क्या यह क्रम कहीं पहुँचकर समाप्त न होगा? क्या वायु, जल, प्रकाश, ऊर्जा आदि भौतिक शक्तियाँ कभी क्षीण या समाप्त न हो

सकेंगी? क्या ब्रह्माण्ड की व्यवस्था ऐसी ही बनी रहेगी या इसकी भी कोई निश्चित आयु या अवधि है? यदि इसकी कोई निश्चित आयु है जिसे पूरा करके वर्तमान लोक और इसकी व्यवस्था का अन्त हो जाएगा, तो क्या इसके पश्चात् केवल सन्नाटा रहेगा? क्या जगत् की क्रियाशील ऊर्जा शून्य में विलीन होकर रह जाएगी और किसी नए जीवन या नए संसार का शुभारम्भ न होगा? क्या यह मनोरम खेल सदैव के लिए समाप्त हो जाएगा और फिर कोई भी न होगा जिसे यह मालूम हो कि कभी कहीं कोई सूर्य उगा था या कभी कोई धरा उभरी थी जो अपने साथ जीवन की कितनी ही मनोरम कहानियाँ--राग-विराग और रुदन और हास्य लिए हुए--सदैव के लिए विलुप्त हो गईं?

या यह कि इस संसार के अन्त होने के पश्चात् कोई अन्य समुन्नत या निम्नकोटि का संसार उभरेगा? यदि उभरेगा तो क्या वर्तमान लोक के प्राणी उसमें प्रवेश पा सकेंगे, या वह दूसरे ही लोगों का आवास होगा? यदि इस लोक के लोगों को उस लोक में प्रवेश मिलता है तो क्या उनका वह जीवन उनके वर्तमान जीवन का किसी पहलू से ऋणी होगा? दूसरे शब्दों में उस जीवन के सुन्दर-असुन्दर होने में हमारे अच्छे-बुरे विचार, भाव, कर्म आदि का भी हाथ होगा या नहीं?

ये और इसी प्रकार के कितने ही महत्त्वपूर्ण प्रश्न हैं जो मानव-मन में पैदा होते हैं, फिर वे या तो यूँ ही भटककर रह जाते हैं या उनका समाधान होता है या फिर मनुष्य उनका सन्तोषजनक उत्तर न पाकर निराश हो जाता है। उसकी मनोवृत्ति वह हो जाती है जो किसी निराशाग्रस्त व्यक्ति की होनी चाहिए। निराशाजनित मनोवृत्ति के कारण संसार में जो कुछ और जैसा कुछ है मनुष्य उससे समझौता कर लेता है और इसी वर्तमान जीवन और जगत् को प्रथम और अन्तिम सब कुछ समझ बैठता है और इसी के अनुसार उसका जीवन अपना आकार-प्रकार ग्रहण करता है। वह यहाँ के सुख और दुख को अन्तिम सुख-दुःख जानता है। यहीं की नेकनामी और यश को यश समझता है

और यहीं के अपयश को अपयश। उसकी दृष्टि में यहाँ के यश-अपयश के अतिरिक्त कहीं कोई और यश-अपयश का ठौर नहीं होता।

भविष्य की ओर से निराश होने के पश्चात् भी मनुष्य की समस्या का अन्त नहीं हो जाता। यह मान लेने या समझ लेने के पश्चात् कि आगे कुछ नहीं है, यह प्रश्न शेष ही रहता है और अपने उत्तर की माँग करता रहता है कि सद्भावना और पुण्य क्या काल्पनिक वस्तु समझ ली जाएँ? यहाँ धन-सम्पत्ति के मूल्यवान होने में किसी को कोई सन्देह नहीं होता, किन्तु प्रेम, सद्भावना, सहानुभूति, दया, सत्कर्म आदि शून्य में विलुप्त होनेवाली वस्तुएँ प्रतीत होती हैं। उस लोक का मामला क्या भिन्न होगा? यह भिन्नता वर्तमान लोक का विरोधात्मक रूप न होकर क्या विकासात्मक होगी? अब हम उपरोक्त विषय को लेकर कुछ विस्तार में जाना चाहेंगे ताकि जो सत्य है वह ग्राह्य हो सके और असत्य का असत्य होना स्पष्ट हो जाए। इस सम्बन्ध में सबसे पहले हमें यह देखना है कि जीवन का स्रोत कहाँ है? यह संसार और इसमें पाए जानेवाले प्राणियों और वनस्पतियों को नाना प्रकार से सुसज्जित करनेवाली शक्ति और बुद्धि (Mind) कौन-सी है? सारांश यह कि मनुष्य के लिए यह प्रश्न कुछ कम गम्भीर नहीं है कि यदि वर्तमान जीवन के अतिरिक्त उसका कोई भविष्य न भी हो तो भी आज वह कहाँ खड़ा हो? उसका कोई शाश्वत और चिरस्थायी भविष्य न भी हो, जिसके कारण उसकी व्याख्या करने के भार से वह मुक्त हो, तब भी वर्तमान जो एक वास्तविकता है उससे वह कैसे पीछा छुड़ा सकता है? वर्तमान की व्याख्या तो उसे करनी ही पड़ेगी। इसकी व्याख्या के बिना वह अपने को सन्तुष्ट कैसे कर सकता है। यही कारण है कि जब डार्विन ने विकासवाद (Evolution) का सिद्धान्त प्रस्तुत किया तो उसे बड़ा महत्त्व प्राप्त हुआ। कारण यह है कि उसके सिद्धान्त की हैसियत जगत् और जीवन की व्याख्या की थी जिसमें जीवन की पहेली को हल करने का दावा किया गया था। इसलिए चेतन अथवा अचेतन रूप से डार्विन के

कार्य से लोगों का भावात्मक सम्बन्ध पाया जाता था। यद्यपि डार्विन के सिद्धान्त में त्रुटियाँ मौजूद थीं, लेकिन प्रारम्भ में उनकी ओर बहुत कम ध्यान दिया गया, इसलिए कि यह मानव का स्वभाव है कि वह प्राप्त उस धातु के टुकड़े को जिसे उसने सोना समझकर उठाया हो, नहीं चाहेगा कि वह पीतल ठहरे। यही कारण है कि डार्विन के सिद्धान्त या उसकी परिकल्पना (Theory) की पुष्टि के लिए बड़ा ज़ोर लगाया गया और कितने ही वैज्ञानिकों ने इसके लिए अपने बहुमूल्य समय और शक्ति की आहुति दी और आज भी इसके लिए बहुत-से यत्नों और अनुसन्धानों का क्रम चल रहा है।

परलोक की कल्पना

इस्लाम एक प्रकार से उन मौलिक प्रश्नों का सुस्पष्ट उत्तर है जो जगत् और जीवन के सम्बन्ध में पैदा होते हैं, जिनकी ओर हम ऊपर संकेत कर चुके हैं। जीवन सम्बन्धी मौलिक प्रश्नों का इस्लाम अत्यन्त आशाजनक उत्तर बनकर हमारे समक्ष आता है। अतः वह हमारी उपेक्षा का नहीं, अपितु हमारे ध्यान और चिन्तन और अनुभूति का विषय बन जाता है। इस्लामी शिक्षा के अनुसार यह संसार एक चेतन सत्ता की रचना है। यह रचना यूँ ही नहीं है, बल्कि इसके पीछे एक महान् उद्देश्य काम कर रहा है। इसका एक निश्चित लक्ष्य है, जिसकी पूर्ति के लिए जगत् सचेष्ट एवं कार्यरत है। जगत् तीव्र गति से अपने लक्ष्य की ओर बढ़ रहा है। कोई नहीं जो उसे उस अवस्था को प्राप्त होने से रोक सके जिसे प्राप्त करने के लिए वह गतिमान है। जगत् की प्रकृति और स्वभाव और उसमें निहित मूल प्रयोजन को बदल देना मानव के अधिकार-क्षेत्र से बाहर की चीज़ है।

इस्लाम बताता है कि रचना होने के कारण जगत् का आरम्भ भी है और उद्देश्ययुक्त होने के कारण इस जगत् में एक महान् परिवर्तन भी होनेवाला है। उस परिवर्तन को हम चाहे चरम विकास का नाम दें या

उसे निर्माणात्मक सृजन की उपाधि से विभूषित करें, किन्तु जिस प्रकार प्रत्येक महान निर्माण-कार्य से पहले विध्वंस का होना आवश्यक होता है, उसी प्रकार उस विकसित और पूर्णताप्राप्त जगत् के निर्मित होने से पूर्व वर्तमान जगत् का पतन और विनाश अनिवार्य है। एक प्रलयकारी घटना घटकर रहेगी जिसके फलस्वरूप वर्तमान विश्व की व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो जाएगी। उसके पश्चात् नव-सृजन का समय आएगा, जबकि एक ऐसा संसार हमारे सामने होगा जो वर्तमान संसार से कई पहलुओं से भिन्न होगा। वर्तमान लोक में जो अभाव और न्यूनताएँ पाई जाती हैं, वे उसमें शेष नहीं रहेंगी। वह विकास और सृजनता की चरम एवं परम स्थिति होगी जिसे देखकर प्रत्येक व्यक्ति यह समझ लेगा कि यह वह लोक है जो यद्यपि हमारी निगाहों से ओझल था, किन्तु विगत जगत् इसी की ओर बढ़ रहा था और उसका प्रत्येक संकेत इसी ओर था। इस तक पहुँचना और पहुँचाना ही उसका मुख्य ध्येय था।

जिस प्रकार से समुद्र को देख लेने के पश्चात् उस जल और आर्द्रता का रहस्य खुल जाता है जो नदी, तालाबों, पेड़-पौधों और मानव-शरीर में विद्यमान या प्रवाहित होती है, उसी प्रकार उस लोक के सामने आने के बाद एक ओर हमें वर्तमान जगत् के उद्‌गम और आधार का पता लग जाएगा, दूसरी ओर हमें जगत् के मूल उद्देश्य एवं अभिप्राय का तात्विक-ज्ञान भी क्रियात्मक रूप से हो जाएगा। मन के सारे संशय दूर हो जाएँगे। हमारी आज की असमर्थता समर्थता में बदल जाएगी। जो चीज़ें आज निगाहों से ओझल हैं, वे हमारे लिए प्रत्यक्ष होंगी। जो होना चाहिए वहाँ वही होगा और जो अनिष्ट है उसका आविर्भाव वहाँ सम्भव न हो सकेगा।

उदाहरणार्थ आज भौतिक वस्तुएँ ही साधारणतया आकर्षक प्रतीत होती हैं। सूक्ष्म और अदैहिक वस्तुओं की अवहेलना कर दी जाती

है। यहाँ शरीर का तो मूल्य समझ में आ जाता है, किन्तु आत्मा और प्रेम अदृश्य ही रहते हैं।

सतर्कता की आवश्यकता

ऊपर जो कुछ कहा गया उससे यह स्पष्ट होता है कि क़ुरआन ने संसार और मानव-जीवन के परिणाम के प्रति जो सूचना दी है, वह क्या है? उपरोक्त विवेचन से यह बात खुलकर हमारे सामने आ जाती है कि इस संसार और वर्तमान जीवन का क्या होनेवाला है। क़ुरआन ने स्पष्ट शब्दों में बता दिया है कि जगत् और मानव शून्य और सर्वथा लोप (Nothingness) की ओर नहीं, बल्कि एक विकसित और परिपूर्ण लोक और जीवन की ओर अग्रसर हैं।

मानव की स्थिति अत्यन्त नाज़ुक और गंभीर है। इसलिए कि उसका पारलौकिक जीवन वैसा ही होगा जैसा उसे बनाने की उसने कोशिश की होगी। वर्तमान जीवन अपनी वास्तविकता की दृष्टि से एक कोशिश और प्रयास है जिसके अनुसार मानव का भावी और सार्वकालिक जीवन संगठित एवं सृजित होगा। लौकिक जीवन में मिलनेवाले सुख या लाभ और सुविधाएँ वास्तव में गौण और नगण्य हैं। अतः सच्चाई को जानने में किसी प्रकार का विलम्ब न होने देना चाहिए। इस सम्बन्ध में हमारी साधारण असावधानी भी साधारण नहीं है।

बुद्धिमान वही है जो आज ही सजग और सतर्क हो जाए और जीवन की सम्भावनाओं पर विचार करे और उस चेतावनी पर ध्यान दे जो चेतावनी उसे ईश्वर की ओर से मिलती रही है और ईश्वर-प्रेषित अन्तिम ग्रन्थ क़ुरआन भी जिसकी चेतावनी मानव को दे रहा है।

यहाँ यह स्पष्ट रहे कि क़ुरआन मानव के लिए चेतावनी भी है और मंगल-सूचना भी। वह उन व्यक्तियों के लिए ख़ुशख़बरी और मंगल-सूचना बनकर उतरा है जो उसकी बातों पर ध्यान देते और जीवन को उसके वास्तविक रूप में स्वीकार करके आनेवाले जीवन की तैयारी

में जुट जाते और अपना दायित्व निभाते हैं। किन्तु क़ुरआन इसी के साथ उन लोगों के लिए डरावा और चेतावनी भी है जो उसकी आवाज़ पर ध्यान न देकर जीवन की अवहेलना करते और अपने दायित्व की ओर से मुख मोड़े रहते हैं।

परलोक के सम्बन्ध में क़ुरआन ने जो धारणा प्रस्तुत की है वह मात्र कोई दार्शनिक विषय नहीं है, बल्कि उसका हमारे वर्तमान और भावी जीवन से गहरा सम्बन्ध है। 'आख़िरत' या परलोक को मानने के बाद मनुष्य के जीवन का रुख़ और उसकी आत्मा उस जीवन-दिशा और आत्मा से नितान्त भिन्न हो जाती है जो परलोक को अस्वीकार करने के बाद होती है। इस सिलसिले में हम बीच की कोई राह भी नहीं अपना सकते कि परलोक का न तो इनकार करें और न उसे स्वीकार करें, बल्कि परलोक के विषय में मौन रहें। इसलिए कि परलोक के विषय में यदि अपनी कोई धारणा न भी बनाएँ, फिर भी परिणाम की दृष्टि से हमारा जीवन और जीवन की चेष्टाएँ स्वभावतः वैसी ही होंगी जैसी परलोक को अस्वीकार करने की दशा में हो सकती हैं। हम परलोक या 'आख़िरत' के प्रति जब अपनी कोई धारणा नहीं बनाएँगे तो स्पष्ट है कि हम परलोक की सफलता के लिए प्रयत्नशील भी न हो सकेंगे। अब यदि पारलौकिक जीवन सत्य है तो हम परलोक के बुरे परिणामों से अपने को कैसे बचा सकेंगे। अतः हम अनिवार्यतः इस विषय पर विचार करने को बाध्य हैं।

सोचने की बात

परलोक की धारणा, जैसा कि उपरोक्त विवेचन से विदित होता है, अत्यन्त तर्कसंगत धारणा है। इस धारणा में ऐसी कोई बात नहीं है जो बुद्धि और तर्क के विपरीत हो। किसी लोक की धारणा या कल्पना कोई ऐसी चीज़ भी नहीं जिससे मनुष्य बिल्कुल ही अपरिचित हो। वर्तमान लोक स्वयं एक ऐसा-लोक है जिसमें मानव आज साँस ले रहा

है। यह आश्चर्य की बात होगी कि मानव लोक में रहकर लोक का इनकार करे यानी दुनिया में रहकर दुनिया को न माने।

सोचने की बात है कि यदि इस दुनिया के अतिरिक्त कोई दूसरी दुनिया सम्भव नहीं है तो यह दुनिया ही कैसे सम्भव हो सकी? क्या बच्चे को हम नहीं देखते कि वह सदैव बच्चा ही नहीं रहता, वह युवक भी होता है। फिर यदि यह संसार किसी निश्चित समय पर अन्य कोई विकसित रूप धारण करनेवाला हो तो इसमें आश्चर्य ही क्या। जब दो निहारिकाएँ अपने करोड़ों नक्षत्रों के साथ परस्पर एक-दूसरे को पार कर सकती हैं और दो तारे भी आपस में नहीं टकराते, तो यह क्यों सम्भव नहीं हो सकता कि एक समय ऐसा आए जब गतिशील जगत् के कार्य-प्रक्रम का विशिष्ट चरण पूरा हो और जगत् का दूसरा पहलू हमारे सामने आ जाए, ठीक उसी प्रकार जैसे रात बीत जाने के पश्चात् दिन की रौशनी चारों ओर फैल जाती है और ऐसा लगता है जैसे संसार ही बदल गया। हालाँकि हम भी वही होते हैं और दुनिया भी वही होती है, किन्तु मात्र प्रकाश की अभिवृद्धि हो जाती है। दिन के प्रकाश में वे सभी चीज़ें दिखने लगती हैं जो रात के अँधेरे में छिपी हुई थीं। रात के अंधेरे में पर्वत तक छिप जाते हैं और दिन में हमें तिनका तक दिखाई दे जाता है।

जब सूर्य के प्रकाश में धरती के आ जाने से संसार में एक महान् परिवर्तन होता है तो किसी ऐसे आलोक की कल्पना क्यों नहीं की जा सकती जिसके कारण संसार में सदैव के लिए अज्ञान, दुख, अन्याय, अपूर्णता, आदि न्यूनताओं का अंधकार दूर हो जाए। लोग ऐसे प्रकाश में आ जाएँ जहाँ हमसे कुछ भी ओझल न रहे और लोग सच्चाई और वास्तविकता को स्पष्टतः देख लें। क़ुरआन में है :

> "और जगमगा उठेगी धरती (क़ियामत के दिन) अपने 'रब' के प्रकाश (नूर) से, और (लाकर) रख दी जाएगी किताब (लेखा-जोखा) और नबियों और गवाहों को लाया जाएगा और

लोगों के बीच हक़ के साथ ठीक-ठीक फ़ैसला कर दिया जाएगा, और उनपर कोई ज़ुल्म न होगा।" (क़ुरआन, 39/69)

दुनिया में विभिन्न मत-मतान्तर पाए जाते हैं। लोग तरह-तरह के भले-बुरे कर्मों में लगे हुए हैं। इसका वास्तविक कारण यही है कि जगत् और जीवन की वास्तविकता या रहस्य इस प्रकार प्रकट नहीं है कि आदमी उसके विरुद्ध सोच ही न सके और न उसके विरुद्ध कोई काम कर सके।

जगत् और जीवन के विषय में सामान्यतः मानव बहुत थोड़ा जानता है। कितने ही ऐसे रहस्य हैं जो अभी प्रत्यक्ष रूप से प्रकाश में नहीं आ सके हैं। अपनी विचार-शक्ति से मानव को यह स्वीकार करना पड़ा है कि उसे जितना ज्ञात है उससे कहीं अधिक अभी उसके लिए अज्ञात ही है। क़ुरआन मानव की अल्पज्ञता को स्पष्ट करते हुए कहता है :

"और तुम्हें बस थोड़ा ही ज्ञान दिया गया है।"

(क़ुरआन, 17/85)

मनुष्य के ज्ञान का हाल यह है कि ठोस पदार्थ का भी केवल तीन प्रतिशत अंश ही वह देख पाता है। वास्तविकता उतनी ही नहीं है जितना हम देख पाते हैं। वस्तुओं की व्याख्या और विश्लेषण (Interpretation & Analysis) संभव नहीं, जब तक हम उनमें कुछ और चीज़ें न जोड़ें जो हमारे लिए अदृश्य हैं।

तर्कसंगत धारणा

किसी भी धारणा को ग्रहण करने का उचित मार्ग या विशुद्ध पद्धति क्या हो सकती है?

हम जानते हैं कि हमारे पास केवल देखने, सुनने, स्पर्श करने आदि के लिए ज्ञानेन्द्रियाँ ही नहीं हैं, बल्कि हमें सोच-विचार करने की अपार शक्ति भी मिली है। यही कारण है कि मानव सैदव से भौतिक एवं आभासित जगत् की परिधि का बन्दी बनकर रहने से इनकार करता रहा

है। वह स्वभावतः यह चाहता है कि अपनी चिन्तन-शक्ति को काम में लाए और उन अन्तर्निहित रहस्यों को मालूम करे जिनको हमारी ज्ञानेन्द्रियाँ छू नहीं पातीं। चिन्तन का एक तरीक़ा तो यह हो सकता है कि हम बाह्य जगत् की ओर से आँखें बन्द करके केवल कल्पना लोक में विचरण करें और ऐसी धारणा बनाएँ जिनका आधार अटकल और अनुमान के सिवा और कुछ न हो। यह विचार-पद्धति सर्वथा भ्रामक और भटकानेवाली है। इसके द्वारा हम जिन धारणाओं का निर्धारण करेंगे उनपर कदापि भरोसा नहीं किया जा सकता। यह तो केवल अंधेरे में तीर चलाना है जिसमें ज़रूरी नहीं कि तीर निशाने पर ही पड़े।

इसके विपरीत एक दूसरी विचार-पद्धति भी है, और वह यह है कि हम खुली आँखों से जगत् में और स्वयं अपने-आप में ऐसे तत्त्वों और चिह्नों को खोजें जो वास्तविकता को समझने में हमारे सहायक हो सकते हों। यदि ऐसे चिह्न हमें प्राप्त हों तो वे हमारे लिए ऐसे चिराग़ सिद्ध हो सकते हैं, जिनको लेकर हम अपनी चिन्तन-शक्ति और बुद्धि की सहायता से उन वास्तविकताओं तक पहुँच सकते हैं, जिन्हें मानव जानना चाहता है। बरट्रेण्ड रसेल ने भी इस विचार-पद्धति की अपनी पुस्तक 'ह्यूमन नॉलेज' (Human Knowledge) में पुष्टि की है। इस पद्धति को अवैज्ञानिक समझना सही नहीं है। किसी तथ्य का ऐन्द्रिक साक्षात्कार सम्भव नहीं होता। यही कारण है कि विज्ञान-जगत् में भी जिन सिद्धान्तों को मान्यता प्राप्त है उनका किसी ने ऐन्द्रिक निरीक्षण नहीं किया है। प्रत्येक वैज्ञानिक धारणा या सिद्धान्त एक प्रकार का निष्कर्ष है जिस तक विज्ञानवेत्ता जगत् में घटित होनेवाली घटनाओं और जगत् में पाए जानेवाले विशेष चिह्नों पर सोच-विचार और चिन्तन करके पहुँचे हैं। गुरुत्वाकर्षण (Gravitation) का नियम हो, या कार्य-कारण की शृंखला या सापेक्षता (Relativity) की धारणा हो, इनमें से किसी को भी प्रत्यक्ष ऐन्द्रिक निरीक्षण के द्वारा नहीं स्वीकार किया गया है, बल्कि ये समस्त सिद्धान्त वास्तव में विचार-शक्ति द्वारा ही

निर्धारित किए गए हैं। जिस सामग्री के आधार पर मानव की विचार शक्ति ने इन सिद्धान्तों की खोज की है, वह किसी कल्पना-लोक से नहीं जुटाई गई है। बल्कि वह इसी भौतिक जगत् ही का अंग है, वर्तमान जगत् के लिए वह कोई विजातीय (Unfamiliar) तत्त्व नहीं है।

कुरआन विचार और वास्तविकता के प्रमाणीकरण की इसी वैज्ञानिक पद्धति की पुष्टि करता है। क़ुरआन की दृष्टि में भी मानव को इतनी शक्ति तो प्राप्त नहीं है कि वह उन वास्तविकताओं को प्रत्यक्षतः देख सके जो उसकी इन्द्रियों से छिपी हुई हैं, किन्तु यदि वह ब्रह्माण्ड में पाए जानेवाले विशिष्ट चिह्नों और लक्षणों का खुली आँखों से निरीक्षण करे और स्वयं अपने व्यक्तित्व और अपने जन्म के बारे में विचार करे, और इस प्रकार उन विशेष लक्षणों और निशानियों को, जो सत्य के समझने में सहायक प्रतीत हों, एकत्र करके उन्हें सुनियोजित ढंग में रखकर देखे कि इससे क्या निष्कर्ष निकलता है, तो इस प्रकार वह सत्य के अधिक निकट पहुँच सकता है। इस प्रकार उसे सत्य की अनुभूति भी हो सकती है और वह सच्चाई जो साधारणतया प्रतीत नहीं होती उसे वह आभासित रूप में देखने की स्थिति में हो जाएगा। क़ुरआन में है :

> "आकाशों और धरती में कितनी ही निशानियाँ हैं जिनपर से उनका गुज़र होता है और वे उनपर कुछ ध्यान नहीं देते।"
>
> (क़ुरआन, 12/105)
>
> "क्या उन्होंने आकाशों और धरती के राज्य (शासन एवं नियंत्रण) पर और जो कुछ अल्लाह ने पैदा किया है उसपर दृष्टि नहीं डाली?" (क़ुरआन, 7/185)
>
> "हम उन्हें अपनी निशानियाँ दिखाएँगे, बाह्य जगत् में और स्वयं उनकी आत्माओं में, यहाँ तक कि उनपर स्पष्ट हो जाए कि यह सत्य है।" (क़ुरआन, 41/53)

अध्याय-2

समझिए-जगत् की भाषा

परलोक की पुष्टि

क़ुरआन ने जब 'परलोक' (आख़िरत) और पुनर्जीवन की धारणा प्रस्तुत की तो इसका इनकार करनेवाले अपने इनकार की पुष्टि के लिए कोई तर्क और अकाट्य प्रमाण प्रस्तुत न कर सके, सिवाय इसके कि वे आश्चर्य प्रकट करते रहे और ऐसा आश्चर्य जो तर्कसंगत भी न था। किसी चीज़ के आश्चर्यजनक होने का अर्थ यह कदापि नहीं होता कि वह असम्भव भी हो। किन्तु यह मानव की दुर्बलता है कि वह प्रायः आश्चर्य में पड़कर जीवन की गम्भीर सच्चाइयों तक को मानने से इनकार कर देता है। क़ुरआन मानव की इस दुर्बलता को दूर करना चाहता है। वह चाहता है कि मानव सोच-विचार से काम ले और अपनी विचार-शक्ति को सुचारु रूप से काम में लाए और उसपर भरोसा करे।

ईश्वर की यह दयालुता ही है कि वह क़ुरआन के द्वारा मानव को केवल वैज्ञानिक विचार-पद्धति से ही अवगत नहीं कराता, बल्कि उन सच्चाइयों और सृष्टि के उन रहस्यों का भी स्पष्ट शब्दों में उल्लेख करता है जो वह वैज्ञानिक अनुशीलन और सही विचार-पद्धति से प्राप्त कर सकेगा। ऐसा उसने इसलिए किया कि मनुष्य अपनी छोटी-बड़ी कमज़ोरी या कोताही से किसी ऐसे निष्कर्ष पर न पहुँच जाए जो सत्य न हो और इस प्रकार वह सत्य से वंचित रहकर अपना सर्वनाश न कर बैठे। इसके महत्त्व का आभास हमें पूरे तौर पर उस समय होता है जब हम देखते हैं कि ईश्वर के इस उपकार के बाद भी कितने ही लोग सच्चाई से दूर रहकर जीवन-यापन करते हैं।

क़ुरआन ने जब पारलौकिक जीवन की सूचना दी तो लोगों ने उसपर जो आक्षेप किया वह उनके आश्चर्यचकित होने के सिवा कुछ

और न था। आज भी पारलौकिक जीवन को न माननेवाले अपने आश्चर्य के सिवा कोई और चीज़ सामने नहीं ला सके हैं। वे यही कहते हैं कि हम यह कैसे मान लें कि जब मनुष्य मरकर मिट्टी में मिल जाएगा तो उसे पुनः जीवित किया जाएगा। क़ुरआन ने ऐसे विचार व्यक्त करनेवालों के इस प्रकार के आक्षेप को उद्धृत किया है :

> "क्या जब हम मर जाएँगे और मिट्टी हो जाएँगें (तो फिर जीवित होकर पलटेंगे)? यह पलटना तो बहुत दूर की बात है।"
> (क़ुरआन, 50/3)
>
> "कौन इन हड्डियों में जान डालेगा जबकि ये गल गई होंगी।"
> (क़ुरआन, 36/78)
>
> "और उन्होंने कहा : क्या हम जब (मरकर) हड्डियाँ और चूर्ण-विचूर्ण होकर रह जाएँगे, तो क्या हमें नए सिरे से पैदा करके खड़ा किया जाएगा?" (क़ुरआन, 17/98)
>
> "और उन्होंने कहा : जब हम भूमि में रल-मिल जाएँगे तो क्या हम फिर नए सिरे से पैदा किए जाएँगे?" (क़ुरआन, 32/10)

क़ुरआन इस प्रकार से सोचनेवालों की कठिनाइयों को दूर करते हुए कहता है कि यदि तुम्हें किसी नवीन जगत् की संरचना और पुनर्जीवन पर आश्चर्य होता है तो वर्तमान जगत् और वर्तमान जीवन पर तुम्हें आश्चर्य क्यों नहीं होता? फिर आश्चर्य में पड़कर तुम वर्तमान सृष्टि और वर्तमान जीवन का भी क्यों इनकार नहीं कर देते? यदि तुम ऐसा नहीं कर सकते तो फिर जगत् की किसी नवीन संरचना को मानने में तुम्हें क्या कठिनाई पेश आ रही है? उसके मानने में कठिनाई कुछ भी नहीं है। कठिनाई जो कुछ भी है वह तुम्हारे भीतर है। तुम्हारी दृष्टि ही संकुचित है और तुम्हारा हृदय ही छोटा है जो सत्य को स्वीकार करने में बाधक सिद्ध हो रहा है।

दृष्टि के इस संकोच और हृदय की इस संकीर्णता को दूर करो। हृदय की विशालता को खोकर तुम केवल सच्चाई से ही दूर नहीं हो रहे

हो, बल्कि अपनी आत्मा को भी आघात पहुँचा रहे हो। तुम उन कामनाओं और आशाओं का भी गला घोट रहे हो जिनको लेकर तुम पैदा हुए और जो तुम्हारी प्रकृति का अभिन्न अंग हैं। सच कहो, क्या तुम अमरता की चाह नहीं रखते? क्या तुम नहीं चाहते कि जीवन का सुख और आनन्द असीम हो? फिर तुम क्यों उस आवाज़ पर कान नहीं धरते जो तुम्हें निराशा से आशा की ओर और अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाना चाहती है।

जगत् और जीवन के संकेत

क़ुरआन कहता है कि तुम अपनी खुली आँखों से जगत् का अवलोकन करो, फिर तुम्हें वह सब दिखाई देने लगेगा जिसके मानने का आग्रह तुमसे किया जा रहा है :

> "वह ईश्वर ही है जिसने आकाशों को बिना सहारे के ऊँचा किया जैसा कि तुम उन्हें देखते हो, फिर वह सिंहासन पर आसीन हुआ, और उसने सूर्य और चन्द्रमा को कार्यरत किया। हर चीज़ एक नियत समय के लिए चल रही है; वही इस काम का इन्तिज़ाम चला रहा है, वह निशानियाँ खोल-खोलकर बयान करता है, कदाचित तुम अपने रब (पालनहार) से मिलने का विश्वास करो।" (क़ुरआन, 13/2)
>
> "क्या उन्हें यह नहीं सूझा कि जिस ईश्वर ने आकाशों और धरती को पैदा किया है उसे उन जैसों को भी पैदा करने की सामर्थ्य प्राप्त है? उसने तो उनके लिए एक समय निर्धारित कर रखा है।" (क़ुरआन, 17/99)
>
> "(सोचो,) क्या तुम्हारा पैदा करना अधिक कठिन है या आकाश का? उसको उसने (परमेश्वर ने) बनाया।" (क़ुरआन, 79/27)

अर्थात् जो परमेश्वर इस विशाल विश्व का स्रष्टा है, जिसने बड़े-बड़े ग्रहों और उपग्रहों को अपने नियमों में जकड़ रखा है, जिसकी शक्ति एवं सामर्थ्य का यह हाल है कि विश्व के विभिन्न क्षेत्रों को ऐसे

अदृश्य सहारों पर स्थापित कर रखा है कि मानव आश्चर्यचकित होकर रह जाए, उसके प्रति यह भावना कि वह मनुष्य को मरने के पश्चात पुनः जीवित करके खड़ा नहीं कर सकता, यह अल्पज्ञता के अतिरिक्त और कुछ नहीं।

फिर दूर क्यों जाओ, अपनी धरती ही को देखो कि वह किस प्रकार परमेश्वर की शक्ति और सामर्थ्य का परिचय दे रही है :

> "कहो, धरती में चलो-फिरो और देखो कि उसने कैसे पहली बार पैदा किया, फिर परमेश्वर ही दूसरी बार उठाएगा। निस्सन्देह परमेश्वर को हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है।"
>
> (क़ुरआन, 29/20)
>
> "और यह उसकी निशानियों में से है क़ि तुम देखते हो कि धरती दबी पड़ी हुई है, फिर ज्यों ही हमने उसपर पानी बरसाया कि वह फबक उठी। निश्चय ही जिसने इस (भूमि) को जिलाया वही मुर्दों को जीवित करनेवाला है। निस्सन्देह उसे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है।" (क़ुरआन, 41/39)
>
> "देखो, परमेश्वर की दयालुता के चिह्न कि वह कैसे धरती को उसकी मृत्यु के पश्चात् जीवन प्रदान करता है! निश्चय ही वह मुर्दों को जीवन प्रदान करनेवाला है, और उसे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है।" (क़ुरआन, 30/50)

अर्थात् तुम धरती में इस बात को बार-बार देखते हो कि परमेश्वर केवल इसकी ही सामर्थ्य नहीं रखता कि किसी को जीवित पैदा करे, बल्कि साथ ही उसका यह स्वभाव भी तुम्हारे सामने आता है कि वह मुर्दों को पुनः जीवन प्रदान करे। गर्मियों में कितने ही भू-भाग सूख जाते हैं, वहाँ कोई हरियाली शेष नहीं रहती। हर तरफ़ धूल उड़ रही होती है; तभी वर्षा ऋतु आती है और ईश्वर उस भू-भाग को जो मुर्दा पड़ा हुआ था पुनः जीवित कर देता है। जहाँ धूल थी वहाँ हरियाली-ही-हरियाली दिखने लगती है। इसलिए ईश्वर के बारे में यह

समझना कि वह मरे हुए लोगों की सुधि न लेगा कदापि सही नहीं हो सकता। उससे कुछ भी ओझल नहीं और न ही वह लोगों की आवश्यकताओं से अनभिज्ञ है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण हमारी भूमि बार-बार प्रस्तुत करती रहती है :

> "और ईश्वर ही तो है जो हवाओं को भेजता है, फिर वे बादल उठाती हैं; फिर हम उसे एक शुष्क निर्जीव भू-भाग की ओर हाँक ले जाते हैं और उसके द्वारा धरती को उसके मुर्दा हो जाने के पश्चात् जीवित कर देते हैं। इसी प्रकार (मरे हुए लोगों का) जी उठना है।" (क़ुरआन, 35/9)

और यदि सत्य का दर्शन और भी निकट से करना चाहते हो तो स्वयं अपने-आप पर विचार करो कि तुम किस तरह पैदा हुए हो। तुम्हारी संरचना क्या इस बात का पता नहीं देती कि जिस चीज़ का इनकार तुम असम्भव समझ कर कर रहे हो, उसका सम्भव होना मानव की पैदाइश से निरन्तर प्रकट हो रहा है। फिर आख़िर यह कहना कैसे तर्कसंगत हो सकता है कि हमारा मरकर दोबारा जीवित खड़ा होना असम्भव है? क्या उस महान् शक्ति, प्रभु-परमेश्वर में यह सामर्थ्य नहीं कि किसी के मरने के पश्चात् उसे पुनः जीवन प्रदान करे? क़ुरआन में है :

> "क्या मनुष्य पर काल-खण्ड का कोई ऐसा समय भी बीता है, जबकि वह कोई चीज़ न था जिसका नाम लिया जाए?"
>
> (क़ुरआन, 76/1)
>
> "ऐ लोगो! यदि तुम्हें (मृत्यु के पश्चात्) जी उठने में कोई सन्देह है तो (देखो), हमने तुम्हें मिट्टी से पैदा किया।"
>
> (क़ुरआन, 22/5)
>
> "कहता है : कौन इन हड्डियों में जान डालेगा जबकि वे जीर्ण-शीर्ण हो चुकी होंगी? कह दो : इनमें वही जान डालेगा

जिसने इन्हें पहली बार पैदा किया, वह तो प्रत्येक संसृष्टि को भली-भाँति जानता है।" (क़ुरआन, 36/78-79)

"तब वे कहेंगे : कौन हमें (जीवन की ओर) पलटाकर लाएगा? कह दो : वही जिसने तुम्हें पहली बार पैदा किया।" (क़ुरआन, 17/51)

"वही है जो सृष्टि का आरम्भ करता है, फिर वही उसकी पुनरावृत्ति करेगा। और यह उसके लिए अधिक सरल है।" (क़ुरआन, 30/27)

सारांश यह है कि तुम जिसका इनकार करते हो वह तो ईश्वर के लिए कोई नया कार्य नहीं है कि तुम्हें उसके कर सकने में कोई सन्देह हो। तुम कुछ न थे, उसने तुम्हें अस्तित्व प्रदान किया है। निर्जीव मिट्टी में उसने प्राण डालकर दिखाया। क्या एक काम जिसे वह कर चुका है, उसकी पुनरावृत्ति नहीं कर सकता। आख़िर तुम्हारे इनकार का कोई भी तो आधार होना चाहिए! जो ईश्वर हरी-भरी भूमि के सूख जाने के पश्चात् उसे दोबारा हरी-भरी कर देता है, और यह दृश्य तुम बार-बार देखते ही रहते हो; फिर यदि वह मनुष्य को मृत्यु के पश्चात् पुनः जीवित करके खड़ा करे तो इसमें आश्चर्य की आख़िर कौन-सी बात है। हरित भूमि को उसके सूख जाने के पश्चात् दोबारा हरियाली मिल सकती और रात आ जाने के पश्चात् पुनः दिन के आने की आशा की जा सकती है, किन्तु जीवन दोबारा नहीं मिल सकता, यह बात वही व्यक्ति कह सकता है जिसने जीवन के मूल्य को अब तक जाना ही न हो। क्या जीवन का मूल्य किसी भूमि से अधिक नहीं? क्या हमारे प्राण, हमारी चेतना दिन के प्रकाश से अधिक मूल्यवान नहीं? फिर क्या तुम यह समझते हो कि जगत् की व्यवस्था जिस विश्व-चेतना के हाथों में है वह भूमि, सूर्य-प्रकाश और आलोक का तो आदर करना जानती हो, किन्तु वह जीवन और प्राण को उपेक्षित ठहराए।

जगत् के संकेतों को समझने के लिए क़ुरआन से एक और उदाहरण द्रष्टव्य है :

> "साक्षी हैं वे हवाएँ जो गर्द-ग़ुबार उड़ाती हैं, फिर उठा लेती हैं बोझ, फिर चलने लगती हैं नर्मी के साथ, फिर अलग-अलग करती हैं मामला। निश्चय ही तुमसे जिस चीज़ का वादा किया जा रहा है, वह सत्य है। और निश्चय ही (कर्मों का) फल मिलकर रहेगा।" (क़ुरआन, 51/1-6)

ईश्वरीय दयालुता और ईश्वरीय प्रकोप मात्र कल्पना नहीं हैं। इनकी झलक वर्तमान जगत् में भी मिलती रहती है। उदाहरणार्थ क़ुरआन की उपर्युक्त आयतों में हवाओं को पेश किया गया है। मानव केवल हवाओं पर ही गंभीर होकर विचार करे तो सत्य को समझने में उसके लिए कोई कठिनाई न होगी। हवाओं से हमारे कितने काम निकलते हैं। वही हवाएँ बादल उड़ाकर लाती और कितने ही तपते हुए भू-भाग को जल से सिंचित करती और उनको हरा-भरा कर जाती हैं। किन्तु यही हवाएँ बहुत-से भू-भाग को शुष्क ही छोड़ देती हैं, बल्कि कितनी ही जगहों पर ये तबाही भी लाती हैं। कितने ही भू-भाग को हम तूफ़ानों और ओलों से तबाह होते देखते हैं। आद, नूह, समूद आदि कितनी ही जातियाँ प्रचण्ड तूफ़ान और जलप्लावन के द्वारा ही विनष्ट हुई हैं। साफ़ प्रतीत होता है कि ये हवाएँ किसी की इच्छा के पालन में लगी हुई हैं। उसकी इच्छा के अनुसार इनके व्यवहार में भिन्नता पाई जाती है। ईश्वर (अल्लाह) के आदेश से ये कहीं हर्ष का विषय बनतीं और कहीं विनाश और तबाही का कारण सिद्ध होती हैं। यह इस तथ्य का खुला प्रमाण है कि ईश्वर दया दर्शाना ही नहीं, दण्ड देना भी जानता है। उससे यह आशा नहीं की जा सकती कि वह भले और बुरे में कोई अन्तर न करे और अच्छे लोगों को अच्छा और बुरों को बुरा बदला न मिले। इसलिए अवश्य ही एक ऐसा दिन आएगा जिस दिन अच्छे लोगों पर ईश्वर की कृपा होगी और वह अपने सुकृत का पूरा-पूरा बदला पाएँगे और बुरे

लोगों को भी उस दिन अपनी करनी का कड़वा फल मिल जाएगा। सांसारिक जीवन में यह जो कितने ही दुष्टाचारी हमें सुख भोगते और कितने ही पुण्यात्मा व्यक्ति दुःख उठाते दिखाई देते हैं, यह चीज़ फल की प्राप्ति के दिन को और भी अवश्यंभावी बना देती है।

क़ुरआन की दृष्टि में तो यदि मानव संवेदनशील और दृष्टिवान् हो तो संसार की प्रत्येक वस्तु और यहाँ का प्रत्येक दृश्य यह संकेत करता दीख पड़ता है कि यह वर्तमान जगत् ही नहीं, कोई परलोक भी है; जहाँ हर एक को अपने किए का भला या बुरा बदला पाना है। उदाहरणार्थ, क़ुरआन की इन आयतों को पढ़िए :

> "कुछ नहीं, साक्षी है चन्द्रमा और रात जब वह पीठ फेरे, और प्रातः बेला जब वह प्रकाशमान हो जाए, निश्चय ही वह बड़ी चीज़ों में एक है, चेतावनी है मनुष्य के लिए।" (क़ुरआन, 74/32-36)

मनुष्य सदैव अंधकार में नहीं रहना चाहता। वह स्वभावतः प्रकाश का इच्छुक है। ईश्वर उसके लिए प्रकाश की व्यवस्था करता है। चन्द्रमा रात के अंधकार को दूर करता दिखाई देता है। रातें सदैव अंधकारमय नहीं रहतीं। फिर रात भी स्थाई रूप से स्थिर रहने के लिए नहीं होती। वह अन्ततः ढल जाती है और संसार प्रातः बेला के दर्शन करता है। क्या वह ईश्वर जो अंधकार को हटाकर प्रकाश लाना जानता है, वह यह न जानेगा कि मानव को एक और प्रकाश की भी आवश्यकता है। जीवन की कितनी ही वास्तविकताएँ हैं जो आज मनुष्य की दृष्टि से ओझल हैं। मानव चाहता है कि वे भी प्रकाश में आएँ और जीवन के गूढ़तम् रहस्यों का उद्‌घाटन हो और मानव को यह पता चल जाए कि यथार्थ जीवन में मानव ने जो धारणाएँ बनाई थीं और जो कर्म किए थे वे समय के गर्भ में विलीन होने के लिए कदापि न थे।

सृष्टि की संरचना योजनाधीन

संसार का एक-एक कण अपने में एक अद्‌भुत संसार है। संसार की विभिन्न वस्तुएँ अपना स्वतंत्र अस्तित्व नहीं रखती हैं, बल्कि वे

परस्पर एक-दूसरे से सम्बद्ध हैं। उनका यह सम्बन्ध और सम्पर्क यूँ ही निरर्थक नहीं है, बल्कि इससे जीवन और जगत् के कितने ही हितों और उद्देश्यों की आपूर्ति होती है। यह बिल्कुल ऐसा ही है जैसे हमारे शरीर का एक-एक अंग अलग होते हुए भी वे परस्पर एक-दूसरे से घनिष्ट सम्बद्ध हैं और इस तरह एक सुगठित एवं सुव्यवस्थित शरीर को साकार करते हुए दीख पड़ते हैं। इसके अभाव में मानव धरती पर जीवन व्यतीत करने की स्थिति में नहीं हो सकता था।

जिस प्रकार यह स्पष्ट रूप से लक्षित होता है कि हमारा शरीर एक सुनिश्चित योजना के अन्तर्गत बनता और अपना कार्य करता है, उसी प्रकार बाह्य जगत् में भी एक महान योजना परिलक्षित होती है। यदि योजना के अन्तर्गत संसार की रचना न हुई होती तो इतने बड़े विस्तृत और जटिल लोक का सुचारु रूप से संचालन सम्भव न हो पाता। अतः मानना पड़ता है कि कोई महान् योजनाकार और महान् चेतन-शक्ति अवश्य है। सारा जगत् जिसका एक चमत्कार है। प्रत्येक वस्तु की संरचना एवं सृष्टि में उसकी बुद्धि और बल सम्मिलित है। यद्यपि प्रत्यक्षंतः हमें उसकी बुद्धि और बल दिखाई नहीं देता, किन्तु उसके कार्य से हम उसे पहचानते हैं।

फिर जब हम इस प्रश्न पर विचार करते हैं कि क्या जीवन और जगत् का अर्थ और उद्देश्य बस इतना ही है जितना हमारे समक्ष है और जितने से हम लाभान्वित हो रहे हैं, तो हमारी बुद्धि इसे स्वीकार नहीं करती। हमें मानना पड़ता है कि जगत् और जीवन का कार्य इसी पर समाप्त नहीं हो जाता कि जगत् अपने निहित कोष को खोले रहे और जीवन उससे अपनी आवश्यकताएँ पूरी करे, और फिर यह सब कुछ केवल एक सीमित समय का तमाशा हो। जीवन और जगत् तो अपने में कोई गूढ़ और शाश्वत रहस्य अवश्यतः छिपाए हुए है। यह सारी आँख-मिचौनी तो इसलिए है कि हमारा अन्तर उस रहस्य को पकड़ सके और हम जीवन के वास्तविक लक्ष्य एवं आशय का अनुभव करके अपनी

दिशा निर्धारित कर सकें। जीवन का संचालक एवं प्रेरक तत्त्व वही जीवनाभिप्राय है जिसे समझने में आम तौर पर लोग असमर्थ रह जाते हैं।

क़ुरआन ने जीवन की जिन सम्भावनाओं का उल्लेख किया है, वास्तव में वही वे रहस्य हैं जिनको जीवन के साथ जोड़ने से हमें समस्त मूलभूत प्रश्नों का उत्तर मिल जाता है और हमारे समस्त संशयों का पूरी तरह समाधान हो जाता है। जीवन एक प्रकार की निद्रावस्था में है। इस निद्रा का भी अपना उपयोग एवं उद्देश्य है, किन्तु यह निद्रा देर तक नहीं रहेगी। यह टूटेगी और दुनिया जागेगी, और जगत् की वास्तविक स्थिति सामने आ जाएगी।

एक परम सत्ता है जिसकी शक्ति-सामर्थ्य और मनोहरता की अभिव्यक्ति इस लोक में हो रही है। जीवन की परिपूर्ति उसी स्थिति में सम्भव है जबकि वह इष्ट हमारे जीवन में शामिल हो जाए। इस सिलसिले में रुकावट उसकी ओर से नहीं, बल्कि हमारी ओर से खड़ी की जाती है।

निराशा के लिए कोई स्थान नहीं

यदि इस प्रक्रिया में हम रुकावटें न डालें और उसे अपने जीवन में स्वीकार कर लें तो फिर किसी असफलता और निराशा के लिए जीवन में कोई स्थान नहीं रहता। क्या आपने नहीं देखा कि बसन्त ऋतु आने पर हर ओर फूल खिल जाते हैं, वायु में सुगन्ध बिखर जाती है और चारों ओर नवजीवन खेलता हुआ दिखाई देने लगता है। फिर यह कैसे सम्भव है कि ईश्वर से हमारा सम्पर्क स्थापित हो, वह हमारे जीवन में पदार्पण करे, फिर भी हमारे दुःखों का अन्त न हो और हमारी अभिलाषाएँ कुंठित ही रह जाएँ और उनके पूरे होने की कोई सम्भावना न हो! और हम यही समझते रहें कि हमें सदैव के लिए मरकर धूल में

मिल जाना है, आगे कुछ भी होने को नहीं है। यह एक प्रकार से ईश्वर के साथ अविश्वास है।

आख़िर मनुष्य क्यों नहीं विचार करता? क्या मनुष्य पर्वत, वृक्ष, तारागण आदि से भी उपेक्षित और अर्थहीन है कि मनुष्य तो कुछ दिन धरती में चल-फिरकर सदैव के लिए नष्ट हो जाए और ये तारे चमकते ही रहें, सूर्य और चन्द्रमा अपना प्रकाश फैलाते रहें और पर्वत अडिग खड़े रहें! ऐसा नहीं हो सकता। ईश्वर इससे अनभिज्ञ नहीं हो सकता कि चेतन शरीर अचेतन पर्वत से कहीं अधिक मूल्यवान है। फिर यदि मनुष्य को हम मरते देखते हैं तो इस मृत्यु को समझने की चेष्टा करनी होगी।

मृत्यु का अर्थ अनिवार्यतः केवल यही तो नहीं हो सकता कि मनुष्य का सदैव के लिए अन्त हो जाए और मृत्यु के उस पार कुछ भी न हो। क़ुरआन बताता है कि मृत्यु से किसी व्यक्ति का अन्त नहीं हो जाता, बल्कि मृत्यु इस बात की सूचक है कि उस व्यक्ति का वह निश्चित समय पूरा हो गया जिसमें उसे विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए कार्य करना था। अब आगे उसे उसके कर्म के अनुसार जीवन प्राप्त होगा। वह जीवन कैसा होगा? इसका निर्णय उसके कर्म के अनुसार होगा। उसके साथ कदापि कोई अन्याय न होगा।

सृष्टि निरुद्देश्य नहीं

जगत् और जीवन के प्रति विचार करते हुए यह प्रश्न भी हमारे सामने आता है कि जगत् और जीवन का कोई वास्तविक उद्देश्य भी है या नहीं। ईश्वर की कोई रचना निरुद्देश्य कैसे हो सकती है, यह अलग बात है कि उस उद्देश्य के समझने में हम ग़लती कर जाएँ।

यदि हम ईश्वर ही को न मानें और यह कहें कि यह संसार किसी ईश्वर के बिना अपने-आप बन गया है और भौतिक शक्तियों के द्वारा अपने आप चल भी रहा है, इसका न कोई उद्देश्य और लक्ष्य है और न

इसकी कोई मंज़िल, अन्धी और चेतनाहीन उस प्रकृति के द्वारा यह संचालित है जिसमें न कोई बुद्धि पाई जाती है और न कोई ज्ञान पाया जाता है। इसलिए सृष्टि में किसी मौलिक उद्देश्य की खोज व्यर्थ है। जब सृष्टि का कोई उद्देश्य ही न हो तो फिर किसी उच्च उद्देश्य के आधार पर किसी नए जीवन और नए लोक का स्वप्न देखना अपनी केवल बुद्धिहीनता का परिचय देना है। यहाँ जो कुछ है वह भौतिक शक्तियों का ही चमत्कार है, इसके सिवा कुछ नहीं। वास्तव में न हाथ पकड़ने के लिए है और न पाँव चलने के लिए, न आँखें देखने के लिए बनाई गई हैं और न मस्तिष्क इसलिए बनाया गया है कि उससे मानव सोचने का काम ले। ये चीज़ें बनाई कब गई हैं कि हम यह समझें कि यह अमुक कार्य के लिए है और वह उससे भिन्न अमुक कार्य के लिए। ये चीज़ें बनाई नहीं गई हैं, वरन् बन गई हैं और संयोग से हमारे लिए उपयोगी सिद्ध हो रही हैं। इसी प्रकार सूर्य, चन्द्रमा, वायु, जल आदि का भी कोई वास्तविक उद्देश्य नहीं है। बस ये सब चीज़ें संयोग से ही हमारे और अन्य प्राणियों के लिए हितकर सिद्ध हो रही हैं। जब कोई ईश्वर ही नहीं है तो इसका कोई प्रश्न ही सिरे से नहीं उठता कि यह संसार किसी चेतन-सत्ता के इरादे और निश्चय के अन्तर्गत चल रहा है और उस सत्ता के समक्ष कोई चिरस्थायी योजना है।

किन्तु यह धारणा बुद्धि एवं तर्क के सर्वथा प्रतिकूल है। इस धारणा के समर्थन में जो कुछ कहा जाता है, सारांशतः बस यही कि इस संसार का स्रष्टा और इसका चलानेवाला कोई ईश्वर दिखाई नहीं देता और न इस सृष्टि का कोई लक्ष्य एवं उद्देश्य उन्हें दृष्टिगोचर होता है, इसलिए ईश्वर और संसार के किसी वास्तविक उद्देश्य का मानना मात्र अन्धविश्वास है। लेकिन किसी चीज़ का आँखों से दिखाई न देना यह मानने के लिए कदापि पर्याप्त नहीं है कि सिरे से वह चीज़ है ही नहीं। जब एक कल-कारखाना बिना बनानेवाले के अपने-आप नहीं बन जाता और न अपने-आप सुचारु रूप से चल ही सकता है, तो फिर यह कैसे

सम्भव है कि जगत् का यह बड़ा कारखाना स्वयं ही बिना किसी इरादे और योजना के बन गया और स्वयं ही अत्यन्त व्यवस्थित रूप से चल भी रहा है।

मानव तनिक विचार तो करे, जिस ब्रह्माण्ड के विषय में वह यह धारणा ग्रहण करता है कि अकस्मात् संयोग से उसका आविर्भाव हुआ है, वह ब्रह्माण्ड कैसा है? यह ब्रह्माण्ड अत्यन्त विशालकाय और अत्यन्त व्यवस्थित और सुनियोजित है। इसकी विशालता का हाल यह है कि आकाश में धरती से लाखों गुना बड़े ग्रह गेंद की तरह घूम रहे हैं। हमारे सूर्य से हज़ारों गुना अधिक प्रकाशवाले तारे उसमें चमक रहे हैं।

यह सौर जगत् ब्रह्माण्ड की केवल एक आकाशगंगा (Galaxy) के एक कोने में पड़ी हुई तुच्छ वस्तु की भांति है। केवल इस एक आकाशगंगा में इस सूर्य जैसे लगभग तीन अरब अन्य तारे पाए जाते हैं। और अब तक ऐसी दस लाख आकाशगंगाओं का पता लगाया जा चुका है। उनमें से पृथ्वी से निकटतम आकाशगंगा इतनी दूरी पर स्थित है कि उसकी रौशनी धरती तक दस लाख वर्षों में पहुँचती है जब कि रौशनी की चाल एक लाख छियासी हज़ार मील प्रति सेकण्ड है। आधुनिक रेडियाई खगोल विशेषज्ञों ने एक ऐसी निहारिका-मण्डल का निरीक्षण किया है जिसका प्रकाश अनुमानतः चार अरब वर्ष से भी अधिक समय में धरती तक पहुँचता है। ब्रह्माण्ड की यह विशाल संरचना और उसकी नितान्त बौद्धिक एवं सूक्ष्मतम नियमों पर आधारित व्यवस्था मात्र संयोग पर निर्भर है, यह बात वही कह सकता है जो बुद्धि को एक निरर्थक वस्तु कहने का साहस कर सके।

फिर जीवन की पहेली को लीजिए जिसे हल करने में सारे ही विज्ञानवेत्ता असफल हैं। इस समय तक जीवधारियों की लगभग दस लाख और वनस्पतियों की लगभग दो लाख जातियों का पता लगाया जा चुका है। ये अपने आकार-प्रकार को अत्यन्त प्राचीनकाल से निरन्तर आश्चर्यजनक रीति से सुरिक्षत रखती चली आ रही हैं। इसको ईश्वर की

रचनात्मक योजना के अतिरिक्त और कुछ नहीं कहा जा सकता। आज तक कोई डार्विन इसका कोई अन्य भौतिक कारण सिद्ध करने में सफल नहीं हो सका। इस सम्बन्ध में भौतिकवादियों की ओर से जो भी दावे किए गए वे आगे चलकर असत्य सिद्ध हुए।

निर्जीव पदार्थ से जीवधारी जन्तु पैदा करने के जितने प्रयोग किए गए वे सब असफल रहे। अब तक बड़े प्रयासों के उपरान्त जो भी चीज़ पैदा करने में सफल हो सके हैं, वह एक तत्त्व है, जिसका नाम D.N.A. दिया गया है। यह तत्त्व जीवित कोशिकाओं (Cells) में पाया जाता है, किन्तु जीवन-तत्त्व होते हुए भी यह स्वयं जीवधारी नहीं होता। जीवन अब भी मानव के लिए एक चमत्कार ही है। जिन पदार्थों से मानव की संरचना होती है, वे सब-के-सब निर्जीव पदार्थ हैं और ये सब इसी धरती में पाए जाते हैं। कार्बन, कैलशियम, सोडियम आदि कुछ ऐसे ही पदार्थों से मानव-शरीर की रचना हुई है। मानव में चेतना, बुद्धि, संवेदना, भावना, कल्पना आदि ऐसी आश्चर्यजनक शक्तियाँ पाई जाती हैं जिनमें किसी एक शक्ति के स्रोत की खोज उसके शारीरिक तत्त्वों की संरचना में नहीं की जा सकती।

फिर इसके साथ मानव के भीतर सन्तानोत्पत्ति की ऐसी शक्ति रख दी गई है जिससे करोड़ों मनुष्य समस्त माननीय विशेषताओं और अगणित पैतृक और व्यक्तिगत विशिष्टताओं के साथ पैदा होते रहते हैं और इस महान कार्य में धरती और आकाश की जानी-अनजानी समस्त शक्तियाँ अपना योगदान देती रहती हैं। जीव-लोक में इस अत्यन्त सुव्यवस्थित प्रणाली का संयोगवश होना अधिक बुद्धिसंगत है या यह बात कि कोई जगत् का स्रष्टा और संचालक है और ये सारे चमत्कार उसी की शक्ति एवं सामर्थ्य के परिचायक हैं!

जब यह जगत् और जीवन एक ईश्वर के अस्तित्व के बिना नहीं है, बल्कि इसका अवश्य ही एक ईश्वर है जिसका ज्ञान, सामर्थ्य, शक्ति

आदि का परिचय हमें उसकी सृष्टि से मिलता है, तो एक ऐसे ईश्वर से क्या इस बात की आशा की जा सकती है कि उसने इस संसार को यूँ ही बिना किसी वास्तविक उद्देश्य के बनाया होगा? क्या उसके प्रदान किए इस जीवन का कोई लक्ष्य न होगा और न इस जीवन यात्रा की कोई मंज़िल होगी? ईश्वर के प्रति इससे बड़ी दुराशा एवं दुर्भावना और क्या हो सकती है!

'आख़िरत' या परलोक की धारणा का मतलब यह हुआ कि न इस संसार की रचना निरुद्देश्य है और न मानव-जीवन ही को लक्ष्यहीन समझा जा सकता है, बल्कि इस जगत् और जीवन का एक वास्तविक लक्ष्य है जिसे पाने या न पाने पर हमारी सफलता या असफलता निर्भर करती है। परलोक की धारणा से जगत् और जीवन का जो लक्ष्य हमारे सामने आता है उससे अधिक उत्तम और वास्तविक किसी अन्य लक्ष्य की कल्पना नहीं की जा सकती, क्योंकि केवल यही एक ऐसी धारणा है जिससे न केवल यह कि संसार के प्रति मन में उभरनेवाले प्रश्नों का समुचित उत्तर मिल जाता है, बल्कि जगत् और जीवन को एक ऐसा लक्ष्य भी प्राप्त होता है जिससे हमारी प्राकृतिक एवं आंतरिक मांगों की पूर्ति भी होती है। मनुष्य की समस्त अभिलाषाएँ आख़िरत में पूरी होंगी, चाहे उनका सम्बन्ध ज्ञान से हो या आनन्द से अथवा अन्य किसी चीज़ से।

प्रकृति में उपयोगिता का नियम

संसार की प्रत्येक वस्तु की एक उपयोगिता है और उसका कोई-न-कोई प्रभाव अवश्य दिखाई देता है। यहाँ की किसी भी वस्तु को सर्वथा निकम्मी नहीं कहा जा सकता। क्या यहाँ के फल-फूल व्यर्थ हैं या यहाँ के खनिज पदार्थ अनुपयोगी हैं? स्पष्ट है कि ऐसा नहीं है। यहाँ की कोई भी वस्तु निकम्मी और व्यर्थ नहीं है, बल्कि उनका कोई-न-कोई प्रयोजन एवं उपयोग अवश्य है। फिर इस सम्पूर्ण जगत् को

हम कैसे कह सकते हैं कि इसका कोई विशेष प्रयोजन या उद्देश्य नहीं है? क्या यह संसार निरुद्देश्य और व्यर्थ है? ऐसा कदापि नहीं। जब इस संसार की प्रत्येक वस्तु अपना एक स्थान और महत्त्व रखती है तो निश्चय ही इस जगत् का भी कोई अपना महत्त्व और उद्देश्य होगा।

यदि इस संसार को हम एक वृक्ष के रूप में देखें तो अवश्य ही इसका भी कोई रसमय फल होगा, और वह फल आख़िरत के रूप में सामने आएगा। वृक्ष यदि महान् है तो उसके फल को भी महान् ही होना चाहिए। यदि यह जगत् एक क्रियाकलाप और सक्रियण (Activation) है तो अनिवार्यतः इसका कोई परिणाम और प्रभाव भी सामने आना चाहिए। वह परिणाम या प्रभाव पारलौकिक जीवन और पारलौकिक जगत् ही हो सकता है जिसका इस जगत् से वही सम्बन्ध है जो क्रिया और उसके प्रभाव में होता है।

इस जगत् को प्रभावहीन और परिणाम-शून्य कहने का अर्थ यह होगा कि जगत् एक निरुद्देश्य खेल है। ऐसा मानकर हम जगत् की वास्तविकता को तो बदल न सकेंगे, वरन् अपनी संकुचित भावना के ही परिचायक होंगे। क़ुरआन में स्पष्ट शब्दों में कहा गया है :

> "हमने आकाश और धरती को और जो कुछ उनके बीच है व्यर्थ नहीं पैदा किया। यह तो उन लोगों का गुमान है जिन्होंने इनकार किया, और इनकार करनेवालों के लिए तबाही है (नरक की) आग से।" (क़ुरआन, 38/27)

अर्थात् सृष्टि को किसी वास्तविक उद्देश्य से रहित समझनेवाले अपने इनकार और अकृतज्ञता के कुपरिणाम से न बच सकेंगे। सत्य का विरोध उन्हें ले डूबेगा। उनके इनकार करने से यह तो होगा नहीं कि वह समय न आए जब जगत् का वर्तमान क्रियाकलाप समाप्त होकर एक स्थायी परिणाम के रूप में परिणत होगा। उस समय इनकार करनेवालों का इनकार और उनकी अवज्ञाकारी नीति का प्रभाव और परिणाम भी भयंकर रूप में उनके समक्ष आ जाएगा।

यदि वर्तमान लोक का ईमानदारी के साथ अवलोकन किया जाए तो ईश्वर के साथ किसी बदगुमानी की कोई गुंजाइश नहीं है। संसार की कौन-सी वस्तु ऐसी है जो अपने में अपार ज्ञान और तत्त्वदर्शिता की क्रियाशीलता को छिपाए हुए नहीं है। एक कण से लेकर बड़े-बड़े ग्रह तक जिसको देखिए किसी अपार बुद्धि और बल के परिचायक हैं। उस बुद्धि और शक्ति के विषय में यह समझना कि उसकी यह सृष्टि निरुद्देश्य है; सत्य नहीं। क़ुरआन स्पष्टतः कहता है :

> "और हमने आकाशों और धरती को और जो कुछ उनके बीच है, उन्हें खेल नहीं बनाया। हमने उन्हें सत्य के साथ (सोद्देश्य) पैदा किया, परन्तु उनमें से अधिकतर लोग जानते नहीं। निश्चय ही फ़ैसले का दिन उन सबका नियत समय है।"
>
> (क़ुरआन, 44/38-40)
>
> "क्या उन्होंने अपने-आप में सोच-विचार नहीं किया? अल्लाह ने आकाशों और धरती को और जो कुछ उनके बीच है केवल सत्य के साथ (सोद्देश्य) और एक नियत अवधि के ही लिए पैदा किया है। परन्तु अधिकतर लोग अपने प्रभु के मिलन को नहीं मानते।" (क़ुरआन, 30/8)
>
> "तो क्या तुमने यह समझा था कि हमने तुम्हें व्यर्थ पैदा किया है, और यह कि तुम्हें हमारी ओर पलटना नहीं है? सर्वोच्च है परमेश्वर वास्तविक शासक! उसके सिवा कोई पूज्य नहीं; स्वामी है महिमाशाली सिंहासन का।" (क़ुरआन, 23/115-116)
>
> "क्या मानव समझता है कि उसे यूँ ही छोड़ दिया जाएगा।"
>
> (क़ुरआन, 75/36)

क़ुरआन की इन आयतों से कई बातें मालूम होती हैं। एक बात तो यह मालूम होती है कि इस जगत् की रचना सोद्देश्य हुई है। दूसरी जिस बात को इन आयतों में स्पष्ट किया गया है वह यह है कि वर्तमान व्यवस्था सदैव के लिए नहीं है। इसकी एक निश्चित अवधि है।

किन्तु ऐसा भी नहीं है कि यह कारखाना एक निश्चित समय तक चलकर किसी उद्देश्य-प्राप्ति और वास्तविक परिणाम के बिना सदैव के लिए विलुप्त हो जाए।

ये आयतें बताती हैं कि यदि ऐसा हो तो जगत् की संरचना ही सिरे में निरर्थक सिद्ध होगी। और इसकी हैसियत वास्तविकता की दृष्टि में एक खेल और क्रीड़ा से अधिक कुछ न होगा। ईश्वर के सम्बन्ध में सोचना कि उसने जगत् को निरर्थक बनाया होगा; किसी तरह सही नहीं हो सकता। हमें जगत् में ईश्वर का परिचय एक अपार तत्त्वदर्शी, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, दयावान आदि के रूप में प्राप्त होता है।

उपरोक्त आयतों से इस बात का भी पता चलता है कि यदि इस लोक के बाद किसी अन्य लोक में ईश्वर से मुलाक़ात पर विश्वास न किया जाए तो वर्तमान लोक निरर्थक सिद्ध होगा। जब मानव प्रत्यक्षतः ईश्वर के सामने होगा, वह समय अच्छे लोगों के लिए कितना सुखकर और आनन्दमय होगा, और उन लोगों के लिए वह समय कितना कठिन और भयानक होगा जो बुरे और अत्याचारी हैं? इसका विस्तृत वर्णन क़ुरआन में मिलता है।

यह जगत् यदि अपना आशय स्वयं होता तो इसमें किसी प्रकार की त्रुटि और न्यूनता कदापि दृष्टिगोचर न होती। आशय और अभिप्राय तो अपूर्ण नहीं हो सकता। यदि आशय अपूर्ण होगा तो यह इस बात की सूचना होगी कि रचनाकार पूर्णता से अनभिज्ञ है। ईश्वर के प्रति किसी प्रकार की अनभिज्ञता और अपूर्णता की कल्पना नहीं की जा सकती। ईश्वर के बारे में यह विचार कि वह किसी अपूर्ण स्थिति को ही अन्तिम स्थिति ठहराए, सत्य नहीं हो सकता। ईश्वर के अपार ज्ञान एवं सामर्थ्य का द्योतक संसार की छोटी-बड़ी प्रत्येक वस्तु है। अतः यह मानना पड़ेगा कि वर्तमान लोक का उद्देश्य स्वयं वर्तमान लोक नहीं कोई और लोक है, जिसमें किसी प्रकार की त्रुटि, न्यूनता और दोष न रहेगा। इसलिए

अनिवार्यतः इस जगत् का अंन्त किसी ऐसे लोक के रूप में होना है जो दोष रहित और पूर्ण होगा। वर्तमान लोक सार्वकालिक और शाश्वत नहीं है, यह बात तो वैज्ञानिकों को भी स्वीकार है। क्योंकि इस जगत् में जो भौतिक शक्तियाँ क्रियाशील हैं, वे सब-की-सब सीमित हैं। उदाहरणतः सूर्य प्रतिक्षण अपनी अपार ऊर्जा और उष्णता व्यय कर रहा है। एक समय अवश्य ही ऐसा आ जाएगा जबकि उसका तापमान घटकर रह जाएगा। क़ुरआन का कहना है कि इस लोक का अन्त एक नवीन लोक की संरचना की भूमिका सिद्ध होगा। वर्तमान लोक की कार्यपूर्ति के पश्चात् एक नवीन संसार का उदय होगा, वही वास्तव में वर्तमान जगत् का लक्ष्य है। उसी लोक की ओर प्रत्येक चीज़ अग्रसर है। यदि किसी परिपूर्ण और दोष रहित जगत् के आविर्भाव की सम्भावना न हो तो वर्तमान जगत् मात्र मिथ्या एवं सारहीन होकर रह जाएगा। और हम ईश्वर के बारे में यह सोच भी नहीं सकते कि वह कोई ऐसा कार्य कर सकता है जिसका कोई वास्तविक और स्थायी उद्देश्य न हो। यही कारण है कि जो लोग जगत् की रचना में सोच-विचार करते हैं, उनकी पुकार क़ुरआन के शब्दों में यह होती है :

"हमारे प्रभु! तूने ये सब व्यर्थ नहीं बनाया है। महिमा हो तेरी! अतः तू हमें आग (नरक) की यातना से बचा ले।"

(क़ुरआन, 3/191)

तात्पर्य यह कि यह जगत् व्यर्थ नहीं बनाया गया है। अवश्य ही इसका कोई वास्तविक परिणाम सामने आनेवाला है, जिसमें लोगों के भले-बुरे कर्म अपना वास्तविक और स्थायी प्रभाव दिखाकर रहेंगे। कारण यह कि वर्तमान जगत् की व्यवस्था जो चीज़ हमें देती है वह यही है कि हम यहाँ स्वेच्छापूर्वक अच्छे या बुरे कर्म करें। जब यह जगत् कर्मस्थल और परीक्षालय है तो अवश्य ही हमारे कर्मों और हमारी परीक्षा का भला या बुरा, सुखद या कटु फल भी हमारे सामने आएगा। और यह वर्तमान लोक में नहीं, अपितु सामने आनेवाले लोक ही में

सम्भव हो सकेगा। क्योंकि वर्तमान लोक की व्यवस्था ही ऐसी है कि यहाँ मनुष्य अच्छे या बुरे जैसे कर्म चाहे, कर सकता है। वास्तविक फल की इच्छा इस लोक में की ही नहीं जा सकती। यहाँ बड़े-से-बड़े पापी और दुष्कर्मी अपने बचाव का उपाय करने में सफल हो सकते हैं, और बड़े-से-बड़े धर्मात्मा और सत्कर्मी को यहाँ कष्ट सहने पड़ सकते हैं। वर्तमान जगत् में इसका अवसर बहुत थोड़ा है कि किसी व्यक्ति को उसके अच्छे या बुरे कर्मों का उचित और पूरा-पूरा बदला दिया जा सके।

आवश्यकता-आपूर्ति का व्यापक नियम

क़ुरआन की दृष्टि में परलोक या आख़िरत की धारणा की पुष्टि उन नियमों से भी होती है जिनसे मानव चिर-परिचित है, जिनपर मनुष्य भरोसा भी करता है। यदि मानव को उनपर विश्वास न आए तो उसका संसार में निश्चित रूप से रहना सम्भव नहीं। किन्तु कितनी बड़ी विडम्बना है कि मानव जिन नियमों के सहारे जीता है, उन्हीं की वह अवमानना भी करने लगता है। वह उनकी गहराई और व्यापकता की ओर ध्यान ही नहीं देता। हालाँकि यदि उनकी गहराई में न जाया जाए तो हम उन चीज़ों की कोई व्याख्या ही नहीं कर सकते जिनसे हम परिचित नहीं यद्यपि उनसे हम पूरा लाभ उठाते हैं। यह कितना बड़ा अन्याय है कि प्रकृति के जिन क्रियाशील नियमों ने हमें यह स्थिति प्रदान की कि हम जी सकें और जीवन से पूर्णतः लाभान्वित हो सकें, उन्हीं नियमों पर हम आघात करने से नहीं चूकते। मानो उनसे हमारा कोई वैर है या हम उनको जानते ही नहीं। क़ुरआन में है :

> "क्या ऐसा नहीं है कि हमने धरती को बिछौना बनाया और पहाड़ों को मेखें? और पैदा किया तुम्हें जोड़ा-जोड़ा, और बनाया तुम्हारी नींद को विश्राम और बनाया रात को आवरण, और बनाया दिन को जीवन-वृत्ति के लिए। और तुम्हारे ऊपर सप्त सुदृढ़ आकाश निर्मित किए और एक तप्त और प्रकाशमान

प्रदीप बनाया, और बरस पड़नेवाली घटाओं से हमने मूसलाधार पानी उतारा। ताकि हम उनके द्वारा अनाज और वनस्पति उत्पादित करें, और सघन बाग़ भी।" (क़ुरआन, 78/6-17)

सारांश यह कि हमारी कौन-सी आवश्यकता है जो पूरी नहीं की जा रही है? जीवन व्यतीत करने के लिए जिन चीज़ों की भी आवश्यकता पड़ सकती थी, क्या उन चीज़ों को हम पा नहीं रहे हैं?

ये धरती, ये आकाश, सूर्य, चन्द्र, यह वर्षा, ये अनाज और फूल-फल क्या हमारी आवश्यकता के परिचायक और उनकी परिपूर्ति नहीं हैं। फिर इस व्यवस्था से हमें यह विश्वास क्यों नहीं होता कि जगत् में जो व्यापक नियम क्रियान्वित है वह आवश्यकताओं की आपूर्ति का नियम है।

यह नियम जिस व्यापक और सुदृढ़ रूप से संसार में दृष्टिगोचर होता है उससे यह अनुमान ही नहीं विश्वास भी होता है कि यह नियम आकस्मिक नहीं, बल्कि योजनाबद्ध है। इस नियम में बड़ी ही सजीवता और सजगता पाई जाती है। इस नियम की सजीवता एवं सजगता का हाल यह है कि शिशु की रक्षा और पालन-पोषण के लिए माता का अंक और गोद ही नहीं वात्सल्य और ममत्व भावना भी संचित की गई है।

अब यह कौन कह सकता है कि यह संसार चेतना का नहीं, जड़ पदार्थ का खेल है? किसी चेतन सत्ता ही से यह आशा की जा सकती है कि वह अबोध शिशु के लिए दयाभाव और वात्सल्य जुटाए और उसके लालन-पालन की समुचित व्यवस्था करे। इसलिए यह मानना पड़ता है कि जगत् में आवश्यकतापूर्ति का जो व्यापक नियम क्रियाशील है उसके पीछे किसी चेतन-सत्ता का हाथ काम कर रहा है। चेतन-सत्ता का इस जगत् और इसमें क्रियाशील नियम के माध्यम से जो परिचय मिलता है उससे किसी अशुभ की आशा कदापि नहीं की जा सकती।

वात्सल्य, प्रेम, दया एवं करुणारूपी चेतना की अपेक्षा किसी चेतना ही से की जा सकती है। यहाँ माँग एवं आवश्यकता आपूर्ति का जो

नियम काम कर रहा है वह न तो आकस्मिक है और न ही निर्मूल। कारण यह है कि इसमें आकस्मिकता और निर्मूलता के चिह्न कदापि दिखाई नहीं देते। अतः इस व्यापक नियम पर भरोसा किया जा सकता है और इसकी संभावनाओं पर विचार किया जा सकता है।

यह नियम अपने भीतर परलोक की सम्भावना भी छिपाए हुए है। हमारी कुछ आवश्यकताएँ ऐसी भी हैं जिनके पूरा होने का समय अभी नहीं आया है। उन आवश्यकताओं का सम्बन्ध आज से नहीं भविष्य से है। उन्हें भविष्य में पूरा होना चाहिए। यदि वे भविष्य में पूरी हों तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं। माँग-पूर्ति का नियम इतना सशक्त है कि भविष्य में हमारी भविष्य की आवश्यकताएँ अवश्य ही पूरी होंगी, इसमें सन्देह का कोई कारण नहीं।

शिशु को माँ के पेट में जो कान-आँख और हाथ-पैर मिलते हैं, इन अवयवों की माँग होती है कि भविष्य में शिशु को इन अवयवों के प्रयोग का अवसर मिले। और यह अवसर शिशु को उस समय मिल जाता है जब वह धरती पर अपने क़दम रखता है। धरती में आने के पश्चात् उसे देखने-सुनने की चीज़ें भी मिलती हैं और चलने-फिरने और काम करने का मौक़ा भी। इस प्रकार उसके समस्त अवयवों और शारीरिक अंगों की माँगों और आवश्यकताओं की आपूर्ति भी अपने समय पर हो जाती है। ठीक इसी प्रकार हमारी उन माँगों और आवश्यकताओं की पूर्ति भी अपने समय पर होगी जो आज पूरी होती दीख नहीं पड़ती है।

हमारी ऐसी आवश्यकताएँ क्या हैं जिनको भविष्य में अनिवार्यतः पूरा होना चाहिए? वे आवश्यकताएँ वही हैं जिनकी ओर हम ऊपर संकेत कर चुके हैं। मानव की यह आवश्यकता है कि उसकी जीवन-रूपी कहानी का परिणाम उसके चरित्र के अनुकूल सामने आए, ताकि उसका जीवन सार्थक हो सके। मानव-जीवन स्वयं में और

परस्पर एक-दूसरे के सम्पर्क में आकर इतना जटिल हो जाता है कि उसकी जटिलता को पूर्णरूप से समझ पाना भी प्रत्येक व्यक्ति के सामर्थ्य से बाहर की चीज़ प्रतीत होती है। प्रत्येक व्यक्ति अपने में कितने राग-विराग, आशा-निराशा, हास्य-रुदन, चरित्र-कुचरित्र और न्याय-अन्याय छिपाए हुए है कि उनका मूल्य आंकना उस सत्ता ही की सामर्थ्य की बात हो सकती है जो जीवन और चेतना जैसी विचित्र और आश्चर्यजनक वस्तु प्रदान करने में समर्थ हुई है। अतः एक ऐसे समय का आना अवश्यंभावी हो जाता है जो जीवन और मानवता के लिए निर्णायक सिद्ध हो सके।

वर्तमान जगत् में हमें माँग-पूर्ति के नियम के दर्शन करा दिए गए। फिर तो वह फ़ैसले का दिन हमारे लिए कोई अदृश्य और असम्भव कल्पना नहीं रहता, बल्कि एक जानी-बूझी और चिर-परिचित चीज़ बन जाता है। जो व्यक्ति किसी पक्षी को धरती के निकट उड़ते देख रहा हो क्या उस व्यक्ति को यह स्वीकार करने में कोई संकोच हो सकता है कि आवश्यकता पड़ने पर वही पक्षी अपने उन्हीं पंखों से वायुमंडल में ऊँची उड़ान भी भर सकता है। इसी लिए वर्तमान जगत् के वातावरण में क़ुरआन का यह कहना : "निस्सन्देह फ़ैसले का दिन निश्चित समय है" कोई अत्युक्ति नहीं।

यदि इस धारणा के विपरीत कोई सोचता है तो उसे अपनी मनोवृत्ति का विश्लेषण करना चाहिए। वास्तव में यदि वह किसी ऐसे निर्णायक समय के आने को स्वीकार नहीं करता तो इसका कारण यह नहीं है कि ऐसे किसी दिन का आना असम्भव है, बल्कि इसका वास्तविक कारण स्वयं उस व्यक्ति के मन में छिपा हुआ होता है।

वह अपनी संकीर्णता के कारण ईश्वर और उसके कार्यरत माँग-आपूर्ति के नियम को एक कृपण व्यक्ति और उसकी कृपणतापूर्ण नीति के रूप में ही ले पाता है और उसे यह आशा नहीं हो पाती कि

दानशीलता, न्याय और दयालुता का कोई भव्य और अक्षय रूप भी मानवता के सामने आ सकता है।

, ऐसा विचार स्वयं उस व्यक्ति को हीन और अकृतज्ञ सिद्ध करता है। इससे ईश्वर और उसके गुण एवं विषय में कोई अन्तर नहीं आ सकता। कोई यदि अपने आपको किसी गहरे गड्ढ़े में गिराकर आत्मघात कर ले तो इसमें उन उद्यानों और बाग़ों का क्या दोष जहाँ वह सुखपूर्वक जीवन व्यतीत कर सकता था। क़ुरआन कहता है

> "क्या उन्हें यह न सूझा कि जिस परमेश्वर ने आकाशों और धरती को पैदा किया है उसे उन जैसों को भी पैदा करने का सामर्थ्य प्राप्त है! उसने उनके लिए एक समय निर्धारित कर रखा है जिसमें कोई सन्देह नहीं है। फिर भी ज़ालिमों के लिए इनकार के सिवा हर चीज़ अस्वीकार ही रही। कहो : यदि कहीं मेरे प्रभु की दयालुता के ख़ज़ाने तुम्हारे अधिकार में होते तो ख़र्च हो जाने के भय से तुम रोके ही रखते। वास्तव में मानव दिल का बड़ा ही तंग है।" (क़ुरआन, 17/99-100)

ईश्वर के दयालुता-कोष पर किसी का अधिकार नहीं कि कोई ईश्वरीय योजना को विफल कर सके। ईश्वर की योजनाएँ तो पूरी होकर रहेंगी। वह तो अपने दयापात्रों के मध्य अपना दया-कोष लुटाता ही रहेगा और अपने समय पर मानव की प्रत्येक आवश्यकता पूरी होकर रहेगी। जो पुष्पों के सुन्दर पात्रों में पराग, रस, सुगन्ध और सौन्दर्य उण्डेलता है, वह ईश्वर हमारे हृदय-पात्र को रीता ही छोड़ दे, ऐसी कल्पना वही व्यक्ति कर सकता है जो अभी तक वर्तमान जीवन एवं जगत् से परिचित नहीं हो सका है।

प्रकृति में परिवर्तन का नियम

आख़िर मनुष्य पारलौकिक जीवन का इनकार किस आधार पर करता है? इस इनकार का कोई भी उचित कारण नहीं। यह मानव की अल्पज्ञता और सरकशी है कि वह परलोक का इनकार करके जगत् रूपी

काव्य से उसका मधुमय भाव और अर्थ ही छीन लेने की कुचेष्टा करता है। क्या वह परलोक का इनकार इसलिए करता है कि परलोक के साकार होने के लिए एक प्रकार के परिवर्तन को मानना पड़ेगा? क्या वह परिवर्तन के नियम से अनभिज्ञ है? यह नियम तो कोई ऐसा नियम नहीं है जो जगत् और जीवन के लिए अज्ञेय हो। या वह ऐसी चीज़ हो जिसकी कोई कल्पना भी न कर सके। यदि ऐसा होता तो मनुष्य की विवशता को स्वीकार किया जा सकता था। किन्तु परिर्वतन का नियम तो जगत् में हर ओर दिखाई देता है। क्या बीज से अंकुर और अंकुर से विशालकाय वृक्ष का खड़ा होना एक महान परिवर्तन नहीं है? क्या रात के बाद दिन और शीत ऋतु के बाद ग्रीष्म ऋतु का आना परिवर्तन के एक व्यवस्थित नियम का चमत्कार नहीं है? फिर मानव स्वयं अपने बारे में विचार क्यों नहीं करता? क्या महान परिवर्तनों ने ही उसे तुच्छ वीर्य से जीता-जागता और चलता-फिरता मनुष्य बनाकर नहीं खड़ा किया है! फिर यह सम्भव मानने में क्या आपत्ति है कि मानव जिस प्रकार विभन्न परिवर्तनों और दशाओं से गुज़रा है उसी प्रकार उसे एक और परिवर्तन से गुज़रना है ताकि अपूर्णता का कोई चिह्न उसके अस्तित्व में शेष न रहे। किसी प्रकार की अपूर्णता या त्रुटि अपने आप में एक माँग होती है। हर दोष और त्रुटि अपने दूर होने की राह जोहती है। जीवन और जगत् के रचयिता से यह आशा नहीं की जा सकती कि वह किसी अस्तित्व में माँग का रिक्त स्थान रख तो दे, किन्तु उस माँग के पूरा करने की सिरे से कोई व्यवस्था न करे। यदि कोई यह समझता है कि हमारे अस्तित्व में कोई कमी नहीं, तो यह भी उसकी संकुचित दृष्टि ही का नतीजा है। क्या यह हमारे अस्तित्व की अपूर्णता नहीं कि हम दुःख, पीड़ा और क्लेश नहीं चाहते, किन्तु संसार में इनसे बच नहीं पाते? क्या हम नहीं चाहते कि हम सदैव निरोग और स्वस्थ रहें, बुढ़ापा हमारे शरीर पर न आए और मृत्यु हमारी आशाओं को हमसे न छीन सके? क्या हमारी कामनाओं और हमारे अस्तित्व में एकात्मा पाई जाती है? ये

विषम परिस्थितियाँ क्या पुकार-पुकार कर नहीं कह रही हैं कि अभी मानव अपूर्ण है, अभी कुछ त्रुटियाँ हैं, कुछ न्यूनताएँ हैं जो उसके साथ लगी हुई हैं, जिन्हें दूर होना है? जिस परम सत्ता ने उसे तुच्छ वीर्य से जीता-जागता मनुष्य का रूप दिया, वह उनकी वर्तमान दुर्बलताओं को भी दूर कर सकता है। ये दुर्बलताएँ और ये कुछ अभाव तो इसलिए हैं कि मानव सोच-विचार से काम ले कि उसे जीवन में एक ईश्वर और उसकी कृपा की आवश्यकता है और ईश्वर के प्रति उसे अपने कर्तव्यों का आभास हो सके क़ुरआन में इसी तथ्य की ओर ध्यानाकर्षित करते हुए कहा गया है :

> "वही है जिसने तुम्हें मिट्टी से पैदा किया, फिर वीर्य से, फिर रक्त के लोथड़े से, फिर तुम्हें एक शिशु का रूप देकर निकालता है, फिर तुम्हें अपनी प्रौढ़ता (युवावस्था) को प्राप्त होने देता है, फिर मुहलत देता है कि तुम बुढ़ापे को पहुँचो– यद्यपि तुममें से कोई इससे पहले भी उठा लिया जाता है– और यह इसलिए करता है कि तुम एक नियत अवधि तक पहुँच जाओ, और ऐसा इसलिए है कि तुम समझो।"
>
> (क़ुरआन, 40/67)

प्रतिकार का नियम (Law of Retribution)

क़ुरआन का कहना है कि दुनिया में मनोरथपूर्ति का ही नहीं, प्रतिकार का नियम भी काम कर रहा है। किसी जाति का अत्याचार जब हद से आगे बढ़ जाता है तो उस जाति को बुरे दिन देखने पड़ते हैं। वह जाति या तो बिल्कुल ही मिटा दी जाती है या वह अत्यन्त दयनीय और तिरस्कृत स्थिति को पहुँचा दी जाती है। उसका प्रभाव समाप्त हो जाता है। वह पिछड़कर रह जाती है। क़ुरआन में वर्णित इस नियम की पुष्टि इतिहास के पृष्ठों से भी होती है।

संसार में कितनी ही जातियाँ उभरीं जिन्होंने अपनी सभ्यता और पराक्रम से संसार को प्रभावित किया, किन्तु उन्हीं जातियों ने जब

अनैतिकता का मार्ग अपनाया और सांसारिक भोग-विलास ही को सब कुछ समझ लिया तो उनकी सारी शक्ति क्षीण हो गई। फिर या तो वे विनष्ट होकर रहीं या उन्हें दूसरों की अधीनता स्वीकार करनी पड़ी। ऐसी जातियों को अपने किए का फल भोगना पड़ा। क़ुरआन में है :

"और कितनी ही बस्तियाँ हैं जिन्हें हमने विनष्ट कर दिया। उनपर हमारी यातना (अचानक) रात को सोते समय आ पहुँची, या जबकि वे दोपहर को आराम कर रहे थे।"

(क़ुरआन, 7/4)

"और हमने जिस बस्ती को भी विनष्ट किया है उसके लिए निश्चित फ़ैसला था।" (क़ुरआन, 15/4)

अतः प्रत्येक जाति को काम करने और सँभलने की मुहलत अवश्य दी जाती है। यदि कोई जाति नहीं सँभलती और अपनी अन्यायपूर्ण नीति को बदलने पर तैयार नहीं होती तो उसे अपने बुरे परिणाम से दोचार होना निश्चित है, और उसे उसके बुरे परिणाम से कोई नहीं बचा सकता। क़ुरआन में है :

"(ऐ नबी!) यदि उन्होंने तुम्हें झुठलाया है, तो उनसे पहले नूह की जातिवाले और आद और समूद की जातिवाले भी झुठला चुके हैं, और इबराहीम की जातिवाले और लूत की जातिवाले भी; और मदयनवाले भी। और मूसा भी झुठलाया जा चुका है; किन्तु मैंने उन अधर्मियों को ढील दी, फिर उन्हें पकड़ लिया। तो कैसी रही मेरी नागवारी! कितनी ही बस्तियाँ हैं जिन्हें हमने विनष्ट कर दिया इस हालत में कि वे ज़ालिम थीं, तो वे अपनी छतों के बल ढह गईं। और (इसी प्रकार) कितने ही उजाड़ कुएँ और कितनी सुदृढ़ अट्टालिकाएँ भी! क्या ये धरती में चले-फिरे नहीं कि इनके दिल होते जिनसे ये समझते या कान होते जिनसे ये सुनते? बात यह है कि आँखें

अन्धी नहीं हो जातीं, बल्कि वे दिल अन्धे हो जाते हैं जो सीने में हैं।" (क़ुरआन, 22/42-46)

हज़ारों वर्ष के मानव-इतिहास में हम जिस प्रकार से विभिन्न जातियों के उत्थान और पतन को व्यवस्थित रूप से निरन्तर देख रहे हैं और उन जातियों या गरोहों की उन्नति और अवनति में जिस प्रकार हमें कुछ नैतिक कारण दिखाई देते हैं, ये सब इस बात का पता देते हैं कि संसार में केवल कुछ अन्धी-बहरी भौतिक शक्तियाँ ही क्रियाशील नहीं हैं, बल्कि मानव-इतिहास के पीछे एक सुदृढ़ नैतिक प्रतिकार का नियम भी कार्यरत है।

इस नियम के अनुसार जो जाति नैतिक मर्यादाओं का आदर करती है और अपने में नैतिक ह्रास नहीं आने देती, उसे उन्नति और प्रतिष्ठा प्राप्त होती हैं और इसके विपरीत जो जाति नैतिक मर्यादाओं का परित्याग करती है और ज़ुल्म की राह अपनाती है, उसे कुछ समय के लिए ढील और सँभलने के लिए मौक़ा मिलता है। किन्तु जब वह अपनी बुराई से बाज़ नहीं आती तो फिर उसे गिराकर ऐसे फेंक दिया जाता है कि वह संसार के लिए केवल शिक्षा का विषय बनकर रह जाती है।

इस प्रतिकार के नियम (Law of Retribution) पर जब हम गंभीरतापूर्वक विचार करते हैं तो प्रत्यक्षतः यह नियम एक अन्य लोक की अपेक्षा करता है जिसमें व्यक्तियों, जातियों और सामूहिक रूप से सम्पूर्ण मानवजाति के साथ न्याय हो सके। कारण यह है कि किसी ज़ालिम क़ौम के केवल तबाह हो जाने से पूर्ण रूप से न्याय की समस्त माँगें पूरी नहीं हो जातीं। इस तबाही और विनाश से उन अत्याचारी व्यक्तियों को बिल्कुल दण्ड नहीं मिल पाता जो तबाही आने से पूर्व भोग-विलास के साथ स्वच्छंद-सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करके दुनिया से प्रस्थान कर चुके होते हैं। तबाही और अज़ाब की लपेट में तो केवल वे लोग आते हैं जो तबाही के समय मौजूद होते हैं। वे लोग या पीढ़ियाँ

तो साफ़ बच जाती हैं जिन्होंने बुराई का बीज बोया और अत्याचार और ज़ुल्म को बढ़ावा देने में अपना योगदान दिया।

इस तबाही से उन उत्पीड़ित व्यक्तियों के साथ भी न्याय नहीं हो पाता जिनके शव पर ज़ालिमों ने अपने भव्य-भवन का निर्माण किया होता है। इससे उन अत्याचारियों को उसका दण्ड नहीं मिल पाता जो अपने पीछे कितनी ही पीढ़ियों के लिए गुमराही और अनैतिकता की मीरास छोड़ जाते हैं, जिनसे करोड़ों और अरबों लोग प्रभावित होते हैं।

दुनिया में यातना भेजकर ईश्वर अत्याचार को केवल एक सीमा से आगे बढ़ने से रोक तो देता है, किन्तु न्याय और फ़ैसले का यह मूल कार्य शेष ही रहता है कि प्रत्येक ज़ालिम को उसके किए की सज़ा दी जाए और प्रत्येक उत्पीड़ित व्यक्ति को जो हानि पहुँची है उसकी क्षतिपूर्ति की जाए, और उन लोगों को अच्छा बदला और सम्मान प्रदान किया जाए जो बुराई के भंयकर वातावरण में भी सत्य और न्याय पर जमे रहे और स्थिति के सुधारने के लिए प्रयत्नशील रहे और इसके लिए तरह-तरह की यातनाएँ झेलीं। यह सब अनिवार्यतः किसी समय होना है।

'प्रतिकार का नियम' की प्रवृत्ति एवं प्रकृति स्वयं यह विश्वास दिलाती है कि ऐसा होना सम्भव ही नहीं अवश्यंभावी है। यदि ऐसा न हो तो संसार में क्रियान्वित इस व्यापक नियम की हम कोई सन्तोषजनक व्याख्या नहीं कर सकते। इनसाफ़ के बड़े दिन को यदि टाला गया है तो इसका कारण है। इसका अर्थ यह कदापि नहीं कि वह दिन सिरे से आएगा ही नहीं। वह तो अपने निश्चत समय पर आकर रहेगा। किसी के इनकार करने से कोई अन्तर पड़नेवाला नहीं। क़ुरआन में है :

> "बल्कि वह (घड़ी) अचानक उनपर आएगी और उन्हें स्तब्ध कर देगी। फिर न उसे वे फेर सकेंगे और न उन्हें मुहलत ही मिलेगी।" (क़ुरआन, 21/40)

पूर्ण न्याय और प्रतिकार के लिए जिस प्रकार का लोक अपेक्षित है वह अभी परोक्ष में है। वर्तमान लोक में बहुत सारी चीज़ों पर परोक्ष का

आवरण पड़ा हुआ है। न्याय की सारी माँगें पूरी नहीं हो सकतीं। उदाहरणार्थ, न्याय की एक माँग यह भी है कि अपराधी के समक्ष उसके कर्मों का सम्पूर्ण विवरण उसके कुप्रभावों के साथ प्रस्तुत हो और वह अपने को ईश्वर के न्यायालय में खड़ा पाए जहाँ हर प्रकार के गवाह और प्रमाण भी पेश किए जा रहे हों; और वे लोग अपनी आँखों से उसे दण्ड पाते देखें जिनपर उसने अत्याचार किए थे, और पीड़ित व्यक्तियों को उससे जो हानि पहुँची हो, उसकी क्षतिपूर्ति भी की जा सके।

साफ़ ज़ाहिर है कि वर्तमान लोक में ऐसे न्याय और प्रतिदान या प्रतिकार की संभावना नहीं है। वर्तमान लोक तो परीक्षास्थल है, यहाँ परोक्ष को इस प्रकार अनावृत नहीं किया जा सकता कि किसी के लिए उसके इनकार का अवसर ही शेष न रहे। यदि ऐसा हो तो फिर परीक्षा का उद्देश्य पूरा नहीं हो सकता। अतः हमें आनेवाले न्याय के दिन का इनकार नहीं, उसकी प्रतीक्षा करनी चाहिए और उसे दूर या असम्भव कहने की ग़लती में नहीं पड़ना चाहिए।

प्रतिक्रिया का नियम

मनुष्य अपने को जीवन और जगत् की वास्तविकता से अलग नहीं रख सकता। मानव जो कुछ भी सोचता या जो कर्म भी करता है वह मात्र विचार या कर्म न होकर वास्तविकता के साथ एक प्रकार का व्यवहार होता है। मानव वास्तविकता की भूमि पर खड़ा हुआ है। फिर यह कैसे सम्भव हो सकता है कि उसके विचार या कर्म की कोई प्रतिक्रिया न हो। प्रतिक्रिया में कुछ विलम्ब अवश्य हो सकता है, लेकिन विलम्ब का अर्थ यह कदापि नहीं होता कि उसके कर्म की सिरे से कोई प्रतिक्रिया ही नहीं होती। मानव एक उत्तरदायी प्राणी है। उसके कर्मों की जैसी कुछ प्रतिक्रिया होगी, वह अवश्य ही उसके समक्ष आएगी। क़ुरआन बता रहा है कि मानव के कर्मों की प्रतिक्रिया पर सदैव परदा नहीं पड़ा रहेगा। वह तो उसके सामने आएगी और मानव के अच्छे-बुरे

कर्मों और उसकी सत्य और असत्य धारणाओं का निर्णय होकर रहेगा, और फिर उस निर्णय के अनुसार उसे अच्छा या बुरा स्थान मिलेगा। ईश्वर की इस योजना को विफल करने का यदि किसी व्यक्ति में साहस और बल है, तो पहले वह रात को ढलने और सूर्य को उदय होने से रोक कर दिखाए। क़ुरआन से एक उदाहरण लीजिए :

> "अतः कुछ नहीं, क़सम खाता हूँ मैं सान्ध्य-लालिमा की, और रात की और जो वह समेट लेती है, और चन्द्रमा की जबकि वह पूरा हो जाए, निश्चय ही तुम्हें एक के पीछे एक चढ़ाई चढ़नी है।" (क़ुरआन, 84/16-19)

इन आयतों में यह बताया गया है कि मनुष्य का जीवन वास्तव में विनष्ट होने के लिए नहीं, बल्कि पूर्णता प्राप्त करने के लिए है। मानव-जीवन एक ऐसे जीवन में परिणत होनेवाला है जो अत्यन्त पूर्ण होगा। जिस प्रकार आकाश की सान्ध्य-लालिमा क्रमशः बढ़ती जाती है, जिस प्रकार रात आती है और पूरे तौर पर छा जाती है और जिस प्रकार चन्द्रमा बढ़ते-बढ़ते पूर्णिमा का चन्द्र बन जाता है, उसी प्रकार मानव को भी पूर्ण होना है। उसका प्रकाश भी पूर्णता को प्राप्त होगा। स्थिति में परिवर्तन कोई ऐसी चीज़ नहीं है जिसके उदाहरण जगत् और जीवन में न मिलते हों।

हम देखते हैं कि सान्ध्य-बेला होते ही दिन बीत जाता है। फिर रात अपनी छाया सबपर डाल देती है। दिन का वातावरण बिल्कुल बदल जाता है। इसी प्रकार एक दिन ऐसा आएगा जब पूरे संसार को एक नवीन परिवेश प्राप्त होगा। मानव उस दिन अपनी अनुभूतियों की आख़िरी मंज़िल में क़दम रखेगा। हमारे सामने हर महीने यह दृश्य आता है कि चन्द्रमा, क्रमशः पूर्ण चन्द्र बन जाता है। फिर यह कैसे सम्भव है कि चन्द्रमा जो मानव की सेवा में लगा हुआ है, अपनी पूर्णता को प्राप्त हो और मानव के लिए पूर्णता की प्राप्ति का कोई उपाय न हो? निश्चय

ही मानव एक ऐसा जीवन प्राप्त करने में सफल होगा जिसमें विवशताएँ उसका हाथ न पकड़ सकेंगी।

मानव दूर न जाकर स्वयं अपने रंग-रूप ही को देखे तो सत्य के पाने में उसे कोई कठिनाई न होगी। उसे ऐसा आभास होगा कि स्वयं उसका रंग-रूप भी पुकार-पुकारकर कह रहा है कि वास्तविकता केवल उतनी ही नहीं है जो आज मानव के समक्ष है; बल्कि आनेवाला एक कल भी है, और यह आज, आनेवाले कल का ही एक अंश है। क़ुरआन कहता है :

> "उसने आकाशों और धरती को हक़ के साथ पैदा किया और तुम्हारा रूप बनाया, तो तुम्हें उत्तम रूप दिया, और उसी की ओर अन्ततः पहुँचना है। (क़ुरआन, 64/3)

मानव को सोचना चाहिए कि जब उसे शरीर ही नहीं शारीरिक रंग-रूप और सुन्दरता भी मिली है तो फिर यह कैसे सम्भव हो सकता है कि उसे अस्तित्व तो मिला हो, किन्तु वह अस्तित्व आत्मिक एवं आंतरिक सौन्दर्य से वंचित हो। मृत्यु को जीवन-यात्रा की अंतिम मंज़िल समझना वास्तव में इस बात को स्वीकार करना है कि मानव-जीवन किसी वास्तविक उद्देश्य और भावमय सुन्दरता से रिक्त है। यह विचार ईश्वर पर ऐसा लांछन है जो अक्षम्य है। मानव के सुन्दरतम रूप की तरह उसके जीवन का लक्ष्य भी महान और सुन्दरतम है। मनुष्य के वास्तविक लक्ष्य की पूर्ति उसके अपने प्रभु से मिलकर ही हो सकती है, जैसा कि उपरोक्त आयत में इसका स्पष्ट संकेत भी मिलता है।

अध्याय-3

आकांक्षा अपने मन की

नैतिकता (Morality) की माँग

यदि कोई नैतिक दृष्टिकोण से विचार करे तो भी उसे परलोक की धारणा को सत्य मानना पड़ेगा। यही कारण है कि आधुनिक दार्शनिकों में काण्ट ने यह स्वीकार किया है कि यदि हम पारलौकिक जीवन अर्थात् मृत्यु के पश्चात् किसी जीवन को स्वीकार न करें तो नैतिकता के लिए कोई आधार निर्धारित न कर सकेंगे। पारलौकिक जीवन को माने बिना नैतिकता को मानव-जीवन में कोई स्थान नहीं मिल सकता, हालाँकि नैतिकता मानवजाति की एक व्यावहारिक आवश्यकता है, जिसका निषेध नहीं किया जा सकता।

दुनिया में हम देखते हैं कि मानव के अधिकार में कितनी ही चीज़ें दे दी गई हैं। जल-थल पर ही नहीं, वायुमण्डल पर भी उसे अधिकार प्राप्त है। दुनिया की सारी चीज़ों को वह अपने प्रयोग में लाता है। स्वयं उसे चेतना, बुद्धि, संकल्प, इरादा और सोच-विचार की शक्तियों से आभूषित किया गया है। फिर इस मामले में उसे स्वतन्त्रता प्राप्त है कि वह अपने जीवन का, अच्छा या बुरा, जो मार्ग चाहे स्वेच्छापूर्वक अपना सकता है। वह चाहे तो न्यायप्रिय बनकर जनहित के कार्य कर सकता है और चाहे तो संसार में अत्याचार और उपद्रव के बीज बो सकता है और दूसरों की पीड़ा और कलह का कारण बन सकता है।

फिर हम देखते हैं कि मानव में नैतिक चेतना भी पाई जाती है। अर्थात् वह अच्छे-बुरे में अन्तर करता है और यह मानता है कि अच्छे कर्म का बदला अच्छा और बुरे कर्म का बदला बुरा मिलना चाहिए। इसी नैतिक चेतना के आधार पर संसार में न्यायालय की स्थापना भी हुई है, जहाँ अत्याचारियों और अपराधियों को दण्ड का पात्र समझा

जाता है और उत्पीड़ित और हक़दारों को उनके हक़ दिलाए जाते हैं, और किसी में यह साहस नहीं होता कि वह इस व्यवस्था का विरोध कर सके। फिर क्या मानव को यहाँ जो शक्ति, अधिकार, नैतिक चेतना और स्वतंत्रता प्राप्त है उससे इस बात की ओर संकेत नहीं मिलता कि एक दिन अवश्य उससे उसके कार्यों का हिसाब लिया जाएगा? जो ईश्वर मानव को इतने सारे अधिकार और कार्य करने का अवसर प्रदान कर सकता है और स्वयं मानव की अन्तरात्मा को भले-बुरे को पहचानने की योग्यता दे सकता है, क्या वह मानव से उसके कर्मों का हिसाब लेना न जानेगा?

हम दुनिया में देखते हैं कि यहाँ ऐसे लोग जो जीवन भर ईमानदार और नेक रहे, उन्होंने न्याय और सत्य के विरुद्ध कोई क़दम नहीं उठाया, लोगों की सेवा में पूरी तरह लगे रहे। वे न ईश्वर से विमुख होकर रहे और न लोगों का ही कोई हक़ मारा; लेकिन उनका जीवन अत्यन्त दुखमय रहा। उन्हें विभिन्न दुखों और कष्टों का सामना करना पड़ा। अन्त में परेशानी ही की दशा में वे दुनिया से चले गए।

इसके विपरीत यहाँ दुनिया में कुछ लोग जीवन भर ज़ुल्म और अत्याचार ही करते रहे और संपूर्ण बुराइयों की साकारमूर्ति बने रहे, किन्तु सांसारिक सुखों और सांसारिक वैभव की दृष्टि से वे अत्यन्त सम्पन्न रहे। उनका सारा जीवन या जीवन का बड़ा भाग सुखों ही में बीता। आख़िर इसका रहस्य क्या है? क्या ईश्वर की दृष्टि में नेक और भले लोगों का कोई स्थान नहीं? क्या ईश्वर की दृष्टि में नेक और भले लोग उपेक्षित हैं और बुरे और अत्याचारी लोग ईश्वर को प्रिय हैं?

ऐसा नहीं है। जो ईश्वर फूलों को सुन्दरता प्रदान करता है, वह सुन्दरता को जानता भी है। उसकी निगाह में सुन्दर और असुन्दर समान नहीं हो सकते। इसलिए मानना पड़ेगा कि भले लोगों का हक़ मारा नहीं जा सकता। उन्हें अपने कर्मों का अच्छा बदला मिलकर रहेगा और दुष्टों

को अपने किए की सज़ा भुगतनी होगी। और इस मामले में ईश्वर कदापि असावधानी नहीं दिखा सकता। वर्तमान लोक में तो विभिन्न कारणों से लोगों को उनके कर्मों का भरपूर बदला दिया भी नहीं जा सकता। इसके लिए वह जीवन ही अपेक्षित है जो मानव को मृत्यु के पश्चात् प्राप्त होगा। अब आप क़ुरआन को देखें कि वह किस प्रकार इस विषय पर प्रकाश डाल रहा है—

> "क्या हम उन लोगों को जो ईमान लाए और अनुकूल कर्म किए उनकी तरह कर देंगे जो धरती में बिगाड़ पैदा करते हैं; या डरनेवालों को दुस्साहसी लोगों जैसा कर देंगे?" (38/28)
>
> "क्या उन लोगों ने, जिन्होंने बुराइयाँ की हैं, यह समझ रखा है कि हम उन्हें उन लोगों जैसा कर देंगे जो ईमान लाए और अनुकूल कर्म किए कि उनका जीना और मरना बराबर हो? बुरा है जो निर्णय वे करते हैं।" (45/21)

परलोक (आख़िरत) का इनकार करनेवाले कहते थे कि जब हम मरकर मिट्टी में मिल जाएँगे तो हमें कौन जीवित करके उठाएगा और हमारे कर्मों का हिसाब लेगा? जीवन जो कुछ भी है बस यही है। आगे न कोई जीवन है और न कोई हिसाब-किताब होना है। उनकी इस ग़लत धारणा का उत्तर देते हुए कहा जा रहा है कि वे जो अटपटी बातें कर रहे हैं उसपर तनिक विचार भी करें कि उनकी इस प्रकार की बातों का क्या अर्थ निकलता है?

उन्हें सोचना चाहिए कि यदि मरने के पश्चात् कोई जीवन नहीं है तो इसका अर्थ यह हुआ कि अच्छे लोग हों या बुरे सबका परिणाम एक ही होनेवाला है। सभी मरकर सदैव के लिए विलुप्त हो जाएँगे।

मनुष्य यदि कुछ बुद्धि से काम ले तो वह इस तरह नहीं सोच सकता। जब भलाई और बुराई दोनों समान नहीं हैं तो उनका परिणाम एक कैसे होगा? न्याययुक्त और बुद्धिसंगत बात हो सकती है

तो यही कि मरने के बाद भी कोई जीवन हो जिसमें मनुष्य को उसके अच्छे-बुरे कर्मों के अनुसार बदला मिल सके।

कुरआन में है कि जो लोग दुनिया में ईश्वर को भूले हुए हैं और सत्य को मानने के बदले उसे उन्होंने हँसी की चीज़ समझ रखा है, उनसे आख़िरत के दिन कहा जाएगा :

> "क्या तुमने यह समझा था कि हमने तुम्हें व्यर्थ पैदा किया है,
> और यह कि तुम्हें हमारी ओर पलटना नहीं है?" (23/115)

अर्थात् आख़िर तुमने यह क्यों नहीं सोचा कि यदि नेकी और बदी का किसी लोक में बदला नहीं मिलता है तो फिर जीवन और जगत् की रचना ही व्यर्थ सिद्ध होगी। आख़िर तुमने यह कैसे समझ लिया कि ईश्वर अच्छे और बुरे सभी को एक ही लकड़ी से हाँकेगा? यह समझते हुए तुम्हारी चेतना कहाँ सो गई थी? तुम्हारे मन में यह विचार तो आया कि जगत् का कोई वास्तविक और शाश्वत परिणाम सामने आनेवाला नहीं है, यह विचार क्यों नहीं आया कि इस प्रकार का विचार जगत् के सृष्टिकर्ता के साथ अन्याय है? तुम अपने सांसारिक लाभ-हानि के बारे में तो इतने असावधान नहीं होते थे, फिर सत्य के प्रति तुम्हारी इस बेपरवाही का अर्थ इसके सिवा और क्या लिया जा सकता है कि वास्तव में तुम्हारी मनोवृत्ति ही आपराधिक थी जिसके कारण न तुम ईश्वर के प्रति कोई उचित धारणा बना सके और न जीवन के प्रति किसी सजगता को तुम अपने भीतर स्थान दे सके।

ऐसी स्थिति में अब तुम स्वयं समझ सकते हो कि तुम्हारा स्थान पारलौकिक जीवन में क्या हो सकता है। यदि तुम्हारी कुचेष्टाओं, घृणित नीतियों और तुम्हारे घोरतम् अपराधों के बावजूद तुम्हें स्वर्ग का सुख और वैभव सौंप दिया जाए, तो ऐसा तो हम पहले भी कर सकते थे, फिर अब तक तुम्हें स्वर्ग से दूर रखने की कोई आवश्यकता न थी। स्वर्ग का प्रवेश-द्वार तो तुम दुनिया में अपने पीछे छोड़ आए। जिस द्वार में प्रवेश करना तुमने पसन्द किया उस द्वार से होकर तो तुम जहाँ पहुँचे

हो वह स्वर्ग नहीं, नरक है। इस विषय में यदि तुम्हें शिकायत हो सकती है तो किसी और से नहीं, बल्कि अपने आप से हो सकती है।

मानव में नैतिक चेतना पाई जाती है, किन्तु इस नैतिक चेतना का कोई अर्थ नहीं है जब तक कुछ ऐसे नैतिक मूल्यों और मान्यताओं को स्वीकार न किया जाए जो स्थायी हों, जिनका आदर मानव प्राण देकर भी कर सके। ऐसे नैतिक मूल्यों को स्वीकार करने के लिए हमें कुछ अन्य बातों को भी स्वीकार करना पड़ेगा।

राश्डल (Rashdall) ने लिखा है कि इसके लिए सबसे पहले यह मानना आवश्यक है कि यह जगत् निरुद्देश्य नहीं पैदा किया गया है, बल्कि इसकी सृष्टि का उद्देश्य यह है कि जगत् वह सामग्री जुटाए जिससे मानव-आत्मा अपने उद्देश्य को प्राप्त कर सके। (The Theory of Good and Evil, Vol. II P. 253)

दूसरे यह मानना आवश्यक है कि मानव-आत्मा एक स्थायी एवं स्वतंत्र वास्तविकता है। भौतिक शरीर में किसी परिवर्तन से वह प्रभावित नहीं हो सकती। वह अपने कर्मों का कारण स्वयं है। अर्थात् मानवीय कर्म उसके आंतरिक भावों को व्यक्त करते हैं। (The Theory of Good and Evil, Vol. II P. 200-205)

तीसरे यह मानना आवश्यक है कि मानव के वर्तमान कर्म उसके भविष्य को प्रभावित करते हैं। जैसे उसके आज के कर्म होंगे उसी प्रकार का उसका 'कल' होगा। इसके लिए जीवन की निरन्तरता को स्वीकार करना होगा।

और सबसे आवश्यक यह है कि ईश्वर में विश्वास करना होगा। कारण यह है कि नैतिक आदर्श मन (Mind) के अतिरिक्त कहीं और नहीं पाया जा सकता। और एक निरपेक्ष एवं परम (Absolute) नैतिक आदर्श निरपेक्ष एवं परम मन में ही अवस्थित हो सकता है जो प्रत्येक वास्तविकता का उद्गम एवं मूल स्रोत है। (The Theory of Good and Evil, Vol. II P. 212-220)

राश्डल ने लिखा है कि एक निरपेक्ष नियम या नैतिक लक्ष्य भौतिक वस्तुओं में पाया ही नहीं जा सकता। (The Theory of Good and Evil, Vol. II P. 214)

जब हमारे अन्दर नैतिकता का भाव विद्यमान है तो क्या यह इस बात का प्रमाण नहीं है कि दूसरी वे चीज़ें भी अवश्य मौजूद हैं जिनके बिना नैतिकता का भाव निराधार सिद्ध होता है। अतः यह स्वीकार करना होगा कि जब हमारे अन्दर नैतिक चेतना विद्यमान है तो अनिवार्यतः ईश्वर भी है, आत्मा भी है और आत्मा का भविष्य परलोक भी है। यह ऐसा ही है जैसे किसी फूल को देखकर हमें यह मानने पर विवश होना पड़ता है कि जब फूल है तो कोई वृक्ष या पौधा भी अवश्य होगा। उसकी जड़ें भी होंगी और पत्तियाँ भी।

संसार में कोई व्यक्ति भी ऐसा नहीं है जिसके भीतर अन्तरात्मा नाम की चीज़ न हो। प्रत्येक व्यक्ति में भलाई और बुराई की अनुभूति पाई जाती है। यह अलग बात है कि भलाई-बुराई के मानदंडों के प्रति लोगों में कुछ मतभेद भी हो। किन्तु यह एक ऐसी सच्चाई है जिसे झुठलाया नहीं जा सकता कि मानव में भलाई और बुराई का विवेक विद्यमान है।

यह स्वयं मानव के अपने अस्तित्व में आख़िरत का ऐसा जीवन्त प्रमाण है जो हर समय उसे सतर्क रहने की सीख देता है। जब मनुष्य कोई अपराध या बुरा कर्म कर बैठता है तो उसकी अन्तरात्मा उसे धिक्कारती है और जब किसी व्यक्ति से कोई भलाई और नेकी का काम बन आता है तो उसे हार्दिक प्रसन्नता होती है। क्या यह इस बात का प्रमाण नहीं है कि कुछ चीज़ें मानव के लिए निन्दनीय और कुछ प्रशंसनीय हैं! जब नेकी और बदी बराबर नहीं, तो अवश्य ही इनके प्रभावों और प्रमाणों में भी अन्तर होगा। प्रश्न यह है कि यह अन्तर अवश्यंभावी रूप से कब प्रकट होगा? जब यह अन्तर सामने

आएगा; वही आख़िरत का दिन होगा। क़ुरआन ने स्वयं यह मनोवैज्ञानिक तर्क इन शब्दों में प्रस्तुत किया है :

> नहीं! क़सम खाता हूँ मैं क़ियामत के दिन की; और नहीं! क़सम खाता हूँ मैं धिक्कारनेवाली आत्मा की। क्या मनुष्य यह समझता है कि हम उसकी हड्डियों को कभी एकत्र न करेंगे?"
>
> (क़ुरआन, 75/1-3)

क़ियामत अर्थात् परलोक की सत्यता पर इन आयतों में एक मनोवैज्ञानिक प्रमाण प्रस्तुत किया गया है। मनुष्य की अपनी आत्मा उसे कुछ कामों पर धिक्कारती और टोकती है। यदि मनुष्य निरंकुश प्राणी होता कि जो मन में आए करे और जो चाहे न करे, तो उसकी मनःस्थिति ऐसी न होनी चाहिए थी। क़ियामत और मनुष्य को टोकनेवाली आत्मा में गहरा सम्पर्क पाया जाता है। इसी लिए दोनों को एक साथ लाया गया है। हमारी अन्तरात्मा हमारे भीतर क़ियामत या परलोक की साक्षी बनकर रहती है। हम अपनी बुराइयों को दूसरों से भले ही छिपा लेने में सफल हो जाएँ, किन्तु अपनी अन्तरात्मा से नहीं छिपा सकते। हमारी आत्मा हमारा सारा ही खरा-खोटा हमारे सामने रख देती है। यही विशेषता क़ियामत की भी है। वह भी जब आएगी तो लोगों के सामने वह सब कुछ रख देगी जो उन्होंने दुनिया में किया होगा।

यह कहना भी सही न होगा कि अपराधी के लिए उसकी अन्तरात्मा की ओर से भर्त्सना ही पर्याप्त दण्ड है और सत्कर्मी के लिए उसके मन का परितोष ही सबसे बड़ा बदला है। इस तरह की बातें करनेवालों को देखा जाए तो ऐसा कदापि नहीं कि स्वयं वे दुनिया में थोड़े पर राज़ी हो गए हों, किन्तु आख़िरत को न मानने के लिए वे कोई भी हथकण्डा अपनाने से नहीं चूकते।

सवाल यह है कि किसी निर्दोष व्यक्ति की हत्या करने के पश्चात् तुरन्त ही हत्यारा यदि किसी दुर्घटना में मर जाता है तो उसके लिए कोई

अवकाश ही नहीं रहता कि उसकी आत्मा उसे धिक्कार सके। इसी प्रकार यह भी सम्भव है कि सत्य एवं न्याय के मैदान में निकलनेवाले व्यक्ति की अचानक किसी आघात से मृत्यु हो जाए तो बताइए उसके लिए इसका अवसर ही कहाँ रहा कि उसकी आत्मा यह सोचकर परितोष प्राप्त कर सकती कि उसने उच्च उद्देश्य के लिए अपनी जान दी है।

अपूर्णता से पूर्णता की ओर

वर्तमान लोक अपनी विशेषताओं और सुदृढ़ व्यवस्था के बावजूद अपूर्ण है। यह अपूर्णता अकारण नहीं है, बल्कि यह इसलिए है कि मानव के विवेक की परीक्षा हो सके। यह अपूर्णता जगत् की अतिरिक्त सम्भावनाओं का पता देती है। यह अपूर्णता इसका अवसर जुटाती है कि मानव अपना चरित्र-निर्माण कर सके। हम सब जानते हैं कि किसी भी चरित्र के व्यक्त और विकसित होने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य के लिए भलाई या बुराई दोनों में से किसी को भी अपनाने का अवसर प्राप्त हो। यही कारण है कि मानव के अतिरिक्त जड़-पदार्थ और पशुओं में हम किसी चरित्र की कल्पना नहीं करते। हमें जो कुछ बनना है, अथवा ईश्वर जिस अन्तिम रूप में हमें देखना चाहता है, उसके निर्माण में हमें स्वयं अपनी भी कुछ भूमिका निभानी है, हमें उसमें स्वयं भी कुछ हिस्सा लेना है।

यदि उसमें हमें कोई हिस्सा लेना न होता तो जो कुछ हमें बनना है वह हम एक ही बार में बन जाते। ईश्वर को कदापि किसी प्रतीक्षा की आवश्यकता न होती। वर्तमान जीवन वास्तव में हमें इसी लिए मिला है कि हम इसकी स्म्भावनाओं को समझें और उस चरित्र का परिचय दें जिससे हम वही कुछ बन सकें जो हमें बनना है। किन्तु यदि हम इस अवसर के महत्त्व को न समझ सकें, जो वर्तमान जीवन में हमारे लिए जुटाया गया है, तो हमसे बढ़कर आत्मघाती कोई न होगा। इस प्रकार हम योजनाकार ईश्वर का तो कुछ न बिगाड़ सकेंगे, परन्तु अपना

सर्वनाश अवश्य कर लेंगे। फिर इस क्षतिपूर्ति के लिए कोई अवकाश न होगा।

वर्तमान लोक में हम देखते हैं कि यहाँ भौतिक वस्तुओं को कुछ ऐसी प्रधानता प्राप्त है कि हर चीज़ का वास्तविक स्वरूप निगाहों से छिप-सा गया है। भौतिक आवरण ने यहाँ वास्तविकता का स्थान ले लिया और वास्तविकताएँ सामान्य दृष्टि में मात्र भ्रम प्रतीत होती हैं। जो चीज़ें जितनी अधिक सूक्ष्म और भौतिक आवरण से मुक्त हैं वे उतनी ही अधिक अप्रकट और बुद्धि एवं चेतना की पकड़ से दूर लक्षित होती हैं। इस लोक में भौतिक शरीर को तो नापा-तौला जा सकता है, किन्तु सूक्ष्म और शरीरविहीन वास्तविकताओं को नापने-तौलने की कोई विधि दिखाई नहीं पड़ती। उदाहरणार्थ, यहाँ हम लकड़ी, पत्थर, अनाज, कपड़ा आदि को आसानी से नाप और तौल सकते हैं, किन्तु यहाँ बुद्धि, चेतना, संकल्प, नीयत, इरादा, भावनाओं, अन्तःप्रेरणाओं को नापने और तौलने की कोई गुंजाइश नहीं दिखाई देती। यहाँ धन, रुपया आदि का मूल्य निर्धारित किया जा सकता है, किन्तु यहाँ ऐसी कोई तुला नहीं जिसके द्वारा प्रेम, अभिलाषा या घृणा, द्वेष आदि को तौला जा सके। और न यहाँ इसकी सम्भावना दीख पड़ती है कि सूक्ष्म भावनाओं का पूर्णतः मूल्यांकन किया जा सके, हालांकि भावनाएँ ही वास्तव में मनुष्य के कर्म और उसके प्रयासों की प्रेरक होती हैं।

यह वास्तव में एक प्रकार से वर्तमान लोक की अपूर्णता है। बुद्धि की यह माँग है कि कोई ऐसा लोक हो जिससे यह अपूर्णता बाक़ी न रहे। वर्तमान लोक एक ऐसे विकास और पूर्णता की प्रतीक्षा में है। जिस प्रकार आम का एक नन्हा पौधा अपने में एक ऐसे वृक्ष की सम्भावना लिए हुए होता है जो फल-फूल ला सके और जिसकी घनी छाया में थके हुए यात्री आराम पा सकें, उसी प्रकार वर्तमान लोक अपने भीतर एक परिपूर्ण और विकसित लोक की सम्भावना लिए हुए है।

क़ुरआन इस बात की सूचना देता है कि एक ऐसा उन्नत और पूर्ण लोक अवश्य सामने आनेवाला है जिसमें उन समस्त बातों की गुंजाइश होगी, जिनकी गुंजाइश वर्तमान लोक में नहीं रखी गई है। उस लोक में वास्तविकताएँ मूर्तमान होने के लिए भौतिक आवरणों के सहारे की मुहताज नहीं होंगी। आज यदि भौतिक पदार्थों और स्थूलता की प्रधानता दिखाई देती है, तो उस लोक में स्थूलता की अपेक्षा सूक्ष्मता को प्रधानता प्राप्त होगी। वहाँ जो चीज़ें जितनी ही सूक्ष्म एवं पवित्र होंगी, उतनी ही स्पष्ट होंगी।

वर्तमान लोक में वही कर्म प्रभावकारी सिद्ध होते हैं जिनका साथ भौतिक नियम भी देते हैं; किन्तु यदि भौतिक नियम साथ न दे रहे हों तो बुद्धि और नैतिकता की माँग चाहे कुछ भी हो परिणाम भौतिक नियम ही के अनुकूल सामने आएगा। यहाँ यदि किसी को आग में डाल दिया जाए तो आग उसे जलाकर राख कर देगी, चाहे आग में डाला जानेवाला व्यक्ति अपराधी हो या न हो। यहाँ पौधों को पानी दिया जाए तो वे हरे-भरे होंगे, किन्तु यह आवश्यक नहीं है कि नेकी करें तो यहाँ उसका फल भी नेकी के रूप में हमारे सामने आए। कितने ही नेक काम करनेवालों और सत्य-प्रेमियों को दुःख ही झेलने पड़ें हैं और कितने ही अत्याचारी ऐसे हुए हैं जिनका जीवन सुख-सुविधा में ही व्यतीत हुआ। इसका कारण यही है कि यहाँ भौतिक नियमों को एक प्रकार से प्रधानता प्राप्त है। ऐसा तो नहीं कि विश्व पर सिरे से किसी नैतिकता का नियंत्रण ही न हो, किन्तु इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि सामान्य रूप से यहाँ भौतिक नियमों और भौतिक शक्तियों ही की प्रधानता है। किन्तु आनेवाले लोक में मामला इसके विपरीत होगा। इसलिए वह लोक अत्यन्त पूर्ण एवं उन्नत होगा। वहाँ बौद्धिक नियम कार्यान्वित होंगे। वहाँ कर्म के वही परिणाम सामने आएँगे जिनकी माँग बुद्धि एवं विवेक करते हैं। वहाँ आग उसी व्यक्ति को जला सकेगी जो जलाए जाने योग्य होगा। निर्दोष व्यक्ति पर वहाँ किसी प्रकार का संकट

नहीं आ सकता। वहाँ कर्मों के वास्तविक परिणाम सामने आ सकेंगे। अच्छे कर्मों के जो अच्छे परिणाम भौतिक बाधाओं के कारण सामने आने से रह गए है, वे वहाँ प्रकट हो जाएँगे और इस प्रकार प्रकट होंगे मानो कर्म और उसके परिणाम अथवा प्रभाव के मध्य समय की कोई दूरी ही नहीं थीं।

आनेवाले लोक में प्रत्येक व्यक्ति वह सब कुछ अपनी खुली आँखों से देख लेगा जो आज उसे दिखाई नहीं दे रहा है। वह यह जान लेगा कि वास्तव में अपने सांसारिक जीवन में उसने क्या भूमिका निभाई है। और संसार में उसने जो भी कार्य किए थे उसका वास्तविक परिणाम उसके सामने होगा। इसलिए कि हर चीज़ की वास्तविकता उस लोक में प्रभावकारी रूप में प्रकट हो रही होगी। क़ुरआन में है :

> "(मानव से कहा जाएगा) तू इसकी ओर से ग़फ़लत में था; अब हमने तुझपर से तेरा परदा हटा दिया तो आज तेरी दृष्टि बड़ी तेज़ है।" (क़ुरआन, 50/22)
>
> "उस दिन तुम लोग पेश किए जाओगे; तुम्हारी कोई छिपी बात, छिपी न रहेगी।" (क़ुरआन, 69/18)
>
> "वह दिन जबकि न माल काम आएगा और न औलाद, सिवाय इसके कि कोई भला-चंगा दिल लिए हुए ईश्वर के पास आए।" (क़ुरआन, 26/88-89)
>
> "और हर एक के दर्जे हैं जो कुछ कि उसने किया है उसके अनुसार।" (क़ुरआन, 6/132)
>
> "बल्कि तुम लोग शीघ्र मिलनेवाली चीज़ (दुनिया) से प्रेम रखते हो और आख़िरत को छोड़ रहे हो।" (क़ुरआन, 75/20-21)
>
> "परन्तु तुम लोग तो सांसारिक जीवन ही को प्राथमिकता देते हो, हालाँकि 'आख़िरत' (दुनिया से) कहीं अधिक उत्तम और स्थायी है।" (क़ुरआन, 87/16-17)

"जो कुछ उन्होंने किया होगा, सब मौजूद पाएँगे। तुम्हारा रब किसी पर ज़ुल्म न करेगा।" (क़ुरआन, 18/49)

"जो कुछ वे करते रहे उसकी बुराइयाँ उनपर प्रकट हो गईं और जिस चीज़ का वे परिहास करते थे उसी ने उन्हें आ घेरा।"

(क़ुरआन, 45/33)

"(कहा जाएगा) आज तुम्हें उसी का बदला दिया जाएगा जो तुम करते थे।" (क़ुरआन, 45/28)

"प्रत्येक जीव अपनी कमाई के साथ बँधा हुआ है।"

(क़ुरआन, 74/38)

"और (उस दिन) 'जन्नत' डर रखनेवालों के समीप लाई जाएगी और भड़कती हुई आग पथभ्रष्ट लोगों के सामने प्रकट कर दी जाएगी।" (क़ुरआन, 26/90-91)

"और 'जन्नत' डर रखनेवालों के समीप कर दी गई, कुछ भी दूर न रही। यह है जिसका तुमसे वादा किया जाता था हर उस व्यक्ति के लिए जो रुजू करनेवाला और कर्तव्य का पालन करनेवाला हो।" (क़ुरआन, 50/31-32)

क़ुरआन की इन आयतों से स्पष्टः ज्ञात होता है कि वर्तमान लोक में जिन बातों की कमी दिखाई पड़ती है वह कमी दूर होनेवाली है। और एक ऐसा समय आकर रहेगा कि जो कुछ छिपा है वह प्रकाश में आ जाएगा और जो बातें आज पूरी होती नहीं दिखाई देतीं, वे सब पूरी होंगी। निगाहें तेज़ होंगी और मनुष्य को सब कुछ सुझाई देने लगेगा। और मानव यह जान लेगा कि वह जिस संसार पर रीझा हुआ था जीवन का वह वास्तविक रूप कदापि न था। वास्तविकता वह थी, जिसकी वह उपेक्षा करता रहा है। उस समय मनुष्य अपने को अपनी कमाई और अपने कर्मों के अनुसार पाएगा। बुरों को उनकी बुराइयाँ बुरी स्थिति को और अच्छे लोगों की नेकियाँ उन्हें अच्छी स्थिति को प्राप्त कराएँगी। मनुष्य को यह मालूम हो जाएगा कि उसके विचार और कर्म अपने

प्रभाव एवं परिणाम की दृष्टि से सामयिक न थे। उसने जो कुछ किया उसी में वह अपने को बँधा और घिरा हुआ पाएगा। इसके परिणाम स्परूप अब या तो वह 'जन्नत' की सुखकर छाया में होगा या 'दोज़ख़' (नरक) की यातनाओं में ग्रस्त होगा। जन्नत या दोज़ख़ के रूप में उसे अपने कर्मों का पूरा बदला मिल जाएगा।

परलोक की प्रतिच्छाया

धरती में पाँव रखने से पहले बच्चा माँ के पेट (गर्भाशय) में रहता है। वहाँ रहकर वह धरती के प्रभावों को ग्रहण करता है। यहाँ तक कि वह इस योग्य हो जाता है कि धरती में जीवन व्यतीत कर सके, तब वह धरती पर आता है। उसका यह आना भी सदैव के लिए नहीं होता, वरन् एक निश्चित समय के लिए होता है। ।फ़र एक समय आता है कि वह यहाँ से भी प्रस्थान कर जाता है।

जिस प्रकार गर्भाशय में धरती के प्रभावों से बच्चा इस योग्य हुआ कि वह धरती में पदाप्रण कर सके, ठीक उसी प्रकार धरती में भी किसी अन्य ठिकाने के प्रभावों से उसकी एक और प्रकार की संरचना होती है। इस संरचना में जो चीज़ क्रियाशील होती है उसके वास्तविक स्परूप को हम भले न देख सकें, किन्तु इतना तो आवश्य आभासित होता है कि यहाँ उसकी संरचना में जो चीज़ क्रियाशील है उसे हम नैतिकता या अनैतिकता की संज्ञा दे सकते हैं। मनुष्य दुनिया में या तो नैतिक गुणों को अपनाकर आदरणीय व्यक्तित्व के रूप में खड़ा होता है या फिर अनैतिकता और दुर्गुणों को अंगीकार करके अत्यन्त पतित रूप में हमारे सामने आता है। नैतिक भावना का वास्तविक स्रोत कहाँ है जिसे मनुष्य अपनाता या जिसकी अवहेलना करता है? इसका पता लगाना कोई सरल काम नहीं है। भौतिक शरीर में चेतना और फिर इससे बढ़कर नैतिक चेतना कहाँ से आती है? इसका उत्तर भौतिकवादी लोग अब तक नहीं दे पाए हैं। चेतना और नैतिक चेतना का स्रोत अचेतन भौतिक

वस्तुओं को नहीं कहा जा सकता। जब उनमें स्वयं चेतना और भले-बुरे में अन्तर करने की योग्यता नहीं है तो वे दूसरों को यह योग्यता कैसे प्रदान कर सकती हैं? अतः हमें मानना पड़ेगा कि चेतना और नैतिक भावना का स्रोत कुछ और ही है। और बहुत सम्भव है कि भौतिक जगत् में जहाँ से चेतना और नैतिक भावना का उद्भव होता है वही भौतिक जगत् का भी मूलाधार हो। इसलिए कि सम्पूर्ण जगत् जिस प्रकार एक उच्च नियम के अन्तर्गत दिखाई देता है उससे यही मालूम होता है कि जगत् की वास्तविकता भिन्न नहीं, एक ही है। सारे जगत् का संचालन-कार्य एक ही के हाथ में है। और किसी भी दृष्टि से उस एक के अतिरिक्त किसी अन्य का इस जगत् की रचना या संचालन में हाथ नहीं है। यह अलग बात है कि जगत् का रचयिता संसार का नियंत्रण और संचालन अत्यन्त विधिपूर्वक कर रहा है। संसार में लक्षित विधियों और नियमों का अपना कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है, बल्कि ये संसार के रचयिता ही के निर्धारित किए हुए हैं।

हम यह कह सकते हैं कि धरती में नैतिक चेतना का अवतरण जहाँ से हुआ है वहाँ का ही प्रभाव नैतिकता को ग्रहण करके मानव स्वीकार करता है। इस प्रकार वह धरती में इस योग्य बनता है कि उस जगत् में पदार्पण कर सके कि जिसके प्रभावों से धरती में उसके व्यक्तित्व का निर्माण होता है। और वह जगत् वही है जिसे परलोक या आख़िरत कहते हैं। गर्भाशय से धरती दूर भी होती है और समीप भी। उस बच्चे के लिए दुनिया बहुत दूर होती है गर्भाशय में जिसकी रचना अभी अधूरी हो; परन्तु उस बच्चे के लिए दुनिया अत्यन्त समीप होती है जिसे हाथ-पाँव आदि अवयव सब मिल गए हों। इसी प्रकार जिस व्यक्ति ने नैतिक गुणों को स्वीकार करके अपने व्यक्तित्व के निर्माण-कार्य में सफलता प्राप्त कर ली वह आगे आनेवाले परलोक में विचरण करने योग्य हो गया। वह आनेवाले लोक को अनुकूल ही पाएगा। इसके विपरीत जिसने उस लोक के प्रभाव को अस्वीकार किया

और अपने चरित्र को दूषित किया, आनेवाला लोक उसके प्रतिकूल सिद्ध होगा। उसकी दशा उस बच्चे की-सी होगी जिसने धरती में अंगहीन दशा में जन्म लिया हो। जिसके न हाथ-पाँव दुरुस्त हों और न जिसकी आँखें बन पाई हों। ऐसा बच्चा धरती में आकर यहाँ के लिए अयोग्य सिद्ध होगा और यहाँ उसे तरह-तरह की आपदाएँ और कठिनाइयाँ झेलनी होंगी। इस जगत् में चेतना और नैतिक भावना का पाया जाना इस बात का एक स्पष्ट प्रमाण है कि इस भौतिक जगत् का आत्म-लोक से सम्बन्ध है। मानव-शरीर में जो तत्त्व पाए जाते हैं वे लगभग सब धरती में मौजूद हैं, किन्तु चेतना-शक्ति या आत्मा कोई भौतिक पदार्थ नहीं है जो धरती से संचित की गई हो। उसका सम्बन्ध अवश्य ही कहीं और से है। अतः 'उस कहीं और' से हम असम्बद्ध नहीं हो सकते।

भौतिक संसार से आत्म-लोक श्रेष्ठ है, इस संबंध में दो मत नहीं। शरीर से आत्मा श्रेष्ठ है, इससे किसको इनकार हो सकता है। अतः जीवन और जगत् के वास्तविक अभिप्राय एवं उद्देश्य के निर्धारण के लिए हमें आत्म-लोक की ओर देखना ही होगा। आत्म-लोक से अभिप्रेत परलोक या आख़िरत है जो अपनी छाया भौतिक जगत् पर निरन्तर डाल रहा है। परलोक या आख़िरत एक ऐसी वास्तविकता है जिसे सारा ब्रह्माण्ड अपने अंक में लिए हुए है। क़ुरआन में हैं :

> ''बोझिल हो रही है वह (क़ियामत की घड़ी) आकाशों और धरती में। वह तुमपर अचानक आ जाएगी।''(क़ुरआन, 7/187)

उस समय जीवन अपने अभिप्राय और लक्ष्य को पा लेगा। जब आज भी जगत् का नाता एक परोक्ष जगत् से बना हुआ है, फिर यह बुद्धिमानी की बात कैसे हो सकती है कि हम वर्तमान जगत् ही को सब-कुछ समझकर भविष्य की सम्भावनाओं की ओर से अपना मुख मोड़ लें। क़ुरआन कहता है :

> ''सांसारिक जीवन की उपमा तो ऐसी है जैसे हमने आकाश से पानी बरसाया तो धरती की वनस्पति, जिसे मनुष्य और चौपाये

सब खाते हैं, ख़ूब घनी उगी, यहाँ तक कि जब धरती ने अपना शृंगार कर लिया और सँवर गई और उसके मालिक समझने लगे कि उन्हें उसपर पूरा अधिकार प्राप्त है कि अचानक रात में या दिन में हमारा आदेश आ पहुँचा। फिर हमने उसे कटी फ़सल की तरह कर दिया, मानो कल वहाँ कुछ था ही नहीं। इसी प्रकार हम उन लोगों के लिए निशानियाँ खोल-खोलकर बयान करते हैं जो सोच-विचार से काम लेते हैं।" (क़ुरआन, 10/24)

आशय यह है कि जिस प्रकार आकाश से धरती पर पानी बरसता है तो उस पानी के कारण धरती हरी-भरी हो जाती है। पेड़-पौधे, अन्न आदि सभी पैदा होते हैं जिससे मनुष्य और चौपाये सबको फ़ायदा पहुँचता है। अज्ञानी समझते हैं कि सब उनके अधिकार में है, हालाँकि यह उनका मात्र भ्रम होता है। हम रात में या दिन में, जब चाहें सब तहस-नहस कर सकते हैं। ठीक इसी प्रकार यह मानव-काया और मानव-जीवन की बहार भी जिस आत्मा के कारण है, वह भी ईश्वर की भेजी हुई होती है। वही ईश्वर जो आकाश से पानी बरसाता है, वही शरीर में आत्मा का संचार भी करता है। यहाँ तक कि आदमी धरती में एक शक्तिवान और कुशल प्राणी के रूप में विचरने लगता है और उसे अपनी शक्ति और सामर्थ्य पर पूरा भरोसा हो जाता है। वह इस भ्रम में पड़ जाता है कि सब कुछ उसके अधिकार में है। अब और कुछ नहीं है, जिसके लिए वह प्रयत्न करे। हम सहसा उसका सब बना-बनाया खेल बिगाड़ सकते हैं। उसपर कोई भारी आपदा भी आ सकती है या अचानक मृत्यु ही आकर उससे उसका सब कुछ छीन ले सकती है। इस प्रकार के दृश्य दुनिया में निरन्तर मनुष्य को देखने को मिलते रहते हैं, फिर भी यदि वह सोच-विचार से काम नहीं लेता तो इसमें दोष किसी और का नहीं, स्वयं मनुष्य ही का है।

फिर हम देखते हैं कि इस संसार की कोई चीज़ सदैव के लिए नहीं है। फूल खिलते हैं, फिर मुरझा जाते हैं। नाना प्रकार के पेड़-पौधे उगते

हैं, बढ़ते हैं, फिर अन्त में गिरकर या सूखकर ख़त्म हो जाते हैं। धरती में कितने ही पशु-पक्षी पैदा होते हैं, किन्तु उनका भी अन्त हो जाता है। मानव का मामला भी यही है कि वह कुछ समय व्यतीत करके संसार से विदा हो जाता है। जिन चीज़ों को हम मिटते नहीं देखते जैसे, पर्वत, समुद्र, सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र आदि इनकी भी एक सीमित आयु है। इनमें से किसी में सदैव बने रहने की क्षमता नहीं है। अतः यह मानना पड़ेगा कि वर्तमान लोक अपना आशय आप नहीं है। इसलिए कि विनाश को किसी लक्ष्य का मधुर अभिप्राय नहीं कहा जा सकता।

यह बनने और मिटने का खेल जो यहाँ दिखाई देता है और इससे जो अभीष्ट है, क़ुरआन के अनुसार वह परलोक में सामने आ जाएगा। उस समय हमारा मामला प्रत्यक्षतः परमसत्ता परमात्मा से होगा। यह मिलन का ऐसा अवसर होगा जैसे किसी देश के राज्य-कर्मचारी अपने कार्य को पूरा करके अपने प्रमुख अधिकारी या सम्राट से मिलते हैं। यह अवसर वास्तव में अत्यन्त हर्ष और आनन्द का होता है। किन्तु यही शुभ अवसर विद्रोही या अपने दायित्व को भूलनेवाले कर्मचारियों के लिए अत्यन्त कठिन और भयावह भी होता है। ऐसे अवसर पर तो उनके मुख पर कालिख लगी होती है। उन्हें कोई जगह नहीं मिलती जहाँ वे अपने को छिपा सकें। ऐसे लोग किसी उपाधि और इनाम के बदले दण्ड के भागी होते हैं। इसी लिए क़ुरआन में लोगों को सचेत करते हुए कहा गया है :

> "क्या उन्होंने अपने-आप में सोच-विचार नहीं किया? ईश्वर ने आकाशों और धरती को, और जो कुछ उनके बीच है, केवल हक़ के साथ और नियत समय के लिए पैदा किया है। परन्तु अधिकतर लोग अपने प्रभु के मिलन को नहीं मानते।"
>
> (क़ुरआन, 30/8)

संवेदनशीलता एवं सूक्ष्मग्राह्यता की आवश्यकता

जीवन के कितने ही तथ्यों और भावों से मनुष्य उस समय तक अनभिज्ञ ही रहता है जब तक कि उसमें संवेदनशीलता और सूक्ष्मग्राहिता के गुण विद्यमान न हों। यदि हम तनिक गहराई में उतरकर देख सकने में समर्थ हों तो परलोक की बात हमें कदापि अनहोनी प्रतीत न होगी। हम अनहोनी में ही जी रहे हैं। क्या जो कुछ आज हमारे समक्ष है वह किसी विस्मय से कम है? इस संसार के हम कुछ इस प्रकार अभ्यस्त हो गए हैं कि यह हमें साधारण लगता है। हालाँकि यहाँ की प्रत्येक वस्तु ऐसी है कि आदमी विस्मय में डूब जाए।

परलोक को मानने में कठिनाई केवल इसलिए होती है कि हम उसे एक आश्चर्यजनक और विस्मयकारी चीज़ समझते है और वर्तमान जगत् को हमने साधारण समझ रखा है। हालाँकि वस्तुस्थिति यह है कि यह जगत् किसी भी विस्मयकारी चीज़ से कम नहीं है। यदि जगत् को हम स्थिर मन से देख सकें तो हमें मालूम होगा कि कितनी विचित्र और अद्भुत चीज़ों से हमारा परिचय हो रहा है।

क्या यह एक आश्चर्यजनक बात नहीं है कि यह दुनिया है और हम अस्तित्व में हैं। आख़िरत और परलोक भी एक लोक है। उसे मानने का अर्थ वास्तविकता की दृष्टि से इससे अधिक कुछ नहीं कि बस इसको मानिए ही नहीं, बल्कि मानते जाइए। यदि हम किसी चीज़ को मानते हैं, तो हमारा यह मानना उसी रूप में विश्वस्त हो सकता है जबकि हम उसे मानते रहें। परलोक को मानने का अर्थ यही तो है कि हम जिस चीज़ को मानते हैं उसपर क़ायम हैं।

हमने कल भी दुनिया को स्वीकार किया था और आज भी कर रहे हैं। क्या कल और आज में कोई तात्विक अन्तर आया है? सोचिए, आज से डेढ़-दो शताब्दी की दुनिया और आज की दुनिया में क्या कुछ परिवर्तन हुआ है। आज मानव अन्तरिक्ष में उड़ता दिखाई देता है। आज

वह घर बैठे सारी दुनिया से सम्पर्क स्थापित कर सकता है। अपने से बहुत दूर रहनेवाले आदमी से इस तरह बातचीत कर सकता है मानो उसके पास ही बैठा हुआ है। वह यात्रा की हालत में भी वार्ताक्रम को जारी रख सकता है। किन्तु इन परिवर्तनों के उपरांत भी हमें आज की दुनिया को मानने में कोई कठिनाई नहीं होती। क्योंकि हम समझते हैं कि इन अद्‌भुत परिवर्तनों ने जगत् और जीवन की कुछ सम्भावनाओं को ही व्यक्त किया है।

परलोक भी सम्भावना है

जगत् में जो अव्यक्त सम्भावना रखी गई है, वह व्यक्त होने ही के लिए है। अतः परलोक को मानना वर्तमान जगत् को ठीक रूप से समझने और उसकी सम्भावनाओं से परिचित होने का नाम है।

यह सच है कि परलोक वर्तमान लोक से अधिक विशाल और श्रेष्ठ है, किन्तु इसका अर्थ यह तो नहीं कि वह सम्भव नहीं। रहस्यमय और आश्चर्यजनक होने में एक कण और हिमालय जैसा विशाल पर्वत दोनों बराबर हैं। एक फूल उतना ही विस्मयकारी है जितना एक वृक्ष। जो व्यक्ति एक फूल के रहस्य को पा गया, उसने एक वृक्ष को ही नहीं बल्कि समूचे बाग़ को समझ लिया।

फिर इस भौतिक जगत् में मानव भी बसता है। मानव क्या है? चेतना और भावनाओं का एक विशाल संसार। इस प्रकार विशालता एवं श्रेष्ठता हमारे लिए कोई अपरिचित चीज़ नहीं है। जगत् और भावनाओं की इन दोनों दुनियाओं में कोई ऐसा विरोध नहीं है जिसपर क़ाबू न पाया जा सके। यदि ऐसा होता तो ये दोनों दुनियाएँ एक साथ एकत्र न हो पातीं। एक की मौजूदगी दूसरे को मिटा देती।

यह दुनिया भौतिकता की दृष्टि से ही नहीं, चेतना और भावनाओं की दृष्टि से भी सम्भावनाओं की दुनिया है। चेतना एवं भावनाओं का अस्तित्व जगत् में सबसे आश्चर्यजनक है। चेतना एवं भावना की अपनी

कुछ अपेक्षाएँ भी हैं, जिनका पूरा होना आवश्यक है। क्योंकि वे चेतना ही का अभिन्न अंग हैं और जिन्हें चेतना से अलग करके नहीं देखा जा सकता। सबसे कठिन बात चेतना का आविर्भाव था, किन्तु यह मुश्किल नहीं, क्योंकि प्रत्यक्षतः हम चेतना का अनुभव करते हैं। फिर चेतना को जो अपेक्षित है उसे असम्भव कैसे कहा जा सकता है! किसी की अपेक्षित चीज़ें या उसकी माँगें तो स्वयं उसके अपने विस्तार के अतिरिक्त कुछ और नहीं होतीं। रौशनी का फैलाव रौशनी के वुजूद में आने से ज़्यादा मुश्किल नहीं है, बल्कि कुछ मुश्किल नहीं है। रौशनी वुजूद में आ गई तो उसका फैलाव स्वयं रौशनी का स्वभाव है। रौशनी को उसके अपने स्वभाव से वंचित समझना स्वयं रौशनी का इनकार है।

जब यह सत्य है कि वर्तमान जगत् का अस्तित्व है तो इस जगत् को पूर्ण रूप से समझने की कोशिश करनी होगी, इसमें निहित सम्भावनाओं को जानना होगा। किसी वस्तु के अस्तित्व का प्रमाण हमें उसके लक्षणों से मिलता है। लक्षण वास्तव में सम्भावनाएँ ही होती हैं। यह अवश्य है कि कुछ सम्भावनाएँ तात्कालिक होती हैं और कुछ हमारी प्रतीक्षा चाहती हैं। कली में फूल की सम्भावना निहित होती है, उसे जाना जा सकता है, किन्तु इसके लिए तो प्रतीक्षा करनी ही होगी जब तक कि कली फूल बनकर अपनी सुगन्ध बिखेरने न लगे। फूल को न मानना वास्तव में कली को अधूरा मानना है। परलोक वास्तव में इस वर्तमान लोक की सम्भावना है। परलोक को मानना वास्तव में गहराई के साथ इस वर्तमान लोक को ही मानना है। जिस प्रकार फूल को मानना कली को मानने के अतिरिक्त कुछ और मानना नहीं है, केवल कली में निहित उसकी सम्भावना एवं विकास को स्वीकार करना है उसी प्रकार आख़िरत या परलोक को मानकर हम दुनिया की हर उस चीज़ को विश्वस्त बनाते हैं जिसे हम साधारण रूप में मान रहे होते हैं। आख़िरत की स्वीकृति का अर्थ यह हुआ कि दुनिया में हमने जो कुछ देखा है वह अविश्वस्त नहीं, बल्कि वह किसी स्थायी सच्चाई का

परिचायक है। आख़िरत या परलोक दूसरे शब्दों में यही है कि दुनिया में हम जो देख रहे हैं वह आधारहीन नहीं है, उसका कोई आधार अवश्य है। वास्तविकता तो यह है कि कोई भी चीज़ आधारहीन है ही नहीं।

कौन है जो शाश्वत एवं स्थायित्व को प्राप्त न करना चाहता हो? फिर भी यदि वह आख़िरत को नहीं मानता, तो इसका अर्थ इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं कि उसने आख़िरत की वास्तविकता और उसके अर्थ को जाना ही नहीं। यदि वह आख़िरत को जानता तो कभी भी उसका इनकार न करता, क्योंकि आख़िरत तो प्रत्येक वस्तु के स्थायी आधार की खोज है, और किसी खोज की उपेक्षा नहीं की जा सकती। आख़िरत तो हमारे स्वयं का विकास एवं विस्तार है। अपने ही विकास का विरोधी कौन होगा? यदि उसका विरोधी कोई है तो वास्तव में उसने जाना ही नहीं कि विरोध वह किस चीज़ का कर रहा है।

अध्याय-4

मन में झाँककर देखिए

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से विचार

मानव केवल भौतिक काया ही का नाम नहीं है, उसके साथ उसकी मनोवृत्तियाँ भी हैं, जो अभौतिक हैं।

मानव-जीवन में केवल यही नहीं कि खाने-पीने आदि की भौतिक आवश्यकताएँ ही पूरी होती हों, बल्कि यहाँ मनुष्य की मनोवृत्तियों और उसकी अभिरुचियों से सम्बन्धित आवश्यकताओं की परिपूर्ति की भी पूरी व्यवस्था है। बच्चे की जहाँ यह आवश्यकता है कि उसे पीने को दूध और लेटने को नर्म बिछौना और माँ की गोद मिले, वहीं उसकी यह भी आवश्यकता है कि उसे माता-पिता का प्यार और लोगों की सहानुभूति भी प्राप्त हो। हम देखते हैं कि उसकी प्रत्येक आवश्यकता की आपूर्ति आश्चर्यजनक ढंग से हो रही होती है, और यह चीज़ उसके शरीरिक एवं मानसिक विकास में पूर्णतः सहायक बनती है। यदि ऐसी पूर्ण व्यवस्था न होती तो बच्चे को सन्तुलित व्यक्तित्व कभी भी प्राप्त नहीं हो सकता।

इस जीवन्त उदाहरण से ज्ञात होता है कि संसार में मनोवैज्ञानिक (Psychological) नियम भी क्रियाशील है। मनोवैज्ञानिक नियम एक व्यापक नियम है। इसके दर्शन हमें पशु-पक्षी के जीवन तक में होते हैं। बल्कि यदि सूक्ष्मदृष्टि से काम लिया जाए तो वनस्पति जगत् भी इससे प्रभावित दृष्टिगोचर होगा। मधुमक्खी और भौरों को फूलों का मीठा रस ही नहीं चाहिए, बल्कि इसके साथ उनकी अभिरुचि के अनुकूल फूल तक पहुँचने के लिए कुछ मधुर संकेत भी अभीष्ट हैं। हम देखते हैं कि इस आवश्यकता की पूर्ति फूलों को रंग और सुगन्ध देकर की गई है।

मनोवैज्ञानिक नियम की व्यापकता को दृष्टि में रखते हुए जब हम जगत् और जीवन पर विचार करते हैं तो परलोक और आख़िरत के प्रति हमारी आस्था बढ़ जाती है। हम यहाँ कुछ उदाहरणों के माध्यम से अपनी बात को स्पष्ट करेंगे। जब हम धरती में बीज डालते हैं तो कुछ दिनों में वह बीज पौधे या वृक्ष के रूप में हमारे सामने खड़ा दिखाई देता है। सोचने की बात यह है कि क्या हमारी भावनाओं और कर्मों की हैसियत पेड़-पौधों के बीज से भी कम है कि पेड़-पौधों के बीज तो अंकुरित होकर एक दिन लहलहाते पौधों और वृक्षों का रूप धारण कर लें और हमारी भावनाएँ और कर्म यूँ ही विनष्ट होकर रह जाएँ और उनका कोई वास्तविक परिणाम हमारे सामने न आ सके?

हमारी मनोवृतियाँ निरर्थक कदापि नहीं हैं। अमरता और सफलता की मानवीय कामना अवश्य पूरी होगी। क़ुरआन कहता है कि एक ऐसा दिन अवश्य आएगा जब हमारी भावनाओं, अभिरुचियों और प्रयासों आदि का मूल्यांकन किया जाएगा और मूल्यानुसार उनको आदर या अनादर मिलेगा। संसार में तो केवल वह अवसर जुटाया गया है जिसमें हम विशुद्ध एवं सुन्दर भावनाओं एवं कर्मों को अर्जित कर सकें ताकि समय पर इनकी पूरी क़ीमत मिल सके। किसान उस समय अपने उन बीजों से उत्पन्न अन्न की रोटी नहीं खा रहा होता है जब वह उन बीजों को अपने खेत में डाल रहा होता है। इसके लिए उसे थोड़ी प्रतीक्षा करनी होती है और यह प्रतीक्षा उसके लिए असह्य नहीं, स्वाभाविक होती है। क़ुरआन ने स्पष्टतः कहा है :

> "तो क्या वह जानता नहीं जब उगलवा दिया जाएगा जो कुछ क़ब्रों में है और अर्जित कर लिया जाएगा जो कुछ सीनों (दिलों) में है।" (क़ुरआन, 100/9-10)
>
> "जिस दिन छिपी बातें परखी जाएँगी।" (क़ुरआन, 86/9)

मतलब यह है कि परलोक (आख़िरत) में केवल यही नहीं कि वह मनुष्य पुनः जीवित करके खड़ा किया जाएगा जिसके मृत शरीर को हम

मिट्टी में विलुप्त होते देखते हैं, बल्कि उसके दिल में छिपी अच्छी-बुरी भावनाओं तक को सामने ला दिया जाएगा। मानव का कोई छिपा रहस्य भी ऐसा न होगा जिसकी जाँच-पड़ताल न हो सके। उस दिन न तो किसी के लिए इसकी शिकायत का मौक़ा होगा कि उसकी भावनाओं और उसके हृदय-स्पन्दन को आदर न मिल सका और न कोई दुष्ट अपनी दुष्टता और अप्रिय मनोवृत्तियों और कुप्रयासों के दण्ड से अपनी रक्षा कर सकेगा। क़ुरआन ने स्पष्ट शब्दों में सचेत किया है :

> "जो कोई परलोक (आख़िरत) की खेती चाहता होगा, हम उसे उसकी खेती में बढ़ोत्तरी प्रदान करेंगे। और जो कोई दुनिया की खेती चाहता होगा, उसे उसमें से देंगे, और उसका परलोक में कोई हिस्सा न होगा।" (क़ुरआन, 42/20)

दुनिया में जो परलोक की खेती की तैयारी और कोशिश करेगा, उसके समक्ष परलोक लहलहाती खेती के सदृश आएगा और जिसे परलोक की कोई चिन्ता ही न होगी वह परलोक में घाटा और दुःख एवं संताप के अतिरिक्त कुछ प्राप्त न कर सकेगा।

परलोक का एक अत्यन्त मार्मिक एवं मनोवैज्ञानिक प्रमाण मनुष्य की वाक्शक्ति है। जिस प्रकार हमारे लिए यह एक सरल बात है कि हम अपने मुख से कोई बात कह दें, उसी प्रकार ईश्वर के लिए जगत् और जो कुछ जगत् में है उसका पैदा करना अत्यन्त सरल कार्य है। मनुष्य जो कुछ बोलता है वह उसे सुनता भी है। ऐसा नहीं होता कि वह अपनी आवाज़ सुन न सके। मनुष्य जो कुछ बोलता है, वह उसकी ओर लौटता है। वह उसे ख़ुद भी सुनता है। यह एक स्पष्ट नियम है जिससे सभी परिचित हैं।

इससे यह बात अत्यन्त स्वाभाविक प्रतीत होती है कि सभी लोग जिनको ईश्वर ने पैदा किया है वे ईश्वर की ओर लौटें। क्या यह सम्भव है कि ईश्वर बोलेगा, लेकिन सुनेगा नहीं? पैदा तो करेगा और देखेगा नहीं? यह कदापि सम्भव नहीं हो सकता। ईश्वर ने जब हमारी सृष्टि

की है तो हमें अवश्य उसके पास लौटना भी होगा। जब उसने हमें पैदा किया है तो वह अवश्य देखेगा भी कि हमने कैसा जीवन-यापन किया— उसकी इच्छानुसार या उसके विरुद्ध।

संसार की प्रत्येक चीज़ ऐसी बनाई गई है कि वह सत्य को चित्रित कर सके। संसार का प्रत्येक दृश्य सत्य एवं वास्तविकता का परिचय देता दिखाई देता है। इस विशेषता के बिना जगत् का वास्तविकता (Reality) से सम्पर्क स्थापित नहीं रह सकता और वास्तविकता से सम्पर्क के अभाव में जगत् का अस्तित्व ही शेष नहीं रह सकता। जगत् की वास्तविकता और स्थायी सत्य में सम्पर्क निरन्तर बना रहता है, इसी लिए क़ुरआन ने जगत् की सारी ही चीज़ों को सत्य की निशानी कहा है। फिर हमारी वाक्शक्ति क्यों ईश्वर की निशानी अर्थात् सत्य का पता देनेवाली वस्तु नही जब कि यह ईश्वर का ही एक महत्त्वपूर्ण उपहार है।

ईश्वर ने जगत् की रचना को अपने बोल से उपमित करके[1] और विश्वास दिला दिया है कि हमें विनष्ट होकर नहीं रहना है, बल्कि लौटकर उसी के पास जाना है। और यह उसी रूप में सम्भव हो सकता है जबकि जीवन मृत्यु पर समाप्त न हो बल्कि मृत्यु के बाद भी जीवन की सम्भावना बनी रहे। हमारी वाक्शक्ति परलोक या आख़िरत का एक अत्यन्त मार्मिक एवं मनोवैज्ञानिक प्रमाण है। क़ुरआन ने कहा है :

> "धरती में निशानियाँ हैं विश्वास करनेवालों के लिए, और तुम्हारे अपने भीतर भी। तो क्या तुम्हें सूझता नहीं? और आकाश में तुम्हारी रोज़ी है और वह कुछ जिसका तुमसे वादा किया जाता है। अतः आकाश और धरती के रब की क़सम! यह बात हक़ (सत्य) है जिस तरह कि तुम बोलते हो।"
>
> (क़ुरआन, 51/20-23)

---

[1] क़ुरआन में हैं : "किसी चीज़ के लिए हमारा कहना जब हम उसका इरादा करें यही है कि उससे कहते हैं : हो जा! बस वह हो जाती है।" (16/40)

परलोक और जीवन-मृत्यु के पश्चात् के लिए क़ुरआन का एक और सूक्ष्म एवं मनोवैज्ञानिक प्रमाण द्रष्टव्य है :

> "और याद करो जब इबराहीम ने कहा : ऐ मेरे रब! मुझे दिखा दे तू मुर्दों को कैसे ज़िन्दा करेगा? कहा : क्या तुझे विश्वास नहीं? उसने कहा : क्यों नहीं, किन्तु यह निवेदन इसलिए है कि मेरा दिल संतुष्ट हो जाए। कहा : अच्छा, तो चार पक्षी ले, फिर उन्हें अपने साथ भली-भाँति हिला-मिला ले, फिर उनका एक-एक भाग एक-एक पहाड़ पर रख दे, फिर उन्हें बुला, वे तेरे पास भागे चले आएँगे, और जान ले कि ईश्वर अत्यन्त प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है।" (क़ुरआन, 2/260)

मतलब यह है कि जिन पक्षियों को तुम अपने से हिला-मिलाकर परचा लेते हो, वे तुम्हारे बुलाने से तुम्हारे पास भागे चले आते हैं। तो क्या ईश्वर और उसके पैदा किए हुए लोगों के बीच इतना भी सम्पर्क न होगा कि वह उन्हें मृत्यु के पश्चात् फिर जीवन की ओर लौटा सके! ईश्वर जीवन और चेतना का स्रोत है। उसकी ओर पलटनेवाला स्वभावतः जीवन को प्राप्त होगा। प्रकाश की ओर लौटनेवाला क्या अन्धकार में रह सकता है, कभी नहीं!

ईश्वर का किसी को अपनी ओर बुलाना और उसे जीवन दान करना वास्तविकता की दृष्टि से एक ही बात है। जब मनुष्य को यह सामर्थ्य प्राप्त है कि वह अपने पालतू पशु-पक्षियों को अपने पास बुला सकता है, तो ईश्वर अपने पैदा किए हुए प्राणियों को क्यों न बुला सकेगा। हमसे हिले-मिले और परिचित होने के कारण जब पक्षी हमारी प्रेरणा पर दौड़ पड़ते हैं तो ईश्वरीय इच्छा का विरोधी तत्त्व कहाँ से आकर रुकावट बन सकता है, जबकि हमारे पास अपना कुछ नहीं। हमारे पास जो कुछ है, वह सब ईश्वर की इच्छा ही है।

जीवन-मृत्यु के पश्चात् के प्रति इस अत्यधिक सूक्ष्म एवं मनोवैज्ञानिक प्रमाण पर विचार करने से इस तथ्य पर भी प्रकाश पड़ता

है कि ईश्वर से हमारा सम्पर्क अत्यन्त मधुरिम भाव-भूमि पर स्थापित हुआ है। मृत्यु के पश्चात् जीवन-दान ईश्वर की ओर से एक प्रकार का बुलावा और आत्माओं का उसकी सेवा में शीघ्रतापूर्वक उपस्थित होना है। हमारी आत्मा के लिए जो आकर्षण परमात्मा में है, वह कहीं और नहीं हो सकता।

वर्तमान जीवन में एक संवेदनशील व्यक्ति के पास एक उत्सुकता होती है, एक चाह होती है। उसे ऐसा प्रतीत होता है कि सब कुछ प्रत्यक्ष नहीं है, कुछ अप्रत्यक्ष है। उस अप्रत्यक्ष के प्रति उसकी जिज्ञासा बनी रहती है। वह सोचता है कि यहाँ जो कुछ है वह अपूर्ण-सा है। न यहाँ का सुख पूर्ण है और न ही दुःख पूर्ण है। सारी चीज़ें किसी अव्यक्त की कहानी सुना रही हैं। वह सोचता है कि इस अनित्य के पीछे नित्य क्या है? इन चंचल और अस्थिर दृश्यों के पीछे वह अचंचल और स्थिर सत्य क्या है? उसे कोई सदैव बनी रहनेवाली स्थिति चाहिए जिससे सम्बद्ध होकर वह जीवन की दिशा निर्धारित कर सके।

यदि वर्तमान जगत् ही सब कुछ है तो मन और आत्मा को इससे पूर्ण सन्तोष क्यों नहीं मिलता? वह क्या चीज़ है जो उससे अभी छिपाई गई है? कुछ तो ज़रूर छिपाई गई है, अन्यथा यह विकलता क्यों होती।

जो लोग संसार ही को सब कुछ समझ बैठते हैं और जो कुछ उनको उनकी बाह्य आँखों से दिखाई देता है, उसके सिवा किसी और चीज़ को नहीं मानते, तो इसका मतलब यह कदापि नहीं होता कि उनके भीतर अतिरिक्त की कल्पना या कामना नहीं है। बल्कि वास्तव में वे निराशा के अन्धकार में साँस ले रहे होते हैं। उनमें यह जड़ता निराशा के कारण आती है।[1]

---

[1] महाभारत में कहा गया है—

प्रत्यक्षं कारणं दृष्ट्वा हैतुकाः प्राज्ञमानिनः।
नास्तीत्येवं व्यवस्यन्ति सत्यं संशयमेव च।। (13/162/5)

अर्थात् "अपने को बुद्धिमान माननेवाले हेतुवादी तार्किक प्रत्यक्ष कारण की ओर ही दृष्टि रखकर परोक्षवस्तु का अभाव मानते हैं। सत्य होने पर भी उसके अस्तित्व में संदेह करते हैं।" —संपादक

मानव यहाँ सदैव नहीं रहता, वह कहीं और से आकर यहाँ आबाद होता है और यहाँ वह कुछ दिन बिता कर पुनः कहीं और को प्रस्थान कर जाता है। यहाँ वह किसी कारणवश आता है। वस्तुतः वह किसी ऐसे लोक का वासी है जहाँ सत्य का राज्य है। जहाँ के वातावरण में किसी प्रकार का मालिन्य नहीं। जहाँ किसी प्रकार की अपूर्णता और विकार नहीं। उस लोक में प्रवेश पाने के लिए वह प्रवेश-पत्र लेने आया है। यहाँ वह इसलिए लाया गया है कि वह अपने को उस लोक के योग्य बना सके। मानव के अन्तर में वास करनेवाली विकलता के संदर्भ में क़ुरआन ने कहा है :

> ''जो चीज़ भी तुम्हें दी गई है वह सांसारिक जीवन की सुख-सामग्री और उसकी शोभा है; और जो कुछ ईश्वर के पास है वह उत्तम और अधिक स्थायी है। क्या तुम बुद्धि से काम नहीं लेते? भला वह व्यक्ति जिससे हमने अच्छा वादा किया है और वह उसे पानेवाला भी है, उस व्यक्ति जैसा हो सकता है जिसे हमने इसी सांसारिक जीवन की सुख-सामग्री दी हो, वह क़ियामत के दिन उन लोगों में सम्मिलित होनेवाला है जो (सज़ा के लिए) हाज़िर किए जाएँगे। (क़ुरआन, 28/60-61)

आदमी जब कहीं बाहर होता है, उसे घर की याद आती है। उसे जो सुख और सुविधाएँ अपने घर में प्राप्त होती हैं वे और कहीं नहीं मिल पातीं। घर में उसके अपने लोग और प्रियजन होते हैं। सब कुछ अपना होता है। अजनबी लोगों के बीच और अजनबी स्थान पर वह देर तक नहीं रह पाता। वह कुछ दिन बाहर रहता भी है तो इस आशा के सहारे कि उसे जल्द ही अपने घर लौटना है।

पक्षी सन्ध्या को अपने घोंसले में पहुँचकर बसेरा लेते हैं। घर से दूर काम करनेवाला शाम को घर आने के लिए बस का इन्तिज़ार करता है। ठीक इसी प्रकार मानव को भी अपने वास्तविक घर की ओर पलटकर जाना है। वह यहाँ सदैव अपने घर से दूर रहने के लिए नहीं आया

है। यदि कोई सदैव इसी दुनिया में रहने का इच्छुक है तो उससे बढ़कर अचेतन और शून्यहृदय कौन होगा? मनुष्य को तो चाहे-अनचाहे अपनी मंज़िल की ओर जाना ही होगा। वहाँ वह अपने ईश्वर के सामने उपस्थित होगा और अपनी पात्रता के अनुसार स्थान पाएगा। क़ुरआन इस बारे में स्पष्ट रूप से कहता है :

> "और आकाशों और धरती का राज्य ईश्वर ही का है, और फिर ईश्वर ही की ओर जाना है।" (क़ुरआन, 24/42)

यह जीवन की सच्चाई है। यही ज़िन्दगी की आबरू और जीवन की प्रतिष्ठा है। जिसे ईश्वर से मिलन की प्रतीति न हो, उसका हृदय भावशून्य ही रहता है। क्योंकि ईश-मिलन ही परलोक का मूल आशय है। इसी लिए क़ुरआन में विभिन्न स्थानों पर परलोक की अभिव्यंजना ईश-मिलन के शब्दों से की गई है। उदाहरणार्थ क़ुरआन की इन आयतों का अवलोकन करें :

> "निश्चय ही वे लोग घाटे में पड़े जिन्होंने ईश-मिलन को झुठलाया, यहाँ तक कि जब अचानक उनपर वह घड़ी आ जाएगी तो वे कहेंगे : हाय, अफ़सोस उस कोताही पर जो इसके विषय में हमसे हुई! और हाल यह होगा कि वे अपनी पीठों पर अपने (पापों और कुकृत्यों का) बोझ उठाए होंगे। देखो, कितना बुरा बोझ है जो ये उठाए हुए हैं!" (क़ुरआन, 6/31)
>
> "फिर हमने मूसा को किताब दी थी जो सुकर्मी व्यक्ति के लिए पूर्ण (नेमत और वरदान) और प्रत्येक (आवश्यक) चीज़ का विस्तृत वर्णन थी और मार्ग-दर्शन एवं दयालुता, ताकि वे अपने रब से मिलने का विश्वास करें।" (क़ुरआन, 6/154)
>
> "जो कोई ईश्वर से मिलने की आशा रखता है, तो ईश्वर का नियत समय आने ही वाला है, और वह सब कुछ सुनता, जानता है।" (क़ुरआन, 29/5)

"जो लोग हमसे मिलने की आशा नहीं रखते और सांसारिक जीवन पर राज़ी हो गए हैं और उसी पर संतुष्ट हो बैठे हैं, और जो हमारी निशानियों की ओर से असावधान हैं; ये वे लोग हैं जिनका ठिकाना आग (नरक) है, उसके बदले में जो वे कमाते रहे।" (क़ुरआन, 10/7-8)

मालूम हुआ कि यह नश्वर जीवन ऐसा नहीं है जिसे पाकर मनुष्य सन्तुष्ट हो जाए। जिस चीज़ से मनुष्य को वास्तविक संतुष्टि प्राप्त हो सकती है और जो चीज़ पाकर उसे अपार हर्ष का अनुभव हो सकता है वह तो कोई अन्य चीज़ है। वह है पारलौकिक एवं शाश्वत जीवन और ईश-मिलन का आनन्द। इस विषय की कुछ और आयतें देखिए :

"और जान रखो कि तुम उसी (ईश्वर) की सेवा में इकट्ठे किए जाओगे।" (क़ुरआन, 2/203)

"और वही है जिसने तुम्हारे लिए कान, आँखें और दिल बनाए– तुम कृतज्ञता थोड़ी ही दिखाते हो– वही है जिसने तुम्हें धरती में पैदा करके फैलाया, और उसी की ओर तुम जुटाए जाओगे।" (क़ुरआन, 23/78-79)

"क्या तुमने यह समझा था कि हमने तुम्हें व्यर्थ पैदा किया है, और यह कि तुम्हें हमारी ओर लौटना नहीं है?"

(क़ुरआन, 23/115)

आख़िरत अर्थात् परलोक वर्तमान लोक से असंबद्ध नहीं है, वरन् आख़िरत ही दुनिया का भाव है। परलोक ही इस लोक की आत्मा है। वर्तमान जगत् अपने में जो चीज़ छिपाए हुए है वह परलोक के भाव के अलावा कुछ और नहीं है। किन्तु कठिनाई यह उत्पन्न हो गई है कि इस भाव तक साधारणतया लोगों की दृष्टि नहीं जाती और लोग जगत् के बाह्य रूप में ही अटककर रह जाते हैं और जगत् की वास्तविक अनुभूति से अनभिज्ञ रहते हैं। वे वर्तमान के भी वास्तविक स्वरूप को नहीं देख पाते।

जिसने वर्तमान को समझ लिया उसके लिए परलोक को समझना कुछ मुश्किल नहीं होता। इसलिए कि वर्तमान लोक के समस्त संकेत परलोक ही की ओर परिलक्षित होते हैं। इहलोक (संसार) वास्तव में परलोक (आख़िरत) ही का परिचय देता है। वास्तविकता की दृष्टि से इहलोक परलोक के परिचय के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। इहलोक का अपना कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। वह तो परलोक की मात्र छाया ही है। जिन्होंने इहलोक को ही सब कुछ समझा, वे इसे सिरे से समझ ही न सके।

ऐसी स्थिति में वे इहलोक के प्रति जो नीति भी अपनाएँगे वह ग़लत ठहरेगी। इस दशा में उन्हें कभी भी जीवन का वास्तविक आनन्द नहीं मिल सकता। यह कितने दुःख की बात है। जो प्राप्त वस्तु को भी न पा सका, उसके लिए किसी अप्राप्त के पाने की सम्भावना ही कहाँ शेष रहती है? जो निकट और पास की चीज़ को न देख सका, वह किसी दूर की वस्तु को क्या देख सकेगा? क़ुरआन ने इसी दुखद स्थिति का उल्लेख इन शब्दों में किया है :

> "वे सांसारिक जीवन के केवल बाह्य को जानते हैं, किन्तु परलोक (आख़िरत) की ओर से वे बिल्कुल असावधान हैं। क्या उन्होंने अपने-आप में सोच-विचार नहीं किया? ईश्वर ने आकाशों और धरती को, और जो कुछ उनके बीच है, सत्य के साथ और नियत अवधि के लिए पैदा किया है, परन्तु अधिकतर लोग अपने प्रभु के मिलन का इनकार करते हैं।"
>
> (क़ुरआन : 30/7-8)

यह भी एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि मानव जैसे कुछ भले-बुरे कर्म करता है और जैसा कुछ वह शील-स्वभाव ग्रहण करता है, वैसा ही उसका व्यक्तित्व निर्मित होता है। उसके कर्म उससे अलग नहीं होते। वे उसके अन्तर पर अंकित हो सकते हैं। अच्छा भोजन करने और स्वास्थ्य के नियमों को अपनाने से मनुष्य का शरीर स्वस्थ और पुष्ट होता है

और हानिकारक भोजन करने एवं स्वास्थ्य के नियमों के प्रति लापरवाही बरतने से आदमी का स्वास्थ्य बिगड़ जाता है।

फिर यह बात भी है कि आदमी का न रोग छिपा रहता है और न उसकी अरोग्यता हीं छिप सकती है। इसी प्रकार आदमीं का जैसा व्यक्तित्व होता है वह भी छिपा नहीं रह सकता। लेकिन उसकी पूर्ण अभिव्यक्ति के लिए अनुकूल वातावरण अपेक्षित है। ये सम्भव नहीं कि कोई व्यक्ति उच्च प्रकृति का हो, उसका व्यक्तित्व महान् हो और वह सदैव छिपा ही रहे। उसे तो अवश्य ही प्रकाश में आना है। जब उससे कम क़ीमती चीज़ों को अभिव्यक्ति का अवसर मिलता है तो यह कैसे माना जा सकता हैं कि कोई मनुष्य उच्च स्वभाव का हो और यह चीज़ सदैव अज्ञात ही रहे और उसे सिरे से आदर न मिल सके।

इसी प्रकार यह बात भी समझ में आने की नहीं कि आदमी अपने बुरे स्वभाव और घृणित व्यक्तित्व को सदैव के लिए छिपाने में समर्थ हो सके। एक समय अवश्य ऐसा आना चाहिए जब इसका उद्‌घाटन हो कि कोई व्यक्ति कैसा है? यदि कोई व्यक्ति अत्यन्त पतित है और बुरे कर्मों ने उसकी आत्मा को अत्यन्त विकृत कर दिया है, तो क्या यह चीज़ कभी प्रकाश में न आएगी?

जब बुरा व्यक्ति अपने बुरे कर्मों की अमिट छाप लिए हुए होता है, तो इस छाप को हम अकारण कैसे कह सकते हैं? यदि यह अकारण नहीं है तो इसे अवश्य एक दिन व्यक्त होना है। अगर इसे व्यक्त होना न होता तो या तो बुरे कर्मों की आदमी के अन्तर पर सिरे से कोई छाप ही न पड़नी चाहिए थी और पड़ती तो शीघ्र ही मिट भी जाती। जब यह छाप मिटती नहीं तो अवश्य ही यह किसी समय ज़ाहिर होकर रहेगी। क़ुरआन में है :

> "हमने प्रत्येक मनुष्य का शकुन-अपशकुन उसकी अपनी गर्दन से बाँध दिया है और क़ियामत के दिन हम उसके लिए एक किताब निकालेंगे जिसको वह खुला हुआ पाएगा।" (क़ुरआन, 17/13)

मानव की एक अभिलाषा यह भी है कि उसे पूर्णता प्राप्त हो और शीघ्र प्राप्त हो। जो कुछ होना है जल्द हो जाए। प्रतीक्षा उसे अखरती है। विलम्ब उसे अप्रिय है। वह सोचता है, उसे कब तक इन्तिज़ार करना पड़ेगा? कब तक वह बाट जोहता रहेगा? वह शीघ्र ही मंज़िल तक पहुँचना चाहता है। वह चाहता है कि उसे वह कुछ शीघ्र ही दिख जाए जिसके देख पाने को उसका मन लालायित है। वह सोचता है जो सपने उसने पाल रखे हैं, कब पूरे होंगे, उसके समक्ष सत्य कब अनावृत होगा। सत्य के विरोध में जो यह नहीं मानते कि कुछ होना बाक़ी है, और उन्हें अपने कर्मों का बदला पाना है, वे भी कहते हैं कि कहाँ है सत्य? वह क्यों प्रकट नहीं होता? हमें हमारे दुष्कर्मों का दण्ड क्यों नहीं मिलता? ईश्वर की योजना को जब हम स्वीकार नहीं करते तो वह क्यों नहीं हमें यातना देता?

क़ुरआन कहता है कि सब कुछ शीघ्र ही होगा, किन्तु तुम शीघ्रता का अर्थ ही नहीं समझते। जो कुछ होना है, उसे हुआ समझो। ईश्वर का वादा पूरा होगा और जल्द पूरा होगा और तुम स्वीकार भी करोगे कि कोई विलम्ब नहीं हुआ। वह कहता है :

> "जिस दिन ईश्वर उन्हें (परलोक में) इकट्ठा करेगा, तो ऐसा जान पड़ेगा मानो वे दिन की एक घड़ी भर ठहरे थे। वे परस्पर एक-दूसरे को पहचान रहे होंगे, निश्चय ही वे लोग घाटे में रहे जिन्होंने ईश्वर से मिलने को झुठलाया, और वे मार्ग पानेवाले न थे।" (क़ुरआन, 10/45)
>
> "जिस दिन वह तुम्हें पुकारेगा और तुम उसकी प्रशंसा करते हुए उसकी आज्ञा को स्वीकार करोगे, और समझोगे कि तुम बस थोड़ी ही देर ठहरे रहे हो।" (क़ुरआन, 18/52)
>
> "जिस दिन वह (क़ियामत की) घड़ी आ खड़ी होगी अपराधी क़सम खाएँगे कि वे एक घड़ी से अधिक नहीं ठहरे, इसी प्रकार वे उलटे फिरे चले जाते थे।" (क़ुरआन, 30/55)

"(ईश्वर) कहेगा : तुम धरती में कितने वर्ष रहे? वे कहेंगे : एक दिन या एक दिन का कुछ भाग। गणना करनेवालों से पूछ लीजिए! वह कहेगा : तुम ठहरे थोड़े ही। क्या ही अच्छा होता कि तुम जानते होते।" (क़ुरआन, 23/112-114)

"वे परस्पर चुपके-चुपके कहेंगे : तुम बस दस ही दिन ठहरे हो। हम भली-भाँति जानते हैं जो कुछ वे बातें करेंगे, जबकि उसका सबसे अच्छी राहवाला कहेगा : तुम बस एक ही दिन ठहरे हो।" (क़ुरआन, 20/103-104)

"तो (ऐ नबी!) धैर्य से काम लो जैसे साहसी रसूलों ने धैर्य से काम लिया, और इनके लिए जल्दी न करो। जिस दिन ये लोग उस चीज़ को देख लेंगे जिसका इनसे वादा किया जाता है तो (ऐसा प्रतीत होगा) मानो ये केवल दिन में से एक घड़ी ठहरे हैं।" (क़ुरआन, 46/35)

"ज़िस दिन वे उसे देखेंगे तो (ऐसा लगेगा) मानो वे (दुनिया में) बस एक शाम या उसकी एक सुबह से अधिक नहीं ठहरे।"

(क़ुरआन, 79/46)

समय का आभास वास्तव में इस भौतिक जगत् की विशेषता है। मानव को समय का आभास केवल उस समय तक होता है जब तक वह इस संसार में दिक्काल (Space-Time) की सीमा में शारीरिक रूप से जीवन व्यतीत करता है। मरने के पश्चात्, जब केवल आत्मा ही शेष रहती है, समय की अनुभूति बाक़ी नहीं रहती। आगस्टन का विचार है कि समय भी ब्रह्माण्ड के साथ पैदा किया गया है। ईश्वर के अतिरिक्त कोई चीज़ अनादि नहीं है। ईश्वर समय की परिधि से परे है, ईश्वर के लिए न भूत है न भविष्य, बल्कि शाश्वत वर्तमान है। समय हमारी भावनाओं और विचार का एक पक्ष है।

आत्मिक लोक में समय की दूरी कहाँ। यही कारण है कि मृत्यु और क़ियामत के बीच का फ़ासला अत्यन्त अल्प और न्यून होगा। बस यह ऐसा

प्रतीत होगा जैसे कोई अभी सोया हो और शीघ्र ही उसकी नींद टूट गई हो। यही कारण है कि जब गुफावाले, जिनका वृत्तान्त क़ुरआन में बयान हुआ है,[1] जब एक दीर्घकाल के पश्चात् नींद से जागे तो उनके लिए यह लम्बी मुद्दत एक दिन से अधिक न थी। क़ुरआन में है :

> "उनमें से एक कहनेवाले ने कहा : तुम कितनी देर रहे? वे बोले : हम रहे होंगे एक दिन या एक दिन का कुछ हिस्सा।"
>
> (क़ुरआन, 18/19)

समय मात्र सापेक्ष (Relatives) है। अब तो यह स्वीकार किया जा चुका है कि दिक् और काल कोई तत्त्व नहीं, मात्र उपाधि है। देश और काल का व्यवधान हमारे मन में ही है। इस प्रकार समीप और दूर, अतीत और भविष्य मात्र मानसिक कल्पनाएँ हैं। वस्तुतः इनका कोई अस्तित्व नहीं है। जब वस्तुस्थिति यह है तो फिर तो क़ियामत की घड़ी अत्यन्त निकट हो सकती है। फिर यह आदमी की अल्पज्ञता है जो वह जल्दी मचाता है। जिस चीज़ के लिए वह उतावला हो रहा है, वह कदापि दूर नहीं है। जो कुछ विलम्ब है, वह मृत्यु के आने में है।

सांसारिक जीवन कुछ ऐसा अप्रिय बोझ नहीं है कि इसे जल्द-से-जल्द उतार फेंकने के लिए कोई आकुल हो। सांसारिक जीवन तो आनेवाले समय की तैयारी के लिए है। तैयारी का जितना अवसर भी हमें प्राप्त हो उसे ईश्वरीय वरदान समझकर स्वीकार करना चाहिए।

परलोक निकट ही है; दूर नहीं। परलोक को न माननेवाले यदि कहते हैं कि हमारे विरोध के कारण हमपर दण्ड का कोड़ा क्यों नहीं बरसता, तो वे देख लेंगे कि वे जिसके लिए उतावले हो रहे हैं, वह उन्हें शीघ्र ही प्राप्त होगा और वे लोग जो अपने पवित्र विचार, आस्था और सत्कर्म से ईश्वरीय कृपा के पात्र हैं, वे भी देख लेंगे कि ईश्वर ने उन्हें देर तक अपने स्वर्ग और जन्नत से दूर नहीं रखा। बल्कि उसने उन्हें

[1] दे. क़ुरआन सू. 18 (अल-कहफ़), आयत 9 से 26

शीघ्र ही वह सब कुछ दे दिया जिसके वे अधिकारी थे। मानव की कोई भी स्वस्थ अभिरुचि निरर्थक नहीं है। यदि वह अविलम्ब पूर्णकाम होना चाहता है, तो उसे विश्वास होना चाहिए कि ऐसा ही होगा।

परलोक-विरोधियों की मनोदशा

मनुष्य की अपनी कुछ मानसिक दुर्बलताएँ हैं जो सत्य के समझने में अवरोध उत्पन्न करती हैं। उसकी अपनी असमर्थता का एहसास कुछ इस प्रकार उसके मन और मस्तिष्क पर छाया रहता है कि अचेतन रूप में बहुत-से मामलों में ईश्वर को भी वह असमर्थ समझने लगता है। वह ईश्वर को किसी मामले में असमर्थ न भी समझे फिर भी वह समझने लगता है कि ईश्वर ऐसा नहीं करेगा। परलोक के विषय में भी मनुष्य की अपनी प्रवृत्ति काम कर रही होती है। किसी महान कार्य के सम्पन्न होने के लिए सामर्थ्य ही नहीं, सजगता एवं जागरूकता भी अपेक्षित है। इसी लिए किसी महान् कार्य के सम्पन्न होने की सूचना पाकर बहुत-से लोग सोचते हैं कि ऐसी सजगता और जागरूकता दुर्लभ है जो उस कार्य के लिए अपेक्षित है। वे उस सूचना पर ध्यान ही नहीं देते और उसे मानने से केवल इनकार ही नहीं करते, बल्कि उसकी हँसी तक उड़ाने से नहीं चूकते।

यहाँ वास्तव में उनकी अपनी एक विशेष प्रकार की संकुचित मनोवृत्ति काम कर रही होती है। ईश्वर की सजगता (Awareness) का भाव न होने के कारण वे ग़लत दिशा में सोचने लग जाते हैं। हालाँकि यदि वे खुली आँखों से इस जगत् का निरीक्षण करें तो यहाँ की प्रत्येक वस्तु ईश्वर की सजगता एवं जागरूकता का जीवन्त प्रमाण है। ऐसे ही लोग हैं जो परलोक सम्बन्धी सूचनाएँ सुनकर (क़ुरआन के शब्दों में) कहने लगते हैं :

> "क्या वास्तव में हम पुनः पहली हालत में कर दिए जाएँगे? क्या उस समय जब हम खोखली गलित-हड्डियाँ हो चुके होंगे?" (क़ुरआन, 79/10-11)

"कौन इन हड्डियों में जान डालेगा जबकि ये गल गई होंगी?"

(क़ुरआन, 36/78)

अर्थात् उन्हें यह विश्वास ही नहीं होता कि मरने के पश्चात् जबकि मानव-शरीर जाता सड़-गल या चिता में भस्म हो जाता है, केवल यही नहीं कि ईश्वर उन्हें दोबारा जीवित करके खड़ा कर सकता है, बल्कि वह अवश्य ही उन्हें पुनः जीवित करके खड़ा करेगा। इस अविश्वास और सन्देह के पीछे मनुष्य की यही दुर्बलता काम कर रही होती है कि वह अपनी मनोवृत्ति के द्वारा ईश्वरीय संकल्प और ईश्वरीय योजना को भी आंकने की चेष्टा करता है।

वह सोचता है कि सड़ी-गली हड्डियों की ओर कौन ध्यान देगा? किसे उनमें जान डालने की सुधि रहेगी? वह मानवीय-दुर्बलताओं की प्रतिच्छाया ईश्वर में देखने की भयंकर भूल कर जाता है। काश वह समझ सकता कि ईश्वर के साथ किसी प्रकार की दुर्बलता नहीं जोड़ी जा सकती! वह अत्यन्त सामर्थ्यवान और सजग है। जो कुछ उचित है, ईश्वर उसे करके रहेगा और जो अनुचित है उसकी उससे कदापि आशा नहीं की जा सकती। मानव को मरने के पश्चात् पुनः जीवित करने की उसे सामर्थ्य प्राप्त है। क़ुरआन में है :

"अतः मनुष्य को चाहिए कि देखे कि वह किस चीज़ से पैदा किया गया है। एक उछलते पानी से पैदा किया गया है, जो पीठ और पसलियों के मध्य से निकलता है। निश्चय ही वह उसके लौटा देने की सामर्थ्य रखता है।" (क़ुरआन 86/5-8)

अर्थात् मनुष्य क्यों नहीं विचार करता कि किसी जीते-जागते मनुष्य को जो यहाँ से चला गया हो वापस बुला लाना मुश्किल है या पानी की तुच्छ बूँद से जीता-जागता मानव बनाकर खड़ा करना मुश्किल है? मनुष्य जो हमारे बीच रह चुका हो, अपनी कार्य कुशलता से विविध प्रकार के काम करके जिसने अपने जीवन का परिचय दिया हो उसे वापस लाना अर्थात उसके जीवन का पुनः प्रदर्शन उतना कठिन कार्य नहीं ज़ितना

कठिन स्वयं जीवन का निर्माण है। और यह जीवन-निर्माण का कार्य हम नित्य होते देखते हैं। हम जगत् में यह देखते ही रहते हैं कि किस प्रकार ईश्वर अपनी शक्ति और सामर्थ्य से तुच्छ जल-कण (अर्थात् वीर्य) से जीते-जागते, प्रतिभाशाली से प्रतिभाशाली मनुष्य पैदा करता रहता है। जब वह यह मुश्किल कार्य कर सकता है तो वह उससे आसान काम क्यों नहीं कर सकता!

जो इसे असम्भव समझते हैं, वे वास्तव में जीवन और जगत् पर विचार ही नहीं करते, या फिर वे किसी पक्षपात और रूढ़िवादी परम्परा के मात्र अनुयायी हैं और अपनी बुद्धि से काम नहीं ले रहे हैं। न वे देखने की तरह आकाश को देखते हैं और न धरती को देखते हैं और न स्वयं अपने जीवन पर ही विचार करते हैं, फिर वास्तविकता और सच्चाई उनपर प्रकट भी कैसे हो? क़ुरआन उन्हें आमंत्रित करता है कि वे सोच-विचार से काम लें, ताकि उनपर सत्य का उद्घाटन हो सके :

> "क्या हम पहली बार पैदा करने में असमर्थ रहे, बल्कि ये लोग नवीन सृष्टि के विषय में सन्देह में हैं।" (क़ुरआन, 50/15)
>
> "क्या वह (मानव) टपकाई हुई वीर्य की बूँद न था? फिर हुआ एक लोथड़ा; फिर उसे आकार दिया; फिर नख-शिख से दुरुस्त किया, फिर उसकी दो जातियाँ बनाईं; पुरुष जाति और स्त्री जाति। क्या वह (ईश्वर) इसका सामर्थ्य नहीं रखता कि मुर्दों को जीवित कर दे?" (क़ुरआन, 75/37-40)

सोचने की बात है कि जब मानव को पहली बार पैदा करना अल्लाह के लिए कोई कठिन कार्य नहीं है तो यह कैसे समझ लिया जाए कि दोबारा पैदा करना उसके लिए मुश्किल हो जाएगा।

फिर मरने के पश्चात् मिट्टी में जो चीज़ मिल जाती है वह मानव का भौतिक शरीर है, न कि उसकी आत्मा या चेतनाशक्ति।[1] जब यह

---

[1] श्री भगवद्गीता में है–
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो, न हन्यते हन्यमाने शरीरे।। (2/20)

(शेष अगले पृष्ठ पर)

आत्मा सलामत रहती है, मानव-मृत्यु में वह केवल शरीर से विलग हो जाती है, तो फिर उसे शरीर धारण कराकर मूर्तरूप में पुनः लौटाया जाना असम्भव कैसे हो सकता है? जिस प्रकार हम आवश्यकता अनुसार अपना वस्त्र बदल देते हैं, किन्तु इससे हम कुछ दूसरे नहीं हो जाते, किसी महान उद्देश्य की पूर्ति के लिए हमारे प्राण इस शरीर रूपी वस्त्र को त्यागकर किसी सुन्दर और अत्यन्त अनुकूल शरीर की अपेक्षा करते हों जो अनन्त समय तक साथ दे सके, तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है। क़ुरआन में है :

> "(इनकार करनेवालों ने) कहा, क्या जब हम मर जाएँगे और मिट्टी हो जाएँगे (तो फिर हम जीवित होकर पलटेंगे)? यह पलटना तो बहुत दूर की बात है। हम जानते हैं जो कुछ धरती उन (के शरीरों) में से घटाती है। हमारे पास एक परिरक्षक किताब है।" (क़ुरआन, 50/3-4)

अर्थात् हमसे कुछ भी तो छिपा हुआ नहीं है। हम यह भी जानते हैं कि मिट्टी में क्या मिलता है और क्या नहीं मिलता? इसलिए हमारे सम्मुख यह आपत्ति करनी कि जब हम मिट्टी में मिल गए तो फिर हम पुनः कैसे जीवन पा सकेंगे, व्यर्थ है। हम किसी चीज़ से बेख़बर नहीं। हम ख़ूब जानते हैं कि धरती तो तुम्हारी आत्मा को हाथ भी नहीं लगाती। आत्मा तो हमारे ही क़ब्ज़े में रहती है। फिर तुम्हें पारलौकिक जीवन के विषय में सन्देह क्यों है? यदि तुम मिट्टी में भी मिल जाओ तो ईश्वर तुम्हें दोबारा जीवित करके खड़ा कर सकता है। क्या तुम्हें (अर्थात् तुम्हारे शरीर को) उसने पहली बार मिट्टी से पैदा करके खड़ा नहीं किया है?

(पिछले पृष्ठ का शेष)अर्थात् यह (आत्मा) अजन्मा, नित्य, सनातन (और) पुरातन है। शरीर के मारे जाने पर भी (यह) नहीं मारा जाता। —संपादक

अध्याय-5

एक और दुनिया

वैज्ञानिक दृष्टिकोण

पहले जो चीज़ें गहरे सोच-विचार और चिन्तन से मालूम होती थीं, उनमें से आज कितनी ही चीज़ों को आधुनिक विज्ञान ने गणित के आधार पर सिद्ध कर दिया है। वैज्ञानिक पद्धति के अनुसार वास्तविकता की खोज करनेवाले अब इस निष्कर्ष पर पहुँच रहे हैं कि हमारी यह दुनिया ही वास्तविक दुनिया नहीं है, बल्कि इसके समानान्तर एक और दुनिया भी अपना अस्तित्व रखती है। वह दुनिया हमारी दुनिया से कहीं अधिक सुदृढ़ और वास्तविक है, किन्तु वह हमारी दुनिया का प्रतिलोम जगत् (Antiworld) है, इसलिए यह दूसरी दुनिया हमें अपनी इन आँखों से दिखाई नहीं देती। जगत् की संरचना में एक व्यापक नियम दिखाई देता है, वह यह कि यहाँ हर वस्तु अपने जोड़े के साथ बनाई गई है। और अपने जोड़े के साथ मिलकर ही वह अपनी उपयोगिता का परिचय दे पाती है। फिर यह कैसे सम्भव हो सकता है कि यह व्यापक नियम इस जगत् के साथ चरितार्थ न हो। क़ुरआन ने कहा :

"और हमने हर चीज़ के जोड़े बनाए, ताकि तुम ध्यान दो।"

(51/49)

सन् 1932 ई॰ में सर्वप्रथम एण्टी इलेक्ट्रान की खोज हुई। इसकी खोज के॰ एण्डर्सन (K. Anderson) ने ब्रह्माण्ड किरण (Cosmic Rays) में की और इसका नाम पॉज़ीट्रान (Positron) रखा गया। यह पहला एण्टी पार्टिकल (Antiparticle) था जो मानव को ज्ञात हुआ। अब एक एटम के भीतर 35 से भी अधिक पार्टिकल का पता लगाया जा चुका है। परमाणु (Atom) के प्रत्येक कण (Particle) का एक एण्टी पार्टिकल होता है। प्रोटॉन (Proton) का एक एण्टी

प्रोटॉन और न्यूट्रॉन (Neutron) का एक एण्टी न्यूट्रॉन होता है। यही दशा दूसरों की भी है। केवल तीन अपवाद अब तक ज्ञात हो सके हैं, वे फ़ोटोन और दो प्रकार के मीसॉन (Meson) हैं, किन्तु इनकी हैसियत स्वयं अपने ही एण्टी पार्टिकल की है।

एण्टी पार्टिकल को मानने के पश्चात् स्वभावतः वैज्ञानिक चिन्तन एण्टी न्यूक्लियस और एण्डी ऐटम की ओर मुड़ गया। और यह अनुमान किया गया कि एक एण्टी हाइड्रोजन ऐटम में ऋणात्मक (Negative) विद्युत चार्ज रखनेवाला एक एण्टी प्रोटॉन होगा और उसके गिर्द धनात्मक चार्ज रखनेवाला इलेक्ट्रान घूम रहा होगा। अधिक समय नहीं लगा कि वैज्ञानिकों को इसको सिद्ध करने में सफलता मिल गई।

इसके पश्चात् हमारे समक्ष एण्टी पदार्थ (Anti-matter) और एण्टी जगत् (Anti World) की बात आती है। वास्तविकता यह है कि हमारी दुनिया में समस्त एण्टी पार्टिकल अस्थिर (Unstable) दशा में हैं। वे एण्टी जगत् में स्थिर (Stable) दशा में होंगे। इनकी अस्थिरता इस एण्टी जगत् के अस्तित्व की सूचक है। सर्वप्रथम सन् 1933 ई. में डिरॉक (Dirac) ने इस प्रकार के एक एण्टी जगत् की सम्भावना की चर्चा अपने भाषण में की थी। इस एण्टी जगत् का प्रकाश सम्भव है फ़ोटोन के रूप में हम तक पहुँच रहा हो और निरन्तर पहुँच रहा हो, किन्तु हम अपने पॉज़िटिव जगत् (Positive World) की वस्तुओं के प्रकाश से अलग करके उसे देखने में असमर्थ हैं। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से न्यूट्रीनो (Neutrino) को एण्टी जगत् के जानने में सहायक होना चाहिए मगर यह न्यूट्रीनो और एण्डी न्यूट्रीनो अत्यन्त पलायन-प्रकृति के कण हैं। उनको पकड़ पाना बहुत मुश्किल है।

कितने ही वैज्ञानिकों का विचार है कि एण्टी जगत् हमसे अलग और हमारी दुनिया के समानान्तर अपना वास्तविक अस्तित्व रखता है। ब्रह्माण्ड यदि पार्टिकल और एण्टी पार्टिकल की दृष्टि से ही नहीं बल्कि पदार्थ (Matter) और एण्टी पदार्थ (Anti-matter) की दृष्टि से भी

सापेक्ष (Relative) है, तो एक दुनिया ऐसी होनी आवश्यक है जो एण्टी पदार्थ की हो। डीराक के मतानुसार एण्टी जगत् में केवल पदार्थ निगेटिव (Negative) हैं, किन्तु बीजगणित के तरीक़ों की ऋणात्मक मात्राओं की तरह हम निगेटिव समय और निगेटिव स्थान (Negative Time and Negative Space) की सम्भावना को भी सोच सकते हैं, और सबसे अधिक विश्वास के योग्य वह एण्टी जगत् ही हो सकता है।

डॉक्टर नान (Dr. Naan) का मत है कि एण्टी जगत् का वर्णन भौतिक शास्त्र की ज्ञात धारणाओं और नियमों के द्वारा नहीं किया जा सकता। उन्हें पूर्ण विश्वास है कि वह दुनिया आज भी मौजूद है, किन्तु हमसे आज़ाद और हमारी दुनिया के समानान्तर उसका अपना एक अलग अस्तित्व है।

डॉक्टर नान के मतानुसार एण्टी जगत् में ऋणात्मक ऊर्जावाले आकार समय-विपरीत दिशा में गतिमान होते हैं। इस प्रकार वह समय-विपरीत जगत् है, कदाचित् दोनों दुनियाएँ एक-दूसरे से सम्बद्ध हैं।

ऊपर वैज्ञानिकों के जिस विचार का उल्लेख किया गया, उससे स्पष्टतः ज्ञात होता है कि इस जगत् के अतिरिक्त किसी अन्य जगत् की सम्भावना कोई अवैज्ञानिक बात नहीं है, बल्कि वैज्ञानिक दृष्टि से ही किसी ऐसे परिपूर्ण एवं सुदृढ़ जगत् का अस्तित्व अनिवार्य है। अतः परलोक की धारणा कोई ऐसी कल्पना नहीं है जिसे असम्भव कहा जा सके। मानव की खोज और चिन्तन किसी ऐसे जगत् की, जो वर्तमान जगत् से अधिक वास्तविक और स्थायी हो, पुष्टि करता है। वर्तमान जगत् को गहराई से देखनेवाले वैज्ञानिकों और विचारकों को यह स्वीकार करना पड़ रहा है कि इस भौतिक जगत् के पीछे एक और जगत् है। उस परोक्ष जगत् के अस्तित्व को माने बिना इस जीवन और वर्तमान जगत् को समझा ही नहीं जा सकता। सुप्रसिद्ध जीवविज्ञानी (Biologist) जे॰ एस॰ हॉल्डैन (J. S. Haldane) ने लिखा है :

"इस बात के मानने में भी कोई कठिनाई नहीं कि इस भौतिक ब्रह्माण्ड के पीछे एक और दुनिया है।" (The Philosophic Basis of Biology, Page 38.)

मैक्स प्लैंक (Max Planck) ने भी अपनी पुस्तक Universe in the light of Modern Physics (ब्रह्माण्ड आधुनिक भौतिकशास्त्र के प्रकाश में) में लिखा है :

> "इस अनुभूति की दुनिया के अतिरिक्त एक वास्तविक दुनिया भी है जो मानव के ज्ञान और कल्पनाओं की वशीभूत नहीं।"

इसी तरह के विचार ए. एस. एडिंगटन (A.S. Eddington) ने भी अपनी पुस्तक Science and the Unseen World, P.32 (विज्ञान और परोक्ष जगत्) में व्यक्त किए हैं।

सारांश यह है कि वर्तमान जगत् किसी वास्तविक और पूर्ण परोक्ष जगत् की ओर स्वयं संकेत करता है। उस जगत् को माने बिना वर्तमान लोक और जीवन के लिए कोई आधार शेष नहीं रहता। उस वास्तविक और परोक्ष जगत् को स्वीकार करने के पश्चात् परलोक के स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं रहती। डीन आइंजे (Dean Inge) ने लिखा है :

> "दिक्काल (Time-Space) का जगत् अवास्तविक संसार नहीं है, बल्कि यह वास्तविक जगत् का आंशिक प्रदर्शन है और उसका अपूर्ण प्रत्यक्षीकरण।" (God and the Astronomoers, p. 13)

यदि यह दुनिया किसी वास्तविकता का आंशिक प्रदर्शन है तो उसका पूर्ण या अपेक्षाकृत पूर्ण प्रदर्शन भी सम्भव है। और आखिरत या परलोक वास्तविकता का पूर्ण प्रदर्शन एवं प्रत्यक्षीकरण ही का दूसरा नाम है।

संभाव्यता (Probability) का वैज्ञानिक नियम

अब तक वैज्ञानिकों का कहना था कि जगत् भौतिक पदार्थों से निर्मित है और पदार्थ का स्वभाव हमें ज्ञात है। अतः हम किसी भी विषय में निश्चित रूप से अभिमत निर्धारित करने की स्थिति में हैं। किन्तु अब इस वैज्ञानिक दृष्टिकोण और मान्यता में परिवर्तन आ चुका

है और अब यह स्थिति नहीं रही। अब विज्ञान निश्चितता (Certainty) की बात न करके संभाव्यता (Probability) की बात करने लगा है। उसने निश्चयात्मकता का आग्रह छोड़ दिया। अब वह यह नहीं कहता कि ऐसा ही होगा। यदि वह कह सकता है तो यही कि 'उसकी' अपेक्षा 'इसकी' सम्भावना अधिक है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण में इस परिवर्तन का कारण है। पहले पदार्थ भरोसे के योग्य समझा जाता था और पदार्थ के गुणधर्म के प्रति एक प्रकार की निश्चितता की धारणा पाई जाती थी, किन्तु अणु-ऊर्जा के जो अन्तिम कण प्राप्त हुए हैं उन्होंने निश्चितता भी धारणा को खंडित करके अनिश्चितता की धारणा उत्पन्न कर दी है। उनके गुणधर्म (Character) के सम्बन्ध में पहले से कुछ नहीं कहा जा सकता। पहले विज्ञान भले ही कहता रहा हो कि हर पदार्थ एवं उनका गुणधर्म निश्चित है, लेकिन आज उसे यह पता लग गया है कि निश्चित होना बहुत ऊपरी बात थी। भीतर बहुत गहरा अनिश्चय विद्यमान है।

आप किसी अणु को लीजिए, कोई अणु भी ठोस नहीं है। एक-एक अणु पोरस (छिद्रमय) है। अणु के कणों के बीच भी अन्तर पाया जाता है। इस अन्तर को जोड़नेवाले अणु भी ठोस नहीं हैं। वे वास्तव में विद्युत कण हैं। उनको कण कहना भी उचित नहीं। कण के साथ तो पदार्थ का भाव जुड़ा हुआ होता है। कण एक जैसा रहता है, किन्तु वे निरन्तर बदलते रहते हैं। उनका स्वभाव लहर जैसा है। विज्ञान ने उसे क्वान्टा का नाम दिया है। क्वान्टा का अर्थ है कण और तरंग एक साथ। कभी वह तरंग की तरह व्यवहार करता है और कभी कण की तरह और कभी कोई भरोसा नहीं होता कि वह कैसा व्यवहार करेगा। जब जगत् के बुनियादी कण का व्यवहार ही अनिश्चयात्मक है तो विज्ञान किस आधार पर निश्चितता का दावा कर सकता है। यही कारण है कि निश्चितता (Certainty) को छोड़कर विज्ञान ने सम्भाव्यता (Probability) के नियम को मान लिया है।

अब विज्ञान का आग्रह यह नहीं है कि किसी चीज़ को मानने के किए सम्भावना से अधिक कोई चीज़ अपेक्षित है अन्यथा वह अवैज्ञानिक सिद्ध होगी। संभाव्यता के वैज्ञानिक नियम (Scientific Law of Probability) को देखते हुए कौन कह सकता है कि परलोक की धारणा का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है।

मज़े की बात तो यह है कि जगत् के इस अनिश्चयात्मकता के नियम के अन्तर्गत ही मानव को वर्तमान जगत् और जीवन की उपलब्धियाँ प्राप्त हुई हैं; फिर इसी नियम के अन्तर्गत आगे के लिए कोई आशा क्यों नहीं की जा सकती।

अनिश्चयात्मकता के नियम के पीछे एक गूढ़ रहस्य है। उस रहस्य को समझ लेना ज़रूरी है। गहराई में जाया जाए तो मानना पड़ेगा कि अनिश्चयात्मकता (Uncertainty) चेतना (Consciousness) का अंश है, जबकि निश्चयात्मकता (Certainty) पदार्थ का गुण है और अनिश्चितता वास्तव में चेतना का लक्षण है। जगत् में अनिश्चतता की प्रवृत्ति का साधारणतया हम अंकन नहीं कर पाते, इसी का कारण है। इसे सरल रूप से हम इस तरह समझ सकते हैं—

मान लीजिए हमें यह निश्चित करना हो कि किसी नगर में प्रतिदिन मरनेवालों की संख्या क्या है? ऐसे मौक़े पर हम सालभर का हिसाब लगाकर यह मालूम कर सकते हैं कि उस नगर में हर रोज़ कितने व्यक्तियों की मृत्यु होती है। हमारा यह हिसाब बड़ी हद तक सही होगा। और यदि हम किसी देश या पूरी दुनिया की प्रतिदिन की मृत्यु-दर मालूम करना चाहें तो निश्चितता और भी बढ़ जाएगी, हमारा हिसाब और ज़्यादा सही होगा। किन्तु किसी विशेष व्यक्ति के बारे में यदि हम यह निश्चय करना चाहें कि वह कब मरेगा, तो निश्चयात्मकता बहुत ही कम हो जाएगी और अनिश्चय अत्यधिक बढ़ जाएगा। कारण यह है कि भीड़ के बढ़ने से चीज़ में भौतिकता (Materiality) के गुणों का आभास होने लगता है। और किसी चीज़ में जितनी अधिक

वैयक्तिकता या निजीपन (Individuality) आता जाता है, उतनी ही ज़्यादा उसमें चेतना (Consciousness) के लक्षण दिखाई देने लग जाते हैं। पदार्थ का एक टुकड़ा तो करोड़ों अणुओं की एक भीड़ होता है, इसलिए उसके स्वभाव के बारे में हम निश्चय कर सकते हैं। क्योंकि यहाँ निश्चितता की सम्भावना अधिक होती है; किन्तु इससे आगे बढ़कर यदि हम इलेक्ट्रॉन को लें तो वहाँ वह भीड़ नहीं होती जो पत्थर में पाई जाती है। इलेक्ट्रॉन में वैयक्तिकता (Individuality) अधिक होती है। इसलिए उसके स्वभाव एवं व्यवहार के प्रति यदि हम कुछ कहना चाहें तो मुश्किल पेश आएगी। वह तो अपने व्यवहार के बारे में प्रतिक्षण स्वयं निश्चय करता दीख पड़ता है। पहले से उसके बारे में कुछ कहना अत्यन्त कठिन है।

अनिश्चितता चेतना का गुण है। यह चेतना का स्वभाव है कि वह स्वतंत्र रूप से व्यवहार करे। अनिश्चितता की दशा में प्रति क्षण कोई चेतना व्यवहारतः निर्णय करती लक्षित होती है। यह चेतना अत्यन्त विश्वव्यापी है, यद्यपि भीड़ में हमें उसका आभास नहीं हो पाता। यह हमारी दृष्टि की दुर्बलता है। जहाँ चेतना काम कर रही हो वहाँ हमारे लिए आशाएँ हैं। अन्धी-बहरी शक्ति से तो कोई आशा नहीं की जा सकती है, किन्तु चेतन-सत्ता से तो आशाएँ की जा सकती हैं। वह आशाओं को पूरा भी करेगी। क्योंकि आशा स्वयं उसी की प्रदत्त विधि है। अतः उसे निरर्थक नहीं कह सकते। मनुष्य की समस्त आशाओं का सारांश परलोक की आशा है। यह आशा अवश्य पूरी होगी।

अध्याय-6

रूपांतरण या महाप्रलय

प्रलय

वर्तमान जगत् के विषय में क़ुरआन बताता है कि यह शाश्वत् नहीं है। इसकी रचना सदैव के लिए नहीं हुई है। इसकी एक निश्चित आयु है और इसी आयु के भीतर इसकी उपयोगिता है। इसके पश्चात् जीवन एक ऐसे विकसित लोक की अपेक्षा करता है जिसमें वर्तमान लोक की न्यूनताओं की परिपूर्ति संभव हो सके। वर्तमान लोक की न्यूनताएँ क्या हैं? उनकी पूर्ति कैसे होगी? इसपर हम आगे चलकर विचार करेंगे।

वर्तमान जगत् का अध्ययन बताता है कि यहाँ किसी भी चीज़ को स्थायित्व प्राप्त नहीं है। प्रत्येक वस्तु की एक सीमित आयु है। अपनी आयु को पूरी करके प्रत्येक वस्तु नष्ट हो जाती है। सामूहिक रूप से यही मामला सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का भी है। इस ब्रह्माण्ड के विषय में यह विचार कि यह सदैव से है और इसी प्रकार सदैव ही बना रहेगा, मात्र भ्रम है। इस जगत् में जितनी भी शक्तियाँ काम कर रही हैं वे सब-की-सब सीमित हैं, उनका एक-न-एक दिन समाप्त हो जाना स्वाभाविक है। सूर्य जो प्रत्येक क्षण अपनी एक बड़ी शक्ति व्यय कर रहा है उसकी शक्ति भी एक दिन क्षीण हो जाएगी। यही स्थिति दूसरे ग्रहों और उपग्रहों की भी है। इसलिए सृष्टि की वर्तमान व्यवस्था सदैव बनी नहीं रह सकती।

भौतिकवाद इसपर निर्भर करता था कि पदार्थ नष्ट नहीं होता; केवल उसका रूप ही बदला जा सकता है। उसके गुणधर्म में कोई अन्तर नहीं होता। किन्तु विज्ञान ने आज इस धारणा को असत्य सिद्ध कर दिखाया है। अब यह बात स्पष्ट हो गई है कि ऊर्जा पदार्थ में

परिवर्तित होती है और पदार्थ पुनः ऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है। इसलिए पदार्थ या परमाणु को नित्य और अनश्वर समझना और उसपर अपनी कल्पनाओं का भवन खड़ा करना एक भ्रम के सिवा अपने में कोई वास्तविकता नहीं रखता। फिर विज्ञान ताप-गति का द्वितीय नियम (Second Law of Thermo Dynamics) ने, जैसा कि हम कह चुके हैं, यह सिद्ध भी कर दिया कि वर्तमान भौतिक जगत् न सदैव से है और न सदैव बना रहेगा। इसका एक आरम्भ है और अनिवार्यतः जगत् की वर्तमान व्यवस्था एक-न-एक दिन छिन्न-भिन्न होकर रहेगी। इस तरह विज्ञान क़ियामत अथवा प्रलय का इनकार नहीं, बल्कि पुष्टि करता है। अब प्रलय के सम्बन्ध में कुरआन की दी हुई सूचना और विज्ञान में कोई विरोध नहीं रहा। क़ुरआन कहता है कि वर्तमान जगत् की एक सीमित एवं निश्चित अवधि है। इसे अनश्वर समझना भूल है :

> "हमने आकाशों और धरती को और जो कुछ उन दोनों के मध्य है उसे केवल हक़ के साथ (सोद्देश्य) और एक नियत अवधि तक के लिए पैदा किया है।" (क़ुरआन, 46/3)
>
> "उसने (ईश्वर ने) सूर्य और चन्द्रमा को काम पर लगाया, हर चीज़ एक नियत समय तक के लिए चली जा रही है।" (क़ुरआन, 13/2)

क़ुरआन के अनुसार क़ियामत के आ जाने पर एक प्रलयकारी दृश्य उपस्थित होगा :

> "जब धरती थरथराकर काँप उठेगी और पहाड़ टूटकर चूर्ण-विचूर्ण कर दिए जाएँगे, फिर वे बिखरे हुए धूल होकर रह जाएँगे।" (क़ुरआन, 56/4-6)
>
> "जब तारे विलुप्त हो जाएँगे और जब आकाश फट जाएगा, और जब पहाड़ चूर्ण-विचूर्ण होकर बिखर जाएँगे।"
>
> (क़ुरआन, 77/8-10)

"जब सूर्य लपेट दिया जाएगा, और जब तारे धूमिल पड़ जाएँगे, और जब पहाड़ चलाए जाएँगे।" (क़ुरआन, 81/1-3)

"धरती और पहाड़ को उठाकर एक ही बार में चूर्ण-विचूर्ण कर दिया जाएगा।" (क़ुरआन, 69/14)

सारांश यह कि विश्व की वर्तमान व्यवस्था शेष न रहेगी। न सूर्य की यह रौशनी बाक़ी रहेगी और न ही ये अडिग पर्वत अपने स्थान पर स्थिर रह सकेंगे। एक महान विनाशकारी दृश्य होगा। सूर्य, चन्द्रमा और नक्षत्र सब-के-सब छिन्न-भिन्न हो जाएँगे।

प्रलय के पश्चात्

प्रलय का अर्थ यह कदापि नहीं कि सृष्टि का सिरे से अन्त हो जाएगा और न यह कि यह सब कुछ निरुद्देश्य होगा। बल्कि इस प्रलय के उदर से एक नए संसार और एक नए जीवन का उदय होगा, जैसा कि क़ुरआन ने स्पष्ट शब्दों में इसकी सूचना दी है :

"वह भीषण घटना! क्या है वह भीषण घटना? और तुम्हें क्या मालूम कि क्या है वह भीषण घटना? जिस दिन लोगों का हाल यह होगा जैसे बिखरे हुए पतंगे हों, और पहाड़ों का हाल यह होगा जैसे धुनके हुए रंग-बिरंग के ऊन हों। तो जिस किसी के वज़न (अर्थात् अच्छे कर्म) भारी होंगे, तो उसे एक मनभाता जीवन प्राप्त होगा। और रहा वह व्यक्ति जिसके वज़न हलके होंगे, तो उसकी माँ होगी गहरा खड्ड (अर्थात् उसका ठिकाना गहरा गड्ढा होगा)! और तुम्हें क्या मालूम कि वह क्या है? आग है दहकती हुई।" (क़ुरआन, 101/1-11)

"जिस दिन नरसिंघा में फूँक मारी जाएगी तो तुम गिरोह-के-गिरोह चले आओगे, और आकाश खुल जाएगा तो उसके द्वार-ही-द्वार होंगे। और पहाड़ चलाए जाएँगे तो वे बिल्कुल मरीचिका[1] होकर रह जाएँगे। (क़ुरआन, 78/18-20)

[1] धूप के समय मरुभूमि में वायु में प्रकाश किरणों के अपवर्तन के कारण ऐसा जान पड़ता है, मानो सामने जलाशय है, जिसमें दूर की वस्तुएँ प्रतिबिम्बित हो रही हैं। इस दृष्टिभ्रम को 'मरीचिका' कहते हैं। —संपादक

"वह दिन जब कि वे क़ब्रों से तेज़ी से साथ निकलेंगे, जैसे किसी निशान की ओर दौड़े जा रहे हैं, उनकी निगाहें झुकी होंगी, ज़िल्लत उनपर छा रही होगी, यह वह दिन होगा जिसका उनसे वादा है।" (क़ुरआन, 70/43-44)

"और नरसिंघा (सूर) में फूँक मारी जाएगी। फिर क्या देखेंगे कि वे क़ब्रों से निकलकर अपने रब (पालनकर्ता प्रभु) की ओर चल पड़े हैं। कहेंगे : 'ऐ अफ़सोस हमपर! किसने हमें सोते से जगा दिया। यह वही चीज़ है जिसका रहमान (कृपाशील ईश्वर) ने वादा किया था और रसूलों ने सच कहा था। बस एक ज़ोर की चिंघाड़ होगी। फिर क्या देखेंगे कि वे सब-के-सब हमारे सामने उपस्थित कर दिए गए।" (क़ुरआन, 36:51-53)

"जिस दिन यह धरती दूसरी धरती से बदल दी जाएगी, और (इसी प्रकार) आकाश भी, और सब-के-सब ईश्वर के सामने खुलकर आ जाएँगे, जो अकेला है और सबपर जिसका आधिपत्य है।" (क़ुरआन, 14/48)

मृत्यु और पारलौकिक जीवन के बीच का अन्तराल

मृत्यु और परलोक के बीच के अन्तराल में आत्मा किस स्थिति में होगी? यह प्रश्न भी ऐसा है जिसपर थोड़ा विचार कर लेना विषयन्तर न होगा। शरीर त्यागने के पश्चात् भी आत्मा जीवित रहती है। शरीर छूटने के बाद वह मर नहीं जाती। क़ुरआन से इसी बात की पुष्टि होती है। बुद्धि भी यह कहती है कि मृत्यु के पश्चात् आत्मा विनष्ट नहीं होती। यदि हम वैज्ञानिक ढंग से विचार करें तो हमें इसी बात का समर्थन करना होगा कि शरीर का त्यागना आत्मा की मृत्यु नहीं है। यह मृत्यु तो केवल शरीर पर घटित होती है। और मृत्यु से शरीर के भौतिक तत्त्व नष्ट नहीं होते। वे केवल प्राणहीन हो जाते हैं।

मानव-आत्मा को भले ही हम पूर्ण रूप से न समझ पाएँ और वह हमारे लिए एक रहस्य हो, किन्तु चेतना-शक्ति (Consciousness) से

सभी परिचित हैं। यह चेतना आत्मा का निकटतम रूप है। मरने के पश्चात् भी यह चेतना नहीं मरती। यह चेतना शेष रहती है। मनुष्य के व्यक्तित्व का सार-रूप चेतना ही है। चेतना के बिना किसी व्यक्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती। इसलिए कि उसके विनष्ट होने का प्रश्न ही नहीं उठता। जब मानव का व्यक्तित्व और चेतना मृत्यु के बाद भी शेष रहती है, तो पुनः उसे किसी देह या शरीर से जोड़ना असम्भव कैसे कहा जा सकता है।

इस जगत् में सर्वत्र यह नियम दिखाई देता है कि यहाँ कोई चीज़ बिल्कुल मिट नहीं जाती, केवल उसका रूप बदल जाता है। पदार्थ परमाणु में और परमाणु ऊर्जा में भले ही परिवर्तित हो जाए, किन्तु वह बिल्कुल ही अस्तित्वहीन नहीं हो जाता। फिर चेतना के सम्बन्ध में यह नियम भंग कैसे हो जाएगा? क्या हमारी चेतना जगत् में पाई जानेवाली एक वास्तविकता नहीं है? आख़िर यह कैसे मान लिया जाए कि हमारी भावनाएँ और हमारी चेतना मृत्यु के पश्चात् शेष न रह सकेंगी। क्या ऐसा इसलिए मान लिया जाए कि मृत्यु के पश्चात् मरनेवाले की चेतना या व्यक्तित्व का अनुभव हमें नहीं होता। लेकिन उसका आभासित न होना इस बात का प्रमाण नहीं कि उसका सिरे से कोई अस्तित्व ही नहीं रहता। सच्ची बात तो यह है कि किसी की आत्मा या चेतना का उसके जीवनकाल में भी हमें प्रत्यक्ष (Direct) अनुभव नहीं हो पाता। उसका अनुभव हमें बाह्य लक्षणों द्वारा ही होता है। चेतना कोई ऐसी वस्तु नहीं है जिसका परीक्षण किसी प्रयोगशाला में किया जा सके।

चेतना या मानव-व्यक्तित्व एक तथ्य है, कोई काल्पनिक वस्तु नहीं। मानवजाति की सभ्यताओं और संस्कृति में इसी चेतना का प्रदर्शन हुआ है। आधुनिक जगत् की सभ्यता में जो विज्ञान के चमत्कार वायुयान, राकेट, ट्रेन, रेडियो, टेलिविज़न इत्यादि के रूप में दिखाई देते हैं—क्या इसमें मानव-चेतना के योगदान को अस्वीकार करने का कोई साहस कर

सकता है? चेतना एक वास्तविकता है, स्वतः सिद्ध वास्तविकता। वैज्ञानिकों ने भी चेतना को अभौतिक वस्तु माना है और उसके अस्तित्व एवं वास्तविकता को स्वीकार किया है। सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक मैक्स प्लेनेक (Max Planek) ने कहा है :

> "मैं चेतना को आधार समझता हूँ। पदार्थ चेतनाजन्य है। हम चेतना से पीछे नहीं जा सकते।" (Philosophical Aspects of Modern Science – Joad)

वैज्ञानिक स्क्रोडिंजर (Schrodinger) का कहना है :

> "चेतना को कभी भौतिकवाद की परिभाषा में नहीं समझाया जा सकता, क्योंकि चेतना की वास्तविकता मौलिक एवं आधारभूत है।"

(Quoted by Marshall Urban in Human and Deity, P.366)

उन्नीसवीं शताब्दी में भौतिकवादी वैज्ञानिक दावा करते थे कि चेतना वास्तव में पदार्थ की पैदावार है, किन्तु कुछ काल पश्चात् के वही भौतिकवादी वैज्ञानिक मानने लगे कि चेतना पदार्थ की पैदावार नहीं, बल्कि पदार्थ स्वयं चेतना की पैदावार है। सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक जेम्स जींस (James Jeans) ने कहा :

> "चेतना की मौलिक वास्तविकता है और भौतिक जगत् का आविर्भाव उसी से हुआ है।"

ऑल्डस हक्ज़ले (Aldous Huxley) ने अपनी पुस्तक "Means and Ends" में प्रोफ़ेसर ब्रॉड (Broad) के विचार को व्यक्त करते हुए लिखा है :

> "यह बात माननी पड़ेगी कि मानव-आत्मा का मनुष्य के देह से अलग अपना स्वतन्त्र अस्तित्व है और वह शारीरिक जीवन की दशाओं एवं नियमों के अधीन नहीं है।"

पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक एफ़॰ डब्लू॰ बॉलिस (F. W. Ballis) ने निष्कर्ष रूप में कहा है :

Man is not a body consist in a mind. He is a mind Operating through a body. The body itself is the result of the activity of mind, is moulded by mind and Changed by mind.

"मनुष्य मन से साथ शरीर नहीं है। वह शरीर के द्वारा कार्य सम्पन्न करनेवाला मन है। शरीर तो स्वयं मानसिक कर्मों का परिणाम है, मन के द्वारा गठित हुआ है और मन के द्वारा परिवर्तित होता है।"

इन उद्धरणों से अनुमान किया जा सकता है कि चेतना भौतिक पदार्थ की अपेक्षा गौण या अमौलिक नहीं है। हमें यह भ्रम हो सकता है कि किसी मृत्यु के पश्चात् उसके शरीर के भौतिक तत्व तो शेष रहते हैं, किन्तु उसकी चेतना का कोई अस्तित्व शेष नहीं रहता। जब चेतना भौतिक वस्तुओं से कहीं अधिक सुदृढ़ और मौलिक है, फिर यह कैसे संभव हो सकता है कि मृत्यु के बाद भौतिक शरीर के अंश तो बाक़ी रहें और चेतना का कोई अस्तित्व शेष न रहे?

सर्वप्रथम तो यह समझना होगा कि किसी भी वस्तु का अस्तित्व वस्तुतः है क्या? Ponicare और Descrates आदि के मतानुसार किसी वस्तु के अस्तित्व का अर्थ है– "मात्र किसी के ख़याल में पाया जाना।" सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक Arther Eddington के विचार में चित्त (Mind) हमारे अनुभव की सर्वप्रथम और सबसे प्रत्यक्ष (Direct) वस्तु है। इसके अलावा जो कुछ भी है वह मात्र निष्कर्षण और कल्पना है। (See Modern Belcalf)

James Jeans के विचार में ब्रह्माण्ड एक महान सृष्टिकर्ता के चित्त (Mind) की रचना ही नहीं, बल्कि वास्तव में यह नाम है उस चित्त की मात्र कल्पनाओं और विचार का। समय (Time) की तरह स्थान (Space) को भी सापेक्ष समझा जाने लगा है। कुछ विचारकों का कहना है कि स्थान (Space) केवल अन्तस (Mind) में ही होता है, उसका कोई बाह्य अस्तित्व नहीं है। कुछ विचारक स्थान (Space) की व्याख्या

इस प्रकार करते हैं कि स्पेस अनुभूति सम्बन्धी तत्त्व है। इसके बिना अनुभूति नहीं होती। अनुभूति से भिन्न या अलग इसका अपना कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं होता।

सारांश यह कि चेतना जगत् की कोई उपेक्षित वस्तु कदापि नहीं है, बल्कि चेतना ही जगत् का आधारभूत स्तम्भ है। अतः वैज्ञानिक दृष्टिकोण से यह समझ में आने की बात नहीं है कि जगत् की दूसरी वस्तुओं का अस्तित्व तो नष्ट न हो और चेतना अपना अस्तित्व खो बैठे।

मृत्यु के पश्चात् आत्मा रहती है या नहीं, इस सम्बन्ध में लोगों के कुछ अनुभव भी हैं; जिनसे इसका पता चलता है कि मृत्यु के बाद भी आत्मा जीवित रहती है। इस प्रकार अब मृत्यु के बाद या शरीर के बिना आत्मा के अस्तित्व का पाया जाना अवैज्ञानिक बात नहीं रही। इस क्रम में आत्मिक अनुसन्धान (Psychic Research) के विवरण (Reports) अत्यन्त अद्भुत और आश्चर्यजनक हैं।[1]

क़ुरआन से भी इसी बात की पुष्टि होती है कि आत्मा मरने के पश्चात् जीवित रहती है और मनुष्य अपने व्यक्तित्व के साथ बाक़ी रहता है। उदाहरणार्थ—

> "जो लोग अपने आपपर अत्याचार करते हैं, जब फ़रिश्ते उनके उस दशा में प्राण-ग्रस्त कर लेते हैं तो कहते हैं : तुम किस दशा में पड़े रहे? वे कहते हैं : हम धरती में निर्बल और बेबस थे।

---

[1] इस संबंध में और अधिक विस्तृत ज्ञान हेतु निम्नलिखित पुस्तकों का अध्ययन करें :

· Psychiatry Today — by Dr. D.D.S. Clark N.P.
· Fifty Years of Psychical Recearch, by : Harry Price
· Varieties of Religious Experience — by : William James
· Exploring the Psychic World — by : Butter
· Survival of Man — by : Oliver Lodge
· We Donot Die. — by : S. Desmond
· The Dead Have Never Died — by : Randell
· Science and the Unseen World. — by : Arthur Edington
· On the Age of the Etheric — by : Arthur Findlay
· A New Approach to Psychical Research — by : Antony Flew
· The Death is not the End — by : B. Abdy Collins, C.I.E.
· The Ringing Rediance — by : Sir Colin Garbett, K.C.I.E., C.S.I., C.M.G.

फ़रिश्ते कहते हैं : क्या ईश्वर की धरती विशाल न थी कि तुम घरबार छोड़कर कहीं चले जाते? तो ये वही लोग हैं जिनका ठिकाना जहन्नम (नरक) है। — और वह बहुत ही बुरा ठिकाना है।" (क़ुरआन, 4/97)

"और फ़िरऔनियों (अर्थात फ़िरऔन और उसके अनुयायियों) को बुरी यातना ने आ घेरा; अर्थात् आग ने; जिसके सामने वे प्रातःकाल और सायंकाल पेश किए जाते हैं। और जिस दिन क़ियामत की घड़ी घटित होगी (कहा जाएगा) : फ़िरऔन के लोगों को कठोर यातना में प्रविष्ट कराओ।"

(क़ुरआन, 40/45-46)

इन आयतों से स्पष्ट होता है कि मरने के बाद भी आत्मा रहती है और मनुष्य की चेतना-शक्ति काम करती रहती है। यदि ऐसा न होता तो फ़िरऔन और उसके लोगों के मारे जाने के बाद उन्हें नरक-अग्नि दिखाने का क्या अर्थ हो सकता है? क़ुरआन में है :

"(ये धर्म-विरोधी माननेवाले नहीं हैं) यहाँ तक कि जब उनमें से किसी की मौत आ जाएगी तो वह कहेगा : ऐ मेरे रब! मुझे (संसार में) लौटा दे—ताकि जिस (संसार) को मैं छोड़ आया हूँ उसमें अच्छा कर्म करूँ। कदापि नहीं, यह तो बस एक (व्यर्थ) बात है जो वह कहेगा (जो पूरी न होगी)। और उन (मरनेवालों) के पीछे से लेकर उस दिन तक एक रोक लगी हुई है जब वे दोबारा उठाए जाएँगे। (क़ुअरान, 23/99-100)

"ऐ ईमान लानेवालो! ऐसे लोगों से मित्रता न करो जिनपर ईश्वर का प्रकोप हुआ है, वे आख़िरत (परलोक) से निराश हो चुके हैं, जिस प्रकार इनकार करनेवाले क़ब्रवालों से निराश हो चुके हैं। (क़ुरआन, 60/13)

क़ुरआन में अन्य स्थान पर आया है :

> कहा गया : प्रवेश करो जन्नत में। उसने कहा : क्या ही अच्छा होता कि यदि मेरी जाति के लोग जानते कि मेरे प्रभु ने मुझे क्षमा कर दिया। (क़ुरआन, 36/26-27)

इन आयतों से ज्ञात होता है कि मरने के पश्चात् मनुष्य का बिल्कुल अन्त नहीं हो जाता। मृत्यु के पश्चात् मनुष्य की आत्मा शरीर के बिना भी जीवित रहती है। बातचीत करती और सुनती है। चेतना इच्छाओं एवं कामनाओं आदि से संयुक्त होती है। ख़ुशी और ग़म दोनों ही का अनुभव उसे होता है। दुनियावालों और अपनी जाति के लोगों के साथ उसका हार्दिक सम्बन्ध भी शेष रहता है। अगर यह बात नहीं होती तो ईश्वर के आज्ञाकारी और पुण्यात्मा व्यक्ति को न तो जन्नत की शुभ-सूचना दी जा सकती थी और न वह यह कामना कर सकता था कि उसके जाति-बन्धुओं को परमगति और उसके सुखमय परिणाम की सूचना मिल जाए। क़ुरआन में कहा गया है :

> "तुम उन लोगों को जो ईश्वर के मार्ग से मारे गए हैं मुर्दा न समझो, बल्कि वे अपने प्रभु के पास जीवित हैं, रोज़ी पा रहे हैं।" (क़ुरआन, 3/169)

मालूम हुआ कि मृत्यु के बाद केवल यही नहीं कि आत्मा जीवित रहती है, बल्कि उसे उसके प्रभु की ओर से जीवनवृत्ति और प्रिय आहार भी मिलता है, किन्तु शर्त यह है कि वह अपने सांसारिक जीवन में अपनी पात्रता सिद्ध कर दे। पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के कथनों से भी ज्ञात होता है कि मृत्यु और परलोक के बीच के अन्तराल में नेक आत्माओं को हर प्रकार का सुख प्राप्त होता है और खाने-पीने, मनोरंजन, बोलचाल आदि का उन्हें पूरा अवसर प्राप्त होता है।

यहाँ यह प्रश्न किया जा सकता है कि आत्मा को रोज़ी और खाने-पीने आदि जैसे सुखों से क्या संबंध? लेकिन ऐसे प्रश्नों के पीछे कोई गहरा सोच-विचार नहीं पाया जाता। इस प्रकार के सुख या दुख का उदाहरण स्वयं हमारे वर्तमान जीवन में ही विद्यमान है। क्या हम स्वप्न में

केवल बाह्य जगत् से विलग होने पर भी आनन्द नहीं लेते हैं? क्या यह सत्य नहीं है कि स्वप्न में हमें बोलने-चालने, चलने-फिरने, खाने-पीने आदि का आनन्द प्राप्त होता है? यदि हमारा यह स्वप्न भंग न हो तो क्या स्वप्न की चीज़ें हमें वास्तविक प्रतीत न होंगी? क्या अनुभूति से बढ़कर कोई चीज़ हमारे लिए निकट की और वास्तविक हो सकती है?

जाग्रत अवस्था में भी जो चीज़ प्रत्यक्षतः (Directly) हम तक पहुँची है, वह अनुभूति ही तो है। चेतना और अनुभूति की दृष्टि से देखें तो जाग्रत और स्वप्न-अवस्था के सुखों और आनन्दों में सहजातीयता (Familiarity) पाई जाती है। इस सहजातीयता की पुष्टि आज के कितने ही विचारकों और वैज्ञानिकों की धारणाओं से भी होती है। हम ऊपर डिकार्ट, जेम्स जींस आदि के विचार प्रस्तुत कर चुके हैं, जिनके मतानुसार बाह्य जगत् और वस्तुओं के अस्तित्व का अर्थ मात्र किसी के ख़याल में पाए जाने से कुछ भिन्न नहीं है।

किसी ने बहुत सही कहा है कि मृत्यु के पश्चात् और क़ियामत के दिन या परलोक में प्रवेश पाने से पहले अपराधी व्यक्ति की आत्मा की स्थिति उस डरावने स्वप्न की-सी होती है जिसे कोई मृत्युदण्ड पानेवाला व्यक्ति उस रात को देखता है जिसकी सुबह को उसे फाँसी दी जानेवाली होती है। इसके विपरीत पुण्यात्मा व्यक्ति की आत्मा की स्थिति ऐसी होती है जैसे कोई व्यक्ति अपने अच्छे और सुन्दर कार्यों के पश्चात् आमंत्रित होकर सरकारी मुख्यालय पर पहुँचा हो और सम्मेलन की तिथि से एक दिन या कुछ घण्टे पूर्व आशाओं और कामनाओं के सुहावने स्वप्न देख रहा हो। ऐसे व्यक्ति के आनन्द का क्या कहना!

अध्याय-7

दूर तनिक देखो, क्या दिखता

आख़िरत की दुनिया और क़ुरआन

क़ुरआन के अध्ययन से मालूम होता है कि आख़िरत (परलोक) का दुनिया से गहरा सम्बन्ध है। आख़िरत इस दुनिया का विकसित रूप है। यहाँ हमें जो कमी दिखाई देती है वह वहाँ पूरी कर दी जाएगी। जो चीज़ें यहाँ छिपी हुई हैं, वे वहाँ खोल दी जाएँगी। वहाँ व्यक्ति को उसकी अपनी उस पात्रता के अनुसार जीवन प्राप्त होगा जिसकी पुष्टि उसने वर्तमान जीवन में अपने विचार, भावना, कर्म आदि से की होगी। इस दृष्टि से आनेवाला दिन हिसाब का दिन होगा। प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्मों का पूरा फल वहाँ पाएगा। क़ुरआन में है :

> "फिर जब सूर (नरसिंघा) में फूँक मारी जाएगी तो उस दिन उनके बीच रिश्ते-नाते शेष न रहेंगे, और न वे एक-दूसरे को पूछेंगे। फिर जिनके अच्छे कर्म भारी हुए, तो वही हैं जो सफल होंगे। रहे वे लोग जिनके अच्छे कर्म हल्के हुए, तो वही हैं जिन्होंने अपने आपको घाटे में डाला, वे सदैव नरक (जहन्नम) में रहेंगे।" (क़ुरआन, 23/101-103)

क़ुरआन में क़ियामत, प्रलय आदि के बयान में सूर फूँकने का उल्लेख बार-बार हुआ है। सूर का शाब्दिक अर्थ नरसिंघा (Trumpet) है। नरसिंघा फूँकने का उल्लेख बाइबल में भी मिलता है। नरसिंघा फूँकने का वास्तविक आशय राजसी-प्रताप का प्रदर्शन, असाधारण ख़तरा और भय की उद्घोषणा है। क़ियामत और आख़िरत का दिन अत्यन्त भय और आशंका का होगा। यह अन्तिम निर्णय का दिन होगा। ईश्वर का प्रताप पूर्ण रूप से उस दिन ज़ाहिर होगा। उस दिन शरण उन्हीं लोगों को मिल सकेगी और वही लोग भय और दुख से निश्चिन्त हो सकेंगे, जिनसे उनका प्रभु प्रसन्न होगा। दुनिया में मनुष्य अकेला ही

आता है। उस दिन भी वह अपना उत्तरदायी स्वयं होगा। क़ुरआन में कहा गया है :

"और (ईश्वर कहेगा,) अब तुम वैसे ही अकेले हमारे पास आ गए जैसा हमने तुम्हें पहली बार पैदा किया था, और जो कुछ हमने तुम्हें दिया था वह अपने पीछे छोड़ आए, और हम तुम्हारे साथ तुम्हारे उन सिफ़ारिश करनेवालों को भी नहीं देख रहे हैं जिनके विषय में तुम दावे से कहते थे कि तुम्हारे मामले में वे भी (ईश्वर के) शरीक हैं। तुम्हारे पारस्परिक संबंध टूट चुके हैं और जिनका तुम दावा करते थे वे सब तुमसे गुम हो गए।"
(क़ुरआन, 6/94)

तुम्हारे नाते-रिश्ते 'क़ियामत' के दिन काम न आएँगे और न तुम्हारी औलाद काम आएगी। वह तुम्हारे बीच जुदाई डाल देगा। और परमेश्वर देखता है जो कुछ तुम करते हो।"
(क़ुरआन, 60/3)

"जिस दिन आदमी आपने भाई, अपनी माँ, अपने बाप, अपनी संगिनी (पत्नी) और अपने बेटे से भागेगा, उस दिन उनमें से हर व्यक्ति को ऐसी पड़ी होगी कि वही उसके लिए काफ़ी होगी।"
(क़ुरआन, 80/34-37)

"निस्सन्देह कान और आँख और दिल, उनमें से प्रत्येक के विषय में पूछा जाएगा।" (क़ुरआन, 17/36)

"प्रत्येक व्यक्ति को, जो कुछ उसने कमाया होगा, पूरा-पूरा मिल जाएगा और उनके साथ कोई अन्याय न होगा।"
(क़ुरआन, 3/25)

"जिस दिन प्रत्येक व्यक्ति अपनी की हुई भलाई और अपनी की हुई बुराई को सामने मौजूद पाएगा।" (क़ुरआन, 3/30)

"वहाँ प्रत्येक व्यक्ति अपने पहले के किए हुए कर्मों को स्वयं जाँच लेगा, और सब ईश्वर, अपने वास्तविक स्वामी की ओर

फेरे जाएँगे और जो कुछ झूठ वे गढ़ा करते थे, सब उनसे जाता रहेगा।" (क़ुरआन, 10/30)

इन आयतों से स्पष्ट है कि वह दिन हिसाब-किताब का दिन होगा। मनुष्य का वर्तमान जीवन वास्तव में उसी दिन की तैयारी के लिए है, न कि इसलिए कि आदमी अपने दायित्व को भूलकर जो उसके मन में आए करता चला जाए।

क़ुरआन से यह भी मालूम होता है कि मनुष्य को उस दिन जो दण्ड या पुरस्कार दिया जाएगा वह उसके बुरे या भले कर्मों के अनुसार होगा :

"और जिसने मेरी याद से मुँह मोड़ा तो उसका जीवन संकीर्ण होगा, और क़ियामत के दिन हम उसे अन्धा उठाएँगे। वह कहेगा : ऐ मेरे रब! तूने मुझे अन्धा क्यों उठाया, जबकि मैं आँखोंवाला था? वह (ईश्वर) कहेगा : इसी प्रकार (तू संसार में अंधा बना रहता था।) तेरे पास मेरी आयतें आई थीं तो तूने उन्हें भुला दिया था। उसी प्रकार आज तुझे भुलाया जा रहा है।"

(क़ुरआन, 20/124-126)

अर्थात् जो संसार में अपनी सूझ-बूझ से काम न लेगा, वह वहाँ आँख से भी अन्धा होगा। जो यहाँ अल्लाह की आयतों और उसके आदेश को भूल बैठेगा, वहाँ ईश्वरीय दयालुता भी उसे भूल जाएगी। उस पर कोई दया न की जाएगी। क़ुरआन में एक अन्य स्थान पर है :

"और जो यहाँ अन्धा (बना) रहा, परलोक (आख़िरत) में भी वह अन्धा ही रहेगा।" (क़ुरआन, 17/72)

हदीस शास्त्र में है :

"जो मानवों पर दया करेगा, ईश्वर उसपर दया करेगा।"

(तिरमिज़ी)

क़ुरआन में है कि जो लोग ईश्वर को भूल बैठे हैं और लोगों को मुहताजों को खिलाने पर नहीं उभारते, उन्हें आख़िरत में घाव का धोवन खाने को मिलेगा :

> "(हुक्म होगा,) पकड़ो उसे और उसकी गरदन में तौक़ डाल दो, फिर उसे भड़कती हुई आग में झोंक दो, फिर उसे एक ऐसी ज़ंजीर में जकड़ दो जिसकी माप सत्तर हाथ है। वह न तो महिमावान ईश्वर (अल्लाह) पर ईमान रखता था और न मुहताज को खाना खिलाने पर उभारता था। अतः आज उसका यहाँ कोई घनिष्ठ मित्र नहीं, और न ही धोवन के सिवा कोई भोजन है, उसे अपराधियों के अतिरिक्त कोई नहीं खाता।" (क़ुरआन, 69/30-37)

जिन लोगों को ईश्वर ने यहाँ सब कुछ दे रखा है, महल और कोठी रखते हैं, बाग़ भी हैं, सम्मान और आदर भी प्राप्त है, किसी प्रकार की तकलीफ़ नहीं है, यदि वे ईश्वर का उपकार नहीं मानते, दुनिया में उन्हें जो कुछ मिला है उसका हक़ अदा नहीं करते और अल्लाह की आयतों का इनकार करते हैं तो वे अपनी करतूतों के अनुकूल दण्ड के भागी होंगे :

> "गर्म हवा और खौलते हुए पानी में होंगे; और काले धुएँ की छाँव में, जो न ठण्डी होगी और न सुखदायक। निश्चय ही वे इससे पहले सुख-सम्पन्न थे।" (क़ुरआन, 56/42-45)

हदीस में है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने कुछ ऐसे लोगों को देखा जिनका आधा धड़ सुन्दर और आधा कुरूप था। ये वे लोग थे जिनके कुछ काम अच्छे और कुछ बुरे थे।

इससे स्पष्ट है कि अच्छे कर्म सुन्दर और बुरे कर्म कुरूपता के रंग में प्रकट होंगे।

नबी (सल्ल॰) ने कहा है :

"जो व्यक्ति अकारण भिक्षा माँगता है, परलोक (क़ियामत) में वह उठेगा तो उसके मुँह पर मांस न होगा।"

(हदीस : तिरमिज़ी)

इस प्रकार क़ियामत (परलोक) में मनुष्य के द्वारा किए गए दुष्कर्म उसकी कुरूपता के रूप में प्रकट होंगे। जिस व्यक्ति ने संसार में निर्लज्जता और अप्रतिष्ठा के कर्म किए होंगे वे इस रूप में प्रकट होंगे कि उस व्यक्ति के चेहरे पर मांस तक न होगा; चेहरा अत्यन्त कुरूप और छविहीन हो जाएगा। नबी (सल्ल॰) ने यह भी कहा है :

"दो पत्नियों का पति जो एक का हक़ अदा करता है और दूसरी को उपेक्षित (Neglected) रखता है, क़ियामत में इस तरह जाएगा कि उसका एक पहलू (मानो लुञ्ज होकर) झुक गया होगा।" (हदीस : तिरमिज़ी)

पत्नी अपने शरीर का अंग होती है। उसका हक़ अदा न करना अपने ही अंग को अपाहिज बनाना है।

परलोक हमारी और इस संसार की एक आवश्यकता है। यदि परलोक न हो तो सांसारिक जीवन का कोई वास्तविक अर्थ ही शेष नहीं रहता। दुनिया की सारी चीज़ें हमारी सहायक बनी हुई हैं। उनसे हम काम लेते हैं। यहाँ पाई जानेवाली शक्तियों को हम काम में लाते हैं और वे हमारे अधीन होकर हमारे काम आती हैं और हम अपने सारे ही कर्मों से अपने चरित्र का निर्माण करते हैं। हमारे कर्म और हमारी भावनाएँ हमारे अच्छे या बुरे होने का प्रमाण सिद्ध होती हैं। सोचने की बात है कि संसार की सभी वस्तुओं का प्रयोजन तो इस तरह पूरा हो रहा है कि वे हमारे काम आती हैं, वे अपनी सेवाएँ हमें अर्पित करती हैं। आख़िर हमारा भी तो कोई प्रयोजन होना चाहिए! हमारे जीवन का भी तो कोई उद्देश्य होगा! यदि हमारी कोशिशें अपने वास्तविक उद्देश्य एवं प्रयोजन की पूर्ति के लिए हैं, फिर तो हम सफल हैं,

और यदि हमारे प्रयास हमारे अपने जीवन के उद्देश्य के विरुद्ध हैं तो फिर हमारी असफलता निश्चित है।

क़ुरआन बताता है कि वास्तविकता यही है कि मानव की जैसी कुछ कोशिशें होंगी, जैसा कुछ उसका प्रयास होगा और जैसा कुछ उसका चरित्र होगा, वह अपना रंग लाकर रहेगा। यह सम्भव नहीं कि जल से तो शीतलता प्राप्त हो, फूलों से सुगन्ध और सौन्दर्य प्राप्त हो, अन्न और फल आहार बनें, सूर्य से गर्मी और प्रकाश प्राप्त हो; परन्तु मानव के अच्छे और बुरे कर्मों का कुछ भी न हो। ऐसा कदापि नहीं हो सकता। मानव के भले या बुरे कर्म भी निश्चित रूप से अपना प्रभाव दिखाएँगे। उसके भले या बुरे कर्मों को ईश्वर देख रहा है, वह उन्हें परिणामहीन नहीं छोड़ सकता। मानव के भले-बुरे कर्मों को पूर्ण रूप से आँका जाना है। एक-एक व्यक्ति के शील-स्वभाव और चरित्र को देखा जाएगा और इस परीक्षा-अवधि के पश्चात् उसके अपने कर्म और चरित्र के अनुसार उसके बारे में फ़ैसला होना है। मानव की पूर्णरूप से निगरानी हो रही है कि वह क्या करता है? क़ुरआन में इस विषय में कहा गया है :

> "तुममें से कोई चुपके से बात करे या उच्च स्वर से, कोई रात में छिपा हो या दिन को रास्ते में चल रहा हो, उसके लिए सब एक समान है। उसके आगे और उसके पीछे उसके निरीक्षक (फ़रिश्ते) लगे हुए हैं।" (क़ुरआन, 13/10-11)

परलोक में मनुष्य का किया-धरा सब सामने आएगा। उस दिन लोगों की स्वयं उनकी जिह्वा और उनके हाथ-पाँव उनके किए हुए कर्मों के साक्षी बनेंगे। आदमी के कान, आँख और खाल तक उसके कर्मों की गवाही देंगी, दुराचारी स्वयं अपने अपराध को स्वीकार करेंगे। प्रत्येक व्यक्ति गवाहों और कर्म-पत्र के साथ ईश्वरीय न्यायालय में पेश होगा। अनुचित रूप से वहाँ कोई भी उसकी सहायता न कर सकेगा। उससे कहा जाएगा :

> "और (ईश्वर कहेगा,) निश्चय ही तुम उसी प्रकार एक-एक करके हमारे पास आ गए, जिस प्रकार हमने तुम्हें पहली बार पैदा किया था, और जो कुछ हमने तुम्हें दे रखा था, उसे अपने पीछे छोड़ आए।" (क़ुरआन, 6/94)

प्रत्येक व्यक्ति के समक्ष उसका लेखा-जोखा प्रस्तुत कर दिया जाएगा। वह स्वयं अपना हिसाब पेश करेगा :

> "हमने प्रत्येक मनुष्य का शकुन-अपशकुन उसकी अपनी गर्दन से बाँध दिया है, और क़ियामत के दिन हम उसके लिए एक किताब निकालेंगे जिसको वह खुला हुआ पाएगा। (उससे कहा जाएगा :) पढ़ ले अपनी किताब (कर्म-पत्र), आज अपना हिसाब लेने के लिए तू स्वयं काफ़ी है।" (क़ुरआन, 17/13-14)

वहाँ रिश्वत देकर काम नहीं निकाला जा सकेगा : क़ुरआन में इस सम्बन्ध में कहा गया है–

> "जिस दिन न माल काम आएगा और न औलाद।"
>
> (क़ुरआन, 26/88)

किसी की रिश्तेदारी और सम्बन्ध का होना वहाँ कोई काम न आ सकेगा :

> "तुम्हारे नाते-रिश्ते क़ियामत के दिन काम न आएँगे और न तुम्हारी औलाद।" (क़ुरआन, 60/3)

प्रत्येक व्यक्ति के कर्म को पूर्ण रूप से तौला जाएगा और कण-कण का हिसाब लिया जाएगा :

> "और क़ियामत के दिन हम न्याय-तुला रखेंगे, फिर किसी व्यक्ति पर किंचित्मात्र ज़ुल्म न किया जाएगा। और यदि राई के दाने के बराबर भी कुछ (किया-धरा) होगा, हम उसे ला हाज़िर करेंगे। और हिसाब करने के लिए हम काफ़ी हैं।"
>
> (क़ुरआन, 21/47)

आदमी को उसके कर्म के अनुसार बदला मिलेगा :

"प्रत्येक समुदाय को उसकी अपनी किताब (कर्म-अभिलेख) की ओर बुलाया जाएगा (और कहा जाएगा) : आज तुम्हें बदला दिया जाएगा जैसा कुछ तुम करते थे।" (क़ुरआन, 45/28)

हर एक के दर्जे उसके कर्म के अनुसार निर्धारित किए जाएँगे। कर्म ही वह निर्णायक चीज़ होगी जिसके कारण आदमी उच्च-से-उच्च पद को प्राप्त कर सकेगा :

"सभी के दर्जे उनके कर्मों के अनुसार हैं।" (क़ुरआन, 6/132)

ईश्वरीय न्यायालय में हर एक के बारे में जो निर्णय होगा वह न्यायानुकूल होगा। किसी भी प्रकार का अनुचित प्रभाव डालकर वहाँ काम निकालना सम्भव न हो सकेगा। वहाँ के निर्णय का आधार केवल मनुष्य के कर्म ही होंगे, यह और बात है कि ईश्वर किसी पर दया करे, किन्तु अच्छे कर्म के द्वारा ही ईश्वरीय दयालुता प्राप्त हो सकेगी। इसलिए जो इसका इच्छुक हो कि वहाँ की परिस्थिति उसके अनुकूल हो, उसे चाहिए कि वह स्वयं अपने को वहाँ की परिस्थिति के अनुसार बनाए।

नरक

परलोक (आख़िरत) में बुरे लोगों का ठिकाना जहन्नम अर्थात् नरक होगा। वहाँ उन्हें तरह-तरह की यातनाएँ दी जाएँगी। क़ुरआन से कुछ उदाहरण यहाँ दिए जा रहे हैं :

"आग उनके चेहरों को झुलसा देगी और वे उसमें कुरूप होकर रहेंगे।" (क़ुरआन, 23/104)

"निस्सन्देह वह (जहन्नम) ज्वाला फेंकनेवाली आग है, जो सिर तक की खाल को खींच लेनेवाली है।" (क़ुरआन, 70/15-16)

और तुम्हें क्या ख़बर कि 'सक़र' (नरकाग्नि) क्या है! न वह तरस खाएगी और न छोड़ेगी। शरीर को झुलसा देनेवाली है।" (क़ुरआन, 74/27-29)

वहाँ शीतलता और आराम का नाम भी न होगा :

"उनके लिए उनके ऊपर से भी आग की छतरियाँ होंगी और उनके नीचे से भी (आग की) छतरियाँ होंगी।"

(क़ुरआन, 39/16)

"और उन्हें खौलता पानी पिलाया जाएगा, जो उनकी आँतों को टुकड़े-टुकड़े करके रख देगा।" (क़ुरआन, 47/15)

"अतः जिन लोगों ने 'कुफ़्र' (अधर्म) किया, उनके लिए आग के वस्त्र काटे जा चुके हैं, उनके सिरों पर खौलता हुआ पानी डाला जाएगा। इससे जो कुछ उनके पेटों में है वह और (उनकी) खालें गल जाएँगी। और उनके लिए लोहे के गुर्ज़ (गदायें) होंगे (जिनसे उनकी गत बनाई जाएगी)। जब कभी वे दुःख के कारण उस (नरक) से निकलना चाहेंगे तो फिर उसी में लौटा दिए जाएँगे, और (कहा जाएगा) : चखो दहकती आग की यातना का मज़ा।" (क़ुरआन, 22/19-22)

"निश्चय ही ज़क़्क़ूम (थूहड़) का वृक्ष गुनाहगार (पापी) का भोजन होगा। तेल की तलछट जैसा, वह पेटों में खौलता होगा जैसे गर्म पानी खौलता है।" (क़ुरआन, 44/43-46)

"वहाँ वह न मरेगा और न जिएगा।" (क़ुरआन, 87/13)

क़ुरआन की इन आयतों से स्पष्ट है कि परलोक में जिन लोगों का ठिकाना नरक होगा उन्हें हर प्रकार की शारीरिक यातना दी जाएगी और वे उससे बचकर नहीं जा सकेंगे।

नरक में मनुष्य की मनोदशा

यातना आ जाने पर अपराधियों की मनोदशा का चित्रण क़ुरआन ने इन शब्दों में किया है :

"कहीं ऐसा न हो कि कोई व्यक्ति कहने लगे : हाय, अफ़सोस उसपर जो कोताही ईश्वर के प्रति मैंने की! और मैं तो परिहास करनेवालों ही में सम्मिलित रहा।" (क़ुरआन, 39/56)

"और जिस दिन इनकार करनेवाले आग के सामने पेश किए जाएँगे (तो उनसे कहा जाएगा) : तुमने अपने सांसारिक जीवन में अपनी अच्छी-अच्छी चीज़ें गवाँ दीं और तुम उनका मज़ा लूट चुके। तो आज तुम्हें अपमानजनक यातना दी जाएगी इसके बदले में कि तुम धरती में नाहक़ अपने को बड़ा समझते थे, और इसके बदले में कि तुम अवज्ञा करते थे।"

(क़ुरआन, 46/20)

"(ईश्वर) कहेगा : फटकारे हुए तिरस्कृत, इसी (नरक) में पड़े रहो और मुझसे बात न करो।" (क़ुरआन, 23/108)

"जब वे यातना को देखेंगे तो मन-ही-मन पछताएँगे।"(10/54)

"वे लोग जो ईश्वर की प्रतिज्ञा और अपनी क़समों का थोड़े मूल्य पर सौदा करते हैं, उनके लिए परलोक में कोई हिस्सा नहीं। और उनसे न तो ईश्वर क़ियामत के दिन बात करेगा और न ही उनकी ओर देखेगा, और न उन्हें शुद्धता एवं विकास प्रदान करेगा। उनके लिए दुःखदायिनी यातना है। (क़ुरआन, 3/77)

क़ुरआन की ये आयतें बताती हैं कि नरक में जानेवाले हर प्रकार की मानसिक पीड़ा में ग्रस्त होंगे और उनके सामने कोई उपाय न होगा कि वे अपना उद्धार कर सकें। अतः यदि आज हमें यह सुअवसर प्राप्त है कि हम ऐसे अपमान और यातना से अपने को बचा सकें तो इसमें किसी प्रकार की असावधानी हमारी ओर से नहीं होनी चाहिए।

जन्नत (स्वर्ग या अमरलोक)

पारलौकिक जीवन में जन्नत उनका ठिकाना है जिन्होंने दुनिया में अपने दायित्व को पूरा किया होगा और ईश्वर के आज्ञाकारी बनकर रहे होंगे। जन्नत परमधाम और सुख का स्थान है। वे बड़े ही भाग्यशाली हैं जिन्हें जन्नत में प्रवेश मिल सकेगा। यहाँ संक्षेप में जन्नत का परिचय कराने का प्रयास किया जा रहा है।

जन्नत शाश्वत उद्यान है। जहाँ हर प्रकार का सुख और आनन्द है, जहाँ जीवन अनन्त और आनन्दमय है। जन्नत की ख़ुशियों का कभी अन्त न होगा। क़ुरआन में है :

"वे लोग जो ईमान लाए (अर्थात् सत्य को स्वीकार किया) और अनुकूल कर्म किए, उन्हें शीघ्र ही हम ऐसे बाग़ों में दाख़िल करेंगे जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी, जहाँ वे सैदव रहेंगे। यह अल्लाह का वादा है, और अल्लाह से बढ़कर बात में सच्चा कौन हो सकता है?" (क़ुरआन, 4 : 122)

"और डर रखनेवालों के लिए निश्चय ही अच्छा ठिकाना है, सदैव रहने के बाग़ हैं, जिनके द्वार उनके लिए खुले होंगे, उनमें वे तकिया लगाए बैठे होंगे, वहाँ वे बहुत-से मेवे और पेय मँगवाते होंगे। और उनके पास निगाहें बचाए रखनेवाली (लजीली) स्त्रियाँ होंगी जो उनके समायु होंगी। यह है वह चीज़ जिसका हिसाब के दिन के लिए तुमसे वादा किया जाता है। यह हमारा दिया हुआ है जो कभी समाप्त न होगा।"

(क़ुरआन, 38/49-54)

"जो ईमान लाए और अच्छे कर्म किए, तो उनके लिए कभी न समाप्त होनेवाला बदला है।" (क़ुरआन, 95/6)

जन्नत शाश्वत है। जन्नत में जो चीज़ें प्रभु की ओर से मिलेंगी वे कभी भी समाप्त नहीं होंगी। जन्नत में मृत्यु भी न होगी :

"निश्चय ही (ईश्वर का) डर रखनेवाले ऐसे स्थान में होंगे जहाँ कोई खटका न होगा। बाग़ों और जल-स्रोतों के बीच होंगे, पतले और गाढ़े रेशमी वस्त्र पहनेंगे और एक-दूसरे के आमने-सामने होंगे। यह होगा! और हम उनका विवाह बड़ी और सुन्दर आँखोंवाली (मृगनयनी) परम रूपवती स्त्रियों से कर देंगे। वे वहाँ निश्चिन्ततापूर्वक हर प्रकार के स्वादिष्ट मेवे खाएँगे। वहाँ वे मृत्यु का मज़ा कभी न चखेंगे, बस पहली मृत्यु जो (दुनिया में)

आ चुकी, वह आ चुकी। और वह उन्हें भड़कती अग्नि (नरक) की यातना से बचा देगा।" (क़ुरआन 44/51-56)

जन्नत के लोग न जन्नत से निकलना चाहेंगे और न वहाँ से निकाले जाएँगे :

"वहाँ न उन्हें किसी तकलीफ़ का सामना करना पड़ेगा और न वे वहाँ से कभी निकाले जाएँगे।" (क़ुरआन, 15/48)

"निस्सन्देह जो लोग ईमान लाए और अनुकूल कर्म किए उनकी आवभगत के लिए फ़िरदौस के बाग़ होंगे, जिनमें वे सदैव रहेंगे, वहाँ से वे कहीं और जाना न चाहेंगे।"(क़ुरआन, 18/107-108)

जन्नत क्या होगी? एक विशाल राज्य होगा जो जन्नतवालों को प्राप्त होगा, और राज्य भी ऐसा जिसका न कभी अन्त हो और जो न कभी नष्ट हो। क़ुरआन का एक चित्रण देखें :

"अतः ईश्वर ने उन्हें उस दिन की आपत्ति से बचा लिया और उन्हें ताज़गी और ख़ुशी प्रदान की, और जो उन्होंने धैर्य से काम लिया उसके बदले में उन्हें जन्नत और रेशमी वस्त्र प्रदान किया। उसमें वे तख़्तों पर टेक लगाए होंगे, वे उसमें न तो सख़्त धूप देखेंगे और न सख़्त ठण्ड। और उस (बाग़) की छाया उनपर झुकी हुई होगी और उसके फलों के गुच्छे बिल्कुल उनके वश में होंगे। और उनके पास चाँदी के बरतन गर्दिश में होंगे और प्याले जो बिल्कुल शीशे हो रहे होंगे, शीशे भी चाँदी के जो ठीक अन्दाज़े से रखे गए होंगे। और वहाँ वे एक और जाम पिएँगे जिसमें सोंठ का मिश्रण होगा। क्या कहना उस स्रोत का जो उसमें होगा, जिसका नाम सल-सबील है। उनकी सेवा में ऐसे किशोर दौड़ते फिर रहें होंगे जो सदैव किशोर ही रहेंगे। जब तुम उन्हें देखोगे तो उन्हें समझोगे कि बिखरे हुए मोती हैं। और जब तुम वहाँ देखोगे तो तुम्हें बड़ी-बड़ी नेमत और विशाल राज्य दिखाई देगा।" (क़ुरआन, 76/11-20)

जन्नत की इन उपलब्धियों का अर्थ यह नहीं है कि वहाँ केवल बाह्य सुख ही प्राप्त होगा और आत्मिक आनन्द की व्यवस्था न होगी। बात यह नहीं है। हम दुनिया में भी देखते हैं कि यहाँ यदि शारीरिक सुख का सामान मौजूद है तो इसके साथ ही आत्मज्ञानियों के लिए यहाँ आत्मिक एवं आध्यात्मिक सुख और परितोष भी पाया जाता है। बल्कि सत्य तो यह है कि जो जानते हैं उन्हें प्रत्येक वस्तु से परमात्मा की ख़बर मिलती है। उनके लिए हर चीज़ एक माध्यम है, जिसके द्वारा उन्हें ईश्वरीय अनुकम्पा और दिव्य-ज्योति एवं सौन्दर्य का बोध होता है। देखनेवाली आँखें हों तो रूप में अरूप के ही दर्शन होते हैं। स्वरों के माध्यम से उस अस्वर सौन्दर्य की ख़बर मिलने लगती है जो स्वरों के मध्य छिपा होता है। ईश्वर की बनाई हुई कोई वस्तु अशुभ नहीं हो सकती। प्रत्येक वस्तु ईश्वर की निशानी है, वह ईश्वर का ही परिचय देती है। केवल निगाह और दृष्टि अपेक्षित है। समस्त वस्तुएँ वास्तव में पृष्ठभूमि का काम करती हैं। अपेक्षित आभास को एक प्रकार का कंट्रास्ट और विरोध चाहिए। वह कंट्रास्ट में उपलब्ध होता है। जिस प्रकार सफ़ेद खड़िया मिट्टी की लिखावट काले पट की पृष्ठभूमि में प्रकट होती है, ठीक उसी प्रकार रूप में अरूप की, स्वर में निःस्वर की और ध्वनि में निःध्वनि की अभिव्यक्ति होती है। फूल में क्या सुन्दर होता है? क्या वह रसायन और भौतिक तत्व सुन्दर होते हैं जिनसे फूल निर्मित होता है? नहीं, वह अरूप और वह भाव सुन्दर होता है जिसकी झलक हमें फूल के माध्यम से मिलती है।

जब वस्तुस्थिति यह है तो फिर कोई चीज़ उपेक्षित क्यों हो। उपेक्षा के योग्य तो हमारी वह संकुचित दृष्टि ही हो सकती है जो सत्य को देख पाने में रुकावट बनती है। जन्नत तो आत्मिक सुखों का भण्डार है। वहाँ जो पदार्थ जो चीज़ें हमें प्राप्त होंगी उनका यहाँ की चीज़ों से कोई जोड़ नहीं। वहाँ वह सब कुछ प्राप्त हो सकेगा जिसकी कोई कामना कर सकता है। वे अत्यन्त अल्पबुद्धि के लोग हैं जो जन्नत की

वस्तु की हँसी उड़ाते हैं, हालाँकि वे अपने शरीर की उपेक्षा नहीं कर सकते। वे वायु-सेवन के बिना जीवित नहीं रह सकते। पृथ्वी के बिना ठहर नहीं सकते। मित्रों के बिना जी नहीं सकते। फिर भी वे जन्नत की चीज़ों का और स्वर्गलोक का उपहास करते हैं। कितनी निर्लज्जता की यह बात है कि जो चीज़े ईश्वर का वरदान हैं, जो मानव की अपनी आवश्यकताएँ हैं; वह उन्हीं का निरादर कर रहा है। शायद वह नहीं जानता कि धर्म मूलतः निषेध नहीं, उपलब्धि है। बड़ी भूल में हैं वे लोग जिन्होंने ईश्वर की रची हुई चीज़ों को उपेक्षा-योग्य समझा और उनकी निन्दा करने में ही अपनी सारी शक्ति लगा दी।

जन्नत में आवश्यकता की प्रत्येक वस्तु उपलब्ध होगी। वहाँ हर ख़ुशी मिलेगी। प्रत्येक कामना की परिपूर्ति होगी। क़ुरआन की धारणा इस सम्बन्ध में स्पष्ट है :

> "फिर कोई नहीं जानता उसे जो आँखों की ठण्डक उनके लिए छिपा रखी गई है, उसके बदले में देने के ध्येय से जो वे करते रहे होंगे।" (क़ुरआन, 32/17)
>
> पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने कहा है :
>
> "अल्लाह कहता है कि मैंने अपने नेक बन्दों के लिए वह कुछ जुटा रखा है जिसको न किसी आँख ने देखा, न किसी कान ने सुना और न ही किसी मनुष्य के मन में उसका विचार आया।"
>
> (हदीस : बुख़ारी)
>
> क़ुरआन में है :
>
> "और वहाँ वह सब कुछ होगा जो दिलों को भाए और आँखें जिससे लज़्ज़त पाएँ।" (क़ुरआन, 43/71)
>
> "वहाँ तुम्हारे लिए वह कुछ है जिसकी इच्छा तुम्हारे जी की होगी, और वहाँ तुम्हारे लिए वह सब कुछ होगा जिसकी तुम माँग करोगे।" (क़ुरआन, 41/31)

> "उनके लिए उनके रब (प्रभु) के पास वह सब कुछ है जो वे चाहेंगे।" (क़ुरआन, 39/34)
>
> "यह है वह चीज़ जिसका तुमसे वादा किया जाता था हर उस व्यक्ति के लिए जो ईश्वर की ओर प्रवृत्त रहनेवाला और कर्तव्य का पालन करनेवाला हो। जिसने बिना देखे रहमान (कृपाशील प्रभु) का भय माना और रुजूअ (उन्मुख) रहनेवाला हृदय लेकर आया। प्रवेश करो, जाओ इस जन्नत में सलामती के साथ, यह अमरता का दिन है। इनके लिए इसमें वह सब कुछ है जो ये चाहें और हमारे यहाँ और भी बहुत कुछ है।"
>
> (क़ुरआन, 50/32-35)

जन्नत की उपलब्धियों और जन्नत में जानेवालों के कर्मों के बीच सादृश्य और अनुरूपता होगी। जैसे उनके कार्य होंगे उसी के अनुरूप उसको बदला मिलेगा। पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का कथन है :

> "परलोक (आख़िरत) में ईश्वर कहेगा : ऐ मेरे बन्दो! ये तुम्हारे कर्म हैं जो तुम्हें वापस मिल रहे हैं, तो जो अच्छाई पाए वह ईश्वर को धन्यवाद दे और जो बुराई पाए वह अपने आपको धिक्कारे।" (हदीस : मुस्लिम, तिरमिज़ी, इब्ने-माजा)

जो लोग दुनिया में ईश्वर से डरा करते थे और निश्चिन्त एवं अनुत्तरदायी बनकर जीवन नहीं बिताते थे, उस दिन उनका भय दूर हो जाएगा; फिर उन्हें कोई चिन्ता न सताएगी। क़ुरआन के शब्दों में वहाँ उनके मुख से इस प्रकार के शब्द निकलेंगे :

> "पहले जब हम अपने घरवालों में थे, हमें डर लगा रहता था। अल्लाह ने हमपर एहसान किया और हमें झुलसा देनेवाली यातना से बचा लिया।" (क़ुरआन, 52/26-27)

दुनिया में ईश्वर के आज्ञाकारी व्यक्तियों की अधर्मी लोग हँसी उड़ाया करते थे। उस दिन मामला उलट जाएगा। क़ुरआन में है :

"जो अपराधी हैं वे ईमान लानेवालों पर हँसते थे, तो आज के दिन ईमान लानेवाले अधर्मियों पर हँस रहे हैं; ऊँची मसनदों पर से देख रहे हैं।" (क़ुरआन, 83/29-35)

पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के कथनानुसार जन्नत में पुकारकर कह दिया जाएगा :

"यहाँ वह स्वास्थ्य है कि बीमार न पड़ोगे, वह जीवन है कि मृत्यु न आएगी, वह जवानी है कि वृद्ध न होगे और वह आराम है कि फिर तकलीफ़ न पाओगे। लोगों के चेहरे अपने-अपने कर्मों के अनुसार चमकेंगे, कोई सितारे की भाँति, कोई पूर्णिमा के चाँद की तरह।" (हदीस : मुस्लिम)

जन्नत की विभिन्न उपलब्धियाँ

क़ुरआन के अध्ययन से मालूम होता है कि जन्नत में समस्त अपेक्षित चीज़ें पाई जाएँगी। जन्नत सलामती का घर है। वह ईश-दयालुता का घर है। वहाँ परस्पर किसी प्रकार का वैर-भाव और द्वेष न होगा। जन्नतवालों से अल्लाह कभी नाख़ुश न होगा, जैसा कि क़ुरआन में है :

"ईमानवाले पुरुषों और ईमानवाली स्त्रियों से अल्लाह ने ऐसे बाग़ों का वादा किया है जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी, जिनमें वे सदैव रहेंगे, सदाबहार बाग़ों में पवित्र निवासगृहों का (भी वादा है) और अल्लाह की प्रसन्नता और रज़ामन्दी का; जो सबसे बढ़कर है। यही बड़ी सफलता है।" (क़ुरआन, 9/72)

जन्नत में प्रवेश पानेवाली आत्माओं को यह शुभ-सूचना मिलेगी :

"ऐ संतुष्ट आत्मा! लौट अपने रब (प्रभु) की ओर इस तरह कि तू उससे राज़ी है और वह तुझसे राज़ी है।"

(क़ुरआन, 89/27-28)

जन्नत के लोगों की विशेषता क़ुरआन के अनुसार यह होगी :

"अल्लाह उनसे राज़ी हुआ और वे उससे राज़ी हुए। यही बड़ी सफलता है।" (क़ुरआन, 5/119)

जन्नत में पवित्रता एवं विशुद्धता ही देखने को मिलेगी। वहाँ किसी प्रकार की गन्दगी न होगी। जन्नत के लोग स्वयं पवित्र होंगे, उनकी बातें पवित्रता लिए हुए होंगी, उनका निवास-गृह पवित्र होगा। उनकी पत्नियाँ सुथराई और पवित्रता लिए हुए होंगी। समस्त शारीरिक एवं आत्मिक मलिनताएँ उनसे दूर रहेंगी।

जन्नतियों को ईश्वर का सामीप्य प्राप्त होगा, यह जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि है। इससे ऊँचे किसी पद एवं स्थान की कल्पना भी नहीं की जा सकती। इस विशेषता का उल्लेख क़ुरआन में विभिन्न स्थानों पर मिलता है। एक जगह है :

"निश्चय ही ईश्वर का डर रखनेवाले बाग़ों और नहरों के बीच होंगे, प्रतिष्ठित स्थान पर, प्रभुत्वशाली सम्राट के निकट।"

(क़ुरआन, 54/54-55)

जन्नत के लोगों को पूर्णतः आत्मिक आनन्द प्राप्त होगा। उनपर दिव्य वर्षा हो रही होगी। प्रत्येक आनन्द में, प्रत्येक सुख-सामग्री में, प्रत्येक सौन्दर्य में, प्रत्येक मधुर ध्वनि में, प्रत्येक रूप में तथा प्रत्येक दृश्य में उन्हें ब्रह्मविहार प्राप्त होगा। हर ओर उन्हें ईश्वर ही की अनुकम्पा; उसी की महानता एवं छवि आभासित होगी। अनेकता में एकता का रहस्य पूर्णतः उद्घाटित होगा। उन्हें आभासित हो रहा होगा कि सबका स्रोत एक ईश्वर ही है। जो कुछ शुभ है वह वहीं से आता है। सौन्दर्य वहीं से आता है। वह सौन्दर्य-स्वरूप है। आनन्द का प्रवाह वास्तव में वहीं से है, वह आनन्द रूप है, चेतना-शक्ति उसी से प्राप्त है, वह परम चेतन है। दयालुता के समस्त उपकरण उसी एक के जुटाए हुए हैं, वह दयामय है। वह स्वयं सर्वथा आनन्द न हो तो आनन्द का आविर्भाव कैसे हो सकता है? वहाँ सौन्दर्य और पावनता न हो तो हमें सुन्दरता एवं पावनता के दर्शन कैसे मिल सकते हैं? अतः स्वभावतः

जन्नतवालों के अन्तर से ईश-गुणगान का स्रोत फूट पड़ेगा, जो अन्तर, बाह्य और सम्पूर्ण वातावरण के एक रस होने का परिचायक होगा। क़ुरआन में है :

> "वहाँ उनकी पुकार यह होगी : 'महिमा है तेरी! ऐ हमारे रब (अल्लाह)!' और उनका पारस्परिक अभिवादन 'सलाम' होगा। और उनकी पुकार का अंत इस पर होगा कि, प्रशंसा एवं स्तुति ईश्वर ही के लिए है जो सारे संसार का प्रभुपालक है।"
>
> (क़ुरआन, 10/10)
>
> "वहाँ उनकी रोज़ी प्रातः और सायंकाल उपलब्ध होगी।"
>
> (क़ुरआन, 19/62)

पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) का कथन है :

> "वे प्रातः और सायंकाल अल्लाह की 'तस्बीह' (महिमागान) करेंगे।" (हदीस : मुस्लिम)

एक और हदीस में है :

> "जन्नतवालों को अल्लाह की तस्बीह का इलहाम (प्रकाशना) हुआ करेगा।"

मतलब यह है कि तस्बीह (प्रभु का महिमागान) केवल उनके मुख की बात न होगी बल्कि वह तो उनके अन्तर में उद्घाटित होगी और मुख से ध्वनित होने लगेगी। क़ुरआन के इन शब्दों पर विचार करें जो जन्नतियों (स्वर्गवालों) के विषय में आया है :

> "और अच्छी बात की ओर उनका मार्ग-दर्शन किया गया और प्रशंसा के अधिकारी (ईश्वर) का मार्ग उन्हें बता दिया गया।"
>
> (क़ुरआन, 22/24)

वास्तव में अपनी बात तो कहीं कोई है ही नहीं और न अपना कोई मार्ग है। जो बात है वह प्रभु की बात है, जो मार्ग है वह उसी का है। उसकी बात के अतिरिक्त दूसरी बात और उसके मार्ग के सिवा दूसरा मार्ग वास्तव में बिगाड़ है, भ्रष्टता है, दुर्भाग्य है। उसका रास्ता ही

अपना रास्ता है, उसकी बात ही अपनी बात है। इसके अतिरिक्त सब मिथ्या है, झूठ है। मिथ्या या झूठ देर तक नहीं चल सकता। झूठ का सहारा झूठ है, धोखा है। हमारा न अपना स्वतंत्र अस्तित्व है और न स्वतंत्र रूप से हमारी कोई वस्तु अपनी है। यह अपनी वस्तु होने का भाव जब तक दूर नहीं होता, सत्य का पकड़ में आना सम्भव नहीं। हमारे पास जो है वह अपना नहीं है, वह अमानत है। किसी दूसरे का दिया हुआ है। अतः हमारा परम कर्तव्य होता है कि हम उसे जान लें जिसकी हम चीज़ हैं, जिसकी हम अमानत हैं, जिसने हमें रचा है और विशेष प्रकार के गुण, स्वभाव, अभिरुचि आदि से हमें सुशोभित किया है। इनको हम अपनी समझ लेने की ग़लती न करें। ये ईश्वर की चीज़ होकर अपनी हैं। यही हमारी वास्तविकता है। ईश्वर को अपने जीवन से विलग नहीं किया जा सकता। जीवन की सार्थकता उसी से है। यदि हम कुछ हैं तो ईश्वर के सम्बन्ध से हैं। उससे अलग हम कुछ भी तो नहीं हैं। किन्तु यह "कुछ भी" न होना कोई हानि की बात नहीं है, यही हमारी सार्थकता है। इसी में हमारी महानता है।

जन्नत-प्रकाशमय लोक है, अन्धकार और विकृतियों का वहाँ अस्तित्व नहीं। कोई चीज़ वहाँ शंकामय नहीं। वहाँ कोई भय नहीं, वहाँ कोई निराशा और दुःख नहीं, क्लेश नहीं, किसी प्रकार की वहाँ अन्धता नहीं। लोगों के व्यक्तित्व से लेकर वातावरण तक सब आभामय होगा। सबके चेहरे रौशन होंगे, चमक रहे होंगे। कोई चेहरा सितारे की तरह चमकेगा और किसी के मुख की आभा पूर्णिमा के चन्द्र की तरह होगी। यह उनके व्यक्तित्व का प्रकाश होगा। यह उनके ईमान, आस्था और चरित्र का प्रकाश होगा जो उन्होंने दुनिया की ज़िन्दगी में प्राप्त किया होगा। क़ुरआन कहता है :

> "जिस दिन तुम ईमानवाले पुरुषों और ईमानवाली स्त्रियों को देखोगे कि उनका प्रकाश उनके आगे-आगे दौड़ रहा है और उनके दाहिने हाथ में है। (कहा जाएगा :) आज तुम्हें ऐसे

> उद्यानों (बाग़ों) की शुभ-सूचना है जिनके नीचे नहरें बह रही हैं, जिनमें सदैव रहना है। यही है सबसे बड़ी सफलता।"
>
> (क़ुरआन, 57/12)

जन्नत में आत्मिक विकास का क्रम थम नहीं जाएगा। यह क्रम तो निरन्तर चलता रहेगा। जन्नत में आध्यात्मिक उन्नति का द्वार बन्द नहीं होगा। जीवन का स्वभाव विकासोन्मुख है। इसे किसी प्रकार का अवरोध उत्पन्न नहीं होगा। जन्नतियों के चतुर्दिक प्रकाश होगा। उनका प्रकाश उनके आगे दौड़ रहा होगा। फिर भी उनकी प्रार्थना यह होगी :

> "हमारे प्रभु! हमारे लिए हमारे प्रकाश को पूर्ण कर दे और हमें क्षमा कर दे। निस्सन्देह तुझे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है।"
>
> (क़ुरआन, 66/8)

जन्नत का एक बड़ा सुख यह होगा कि वहाँ का समाज अत्यन्त पवित्र होगा। पवित्र भावना ही वहाँ पाई जाएगी। कोई अनुचित, व्यर्थ और अश्लील बात वहाँ सुनने और देखने को न मिलेगी। क़ुरआन में हैः

> "वहाँ वे सलाम के सिवा कोई व्यर्थ बात न सुनेंगे।"
>
> (क़ुरआन, 19/62)

जन्नत की सबसे बड़ी उपलब्धि यह होगी कि वहाँ हमें ईश्वर के दर्शन हो सकेंगे। दर्शन की प्यासी आँखें तृप्त होंगी। ईश्वर के दर्शन से बढ़कर कोई दूसरी चीज़ सुखदायिनी नहीं होगी, जिसकी मानव कामना करे। यह अभिलाषा वहाँ पूरी होगी। वहाँ मानव अपने प्रभु के प्रत्यक्ष दर्शन कर सकेगा। और इस प्रकार वह पूर्णकाम होगा। इस दर्शन में वह आनन्द होगा कि दूसरी चीज़ों को भूल जाएँगे। पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के कथन से यह भी मालूम होता है कि वहाँ लोगों को अपने रब से बातचीत करने का भी सौभाग्य प्राप्त होगा।

इहलोक (दुनिया) परलोक की तुलना में नगण्य है

इहलोक अर्थात दुनिया की परलोक (आख़िरत) की तुलना में कोई भी हैसियत नहीं है। परलोक शाश्वत है और दुनिया नश्वर है। पारलौकिक जीवन सांसारिक जीवन की अपेक्षा उत्तम है। वहाँ की उपलब्धियाँ यहाँ के लाभों से कहीं अधिक और सुखकर हैं। वहाँ की हानि यहाँ की हानि से कहीं ज़्यादा चिंतनीय और दुःखद है। इसलिए आदमी को दुनिया (इहलोक व संसार) के पीछे अपनी आख़िरत (परलोक) तबाह नहीं करनी चाहिए। उस व्यक्ति से बढ़कर मूर्ख कोई नहीं जो दुनिया के लिए आख़िरत को भूल जाए। क़ुरआन इस विषय में अत्यन्त स्पष्ट रूप से कहता है :

> "और यह सांसारिक जीवन तो केवल दिल का बहलावा और खेल है। निस्संदेह पश्चात्‌वर्ती घर (अर्थात् परलोक का घर और उसका जीवन) ही वास्तविक जीवन है। क्या ही अच्छा होता कि वे जानते!" (क़ुरआन, 29/64)

> "कह दो : दुनिया की पूँजी बहुत थोड़ी है; जबकि परलोक (आख़िरत) उस व्यक्ति के लिए ज़्यादा अच्छा है जो ईश्वर का डर रखता हो, और तुम्हारे साथ तनिक भी अन्याय न किया जाएगा।" (क़ुरआन, 4/77)

> "क्या तुम आख़िरत (परलोक) की अपेक्षा सांसारिक जीवन पर राज़ी हो गए? संसारिक जीवन की सुख-सामग्री तो आख़िरत की अपेक्षा बहुत थोड़ी है।" (क़ुरआन, 9/38)

इसलिए बुद्धिमानी की बात यही है कि आदमी थोड़ी और अल्प सुख-सामग्री के पीछे उस चीज़ को न गवाँ बैठे जो अधिक, शाश्वत और उत्कृष्ट एवं उत्तम है। क़ुरआन में है—

> "और तुम्हें तुम्हारा भरपूर बदला क़ियामत के दिन चुका दिया जाएगा। अतः जिसे आग (नरक) से हटा दिया गया और

जन्नत में दाख़िल कर दिया गया उसका काम बन गया। और सांसारिक जीवन तो केवल एक धोखे की सामग्री है।"

(क़ुरआन, 3/185)

दुनिया को सब कुछ जाननेवाले उस चीज़ पर भरोसा रखते हैं जो धोखे की चीज़ है। अपने को धोखे में रखना स्वयं अपने साथ अन्याय है। जो व्यक्ति अपने-आप को धोखा देता है, वह अपने बुरे परिणाम का ज़िम्मेदार स्वयं होता है। क़ुरआन कहता है :

"तो जिस किसी ने सरकशी की और सांसारिक जीवन को प्राथमिकता दी होगी तो निस्संदेह भड़कती आग ही उसका ठिकाना है, और रहा वह व्यक्ति जिसने अपने रब के सामने खड़े होने का भय रखा और अपने जी को बुरी इच्छाओं से रोका, तो जन्नत ही उसका ठिकाना है।"(क़ुरआन, 79/37-41)

"कह दो : दुनिया की पूँजी थोड़ी है, और आख़िरत ऐसे व्यक्ति के लिए अधिक उत्तम है जो (ईश्वर का) डर रखता हो, और तुम्हारे साथ तनिक भी अन्याय न किया जाएगा।" (क़ुरआन, 4/77)

फिर भी कितने ही लोग जाने-अनजाने इसी अल्प पूँजी, सांसारिक सुखों के पीछे अपने को गवाँ रहे हैं। शायद उन्हें इसका पता नहीं कि वे जिस नीति-पथ पर चल रहे हैं वह उनके लिए घातक सिद्ध होगा। काश, वे उस समय से पहले वस्तुस्थिति को समझ पाते जब आदमी अपने लिए कुछ भी कर सकने की स्थिति में न होगा! क़ुरआन में है :

"ज़ालिम लोग उसी सुख-सामग्री के पीछे लगे रहे जो उन्हें दी गई थी, और वे अपराधी ही रहे।" (क़ुरआन, 11/116)

क़ुरआन स्पष्ट शब्दों में सूचित करता है कि असफल और घाटे में पड़नेवाले कौन हैं। कोई व्यक्ति घाटे में पड़ना नहीं चाहता, परन्तु वह समझ से काम नहीं लेता और– "काँच किरिच बदलें ते लेहीं। कर ते डारि परस मनि देहीं।।"[1] को चरितार्थ करता हुआ भ्रमवश निम्न पथ

---

[1] (रा॰ च॰ मा॰ 7/120/6) अर्थात् "पारसमणि को हाथ से फेंक देते हैं और बदले में काँच के टुकड़े ले लेते हैं।" —संपादक

को उच्च पथ समझकर उसी पर अडिग रहता है और घाटे की नीति को लाभदायक महसूस करता हुआ ख़ुद को विनाश के कगार पर ला खड़ा करता है। ऐसा मनुष्य जीवन पाकर भी जीवन से वंचित रह जाता है। वह जीवन को उसके वास्तविक स्वरूप में नहीं देख पाता। जीवन के रहस्यों से वह दूर-दूर रहकर ही गुज़रता है और जीवन की सच्चाई की ओर से उसकी आँख बन्द ही रहती है। अन्धता के अतिरिक्त उसके पास कुछ भी नहीं होता किन्तु उसे इसकी ख़बर नहीं होती।

क़ुरआन में कहा गया है :

> "कहो : वास्तव में घाटा उठानेवाले तो वही लोग हैं जिन्होंने क़ियामत के दिन अपने-आपको और अपने लोगों को घाटे में डाल दिया। सुन लो यही खुला घाटा है।" (क़ुरआन, 39/15)

मानव को जीवन में जो कुछ प्राप्त है चाहे वह धन, सन्तान, पद और उपाधियाँ हों, या चाहे दुनिया के और सामान, वास्तव में ये चीज़ें मानव की सम्पत्ति नहीं हैं, वरन् इनके अतिरिक्त भी चीज़ें हैं जो वस्तुतः शाश्वत एवं स्थायी हैं। इहलौकिक प्राप्त संसाधन तो मानव की मात्र सांसारिक आवश्यकताएँ हैं। जिसने यह समझा कि मानव का भाग्य बस यही सांसारिक चीज़ें ही हैं, उसने मानव की महिमा घटाने का दुस्साहस किया। आख़िरत में जीवन पूर्ण होगा। वहाँ मानव से कुछ छीना नहीं जाएगा, बल्कि और प्रदान किया जाएगा और जो कुछ उसे वहाँ मिलेगा वह उत्कृष्टतम् होगा। उसमें किसी प्रकार का विकार न होगा, त्रुटि न होगी, कमी न होगी। क़ुरआन में है–

> "कहो : क्या मैं तुम्हें इन (सांसारिक चीज़ों) से उत्तम चीज़ का पता दूँ? जो लोग ईश्वर का डर रखेंगे उनके लिए उनके रब के पास बाग़ हैं जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी, उनमें वे सदैव रहेंगे, और पाक-साफ़ जोड़े होंगे और ईश्वर की प्रसन्नता प्राप्त होगी। ईश्वर अपने बन्दों पर नज़र रखता है।"
>
> (क़ुरआन, 3/15)

अध्याय-8

अविवेक की दुर्घटनाएँ

परलोक के विषय में विभिन्न मत-मतान्तर

परलोक के विषय में नाना प्रकार की धारणाएँ और विचार पाए जाते हैं। कुछ लोगों का मत है कि जीवन जो कुछ भी है यही सांसारिक जीवन है। इसके आगे कोई जीवन नहीं जिसकी हम प्रतीक्षा करें। उनके मतानुसार मृत्यु सदैव के लिए हमारी जीवन-लीला को समाप्त कर देती है। इसके बाद न कोई चेतना है, न जीवन और न कोई कर्म-फल और परिणाम है। यह धारणा एवं सोच कोई आधुनिक सोच ही नहीं है, वरन् प्राचीनतम् और परम्परा से संकुचित दृष्टि के लोगों की ओर से सदैव जन्म लेती रही है। क़ुरआन के अवतरणकाल में भी यही धारणा उभरकर सामने आई जिसका उल्लेख क़ुरआन इस प्रकार करता है—

> "ये लोग बड़ी दृढ़तापूर्वक कहते हैं : बस यह हमारी पहली मृत्यु ही है, हम दोबारा उठाए जानेवाले नहीं हैं।"
>
> (क़ुरआन, 44/34-35)
>
> "जो कुछ भी है बस हमारा यह सांसारिक जीवन है; हम मरते और जीते हैं, और हमें तो बस समय (काल) विनष्ट करता है।" (क़ुरआन, 45/24)

ऐसे लोगों के कहने का तात्पर्य यह होता है कि मरना-जीना समय का फेर है, न परलोक (आख़िरत) का कोई दिन आने को है और न ही कोई हमें दोबारा जीवित करके उठानेवाला है। यह समय का चक्र चलता आया है और चलता ही रहेगा। इसमें किसी गहरे रहस्य की खोज व्यर्थ है और मानसिक दुर्बलता के अतिरिक्त और कुछ नहीं।

जो लोग भी इस तरह की बातें कहते हैं, वे वस्तुतः अपने किसी गहरे चिन्तन और अनुसन्धान के आधार पर नहीं कहते, वरन् उथली एवं चिन्तनहीन मानसिकता के कारण कहते हैं। मृत्यु के पश्चात् भी कोई जीवन है, इस धारणा के प्रति उनकी आपत्ति केवल यह है कि उनकी आँखों ने किसी को मरने के बाद जीवित होते नहीं देखा। किन्तु किसी वस्तु के न देखने से इस निष्कर्ष तक पहुँचना कि वह वस्तु सिरे से है ही नहीं, अवैज्ञानिक धारणा है। किसी चीज़ को देख न पाना इस बात का पर्याप्त प्रमाण कदापि नहीं है कि उस चीज़ का सिरे से अस्तित्व ही नहीं है। क्या अमेरिका का पता लगाने से पूर्व अमेरिका महाद्वीप नहीं था?

इस तरह की बातें करनेवाले यदि ठहर कर अपनी बात पर विचार करें तो स्वयं उन्हें अपने प्रस्तुत किए हुए प्रमाण की त्रुटियाँ दिखाई दे जाएँगी। किन्तु उनके इस प्रचार के पीछे किसी प्रमाण से अधिक कुछ मनोवैज्ञानिक कारण होते हैं। क़ुरआन ने इस पहलू को भी हमारे सामने रखा है :

> "जिन लोगों ने ईश्वर के आदेशों का और उससे मिलने का इनकार किया, वे ईश्वर की दयालुता से निराश हो चुके हैं।"
>
> (क़ुरआन, 29/23)

एक दूसरी जगह कहा गया :

> "ऐ ईमान लानेवालो, ऐसे लोगों को अपना दोस्त न बनाओ जिनपर अल्लाह का प्रकोप हुआ है, वे आख़िरत (परलोक) की ओर से निराश हो चुके हैं जिस प्रकार क़ब्रवाले अधर्मी निराश हो चुके हैं।" (क़ुरआन, 60/13)

इन आयतों से मालूम हुआ कि निराशा इनकार का मूल मनोवैज्ञानिक कारण है। यह निराशा संकीर्ण हृदय और संकीर्ण मस्तिष्क का मात्र प्रतीक है। आख़िरत के न माननेवाले इस वास्तविकता को स्वीकार नहीं कर पाते कि आख़िरत जैसी महान् घटना कभी घटित हो

सकेगी। इसका कारण कोई सशक्त प्रमाण नहीं, केवल उनकी निराशायुक्त प्रकृति है, और इस निराशा का कारण उनका दुस्साहस और निम्नस्तर की बुद्धि का होना है। यदि वे अपने चारों ओर फैले हुए जगत् और उसके क्रियाकलाप को खुली आँखों से देखते तो उन्हें मालूम हो जाता कि ब्रह्माण्ड में निराशा के नहीं, आशा के चिह्न पाए जाते हैं। संसार का प्रत्येक दृश्य सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त की अपूर्व आभा तक और महान अन्तरिक्ष से लेकर रेतीली पहाड़ी के ढाल पर उगी हुई हरित घास तक सभी किसी दिव्य आशा का उद्‌घाटन करते हैं। प्रकृति का सौन्दर्य प्रेरणादायक है। हतोत्साह करना प्रकृति का स्वभाव नहीं। फिर मानव निराशा की शिक्षा कहाँ से ग्रहण कर लेता है। निस्सन्देह यह निराशा परमात्मा की नहीं, शैतान ही की देन हो सकती है। आख़िरत या परलोक को असम्भव समझना निश्चय ही निराशा जनित विकार है, और इस निराशा का कारण मात्र भ्रम और इस महान जगत् को भरपूर निगाह से न देखने के अतिरिक्त और कुछ नहीं।

कभी-कभी मानव इतना हतोत्साहित हो जाता है कि उसे सब कुछ असम्भव ही प्रतीत होने लगता है। आशा की समस्त किरणें उसके लिए विलुप्त होकर रह जाती हैं। इस भ्रम से निकलने का एक ही उपाय है कि वह जगत् को अभ्यस्त आँखों से न देखकर किसी दिन एक ऐसे यात्री की तरह देखे जो इस जगत् में पहली बार उतरा हो और इससे पहले उसने कोई संसार न देखा हो। विचार कीजिए, क्या ऐसे यात्री के लिए यह संसार जादू का संसार प्रतीत न होगा? क्या यहाँ की प्रत्येक वस्तु उसके लिए आश्चर्यजनक न होगी? क्या वह पुकार न उठेगा कि अब कुछ भी असम्भव नहीं! अब कुछ भी असम्भव नहीं!!

कुछ ही वर्ष पहले की बात है दिल्ली में एक विश्व प्रदर्शनी का आयोजन किया गया था। इस प्रदर्शनी में अमेरिका की ओर से ऐरो-कार (Aerocar) प्रस्तुत की गई थी। यह अद्‌भुत कार भूमि छोड़कर वायु में दौड़ सकती थी। एक संन्यासी ने जब इस कार को देखा तो, वह

आश्चर्यचकित होकर रह गया। सहसा उसके मुख से जो शब्द निकले वे ये थे :

> "आज मैं चिन्ता में पड़ गया कि जिस चीज़ की मुझे तलाश है वह कहीं यही ना हो और मैं उसे वीरान और निर्जन स्थानों में खोज रहा हूँ।"

वह संन्यासी हवा में दौड़ती कार को देखकर केवल इसलिए चकित हुआ कि इससे पहले उसने ऐसी कार देखी नहीं थी और उसके मन ने अचेतन रूप में यह धारणा ग्रहण कर रखी थी कि ऐसा अद्भुत दृश्य वह कभी न देख सकेगा। उसने सम्भव को ही सम्भव होते देखा, लेकिन यह सम्भव उसके विचार में असम्भव था। इसी चीज़ ने उसे एक तरह की हैरानी में डाल दिया, जिसका पता उसके मुख से निकले शब्दों से चलता है। वैज्ञानिकों के आज कितने ही प्रकार के ऐसे आविष्कार हैं कि जिनकी चर्चा यदि आज से कुछ शताब्दी पहले कोई करता तो लोग उनको असम्भव ही समझते, हालाँकि आज उनपर किसी को थोड़ा भी आश्चर्य नहीं होता। इससे पता चलता है कि किसी चीज़ को आँखों से न देखना इसका प्रमाण नहीं है कि वह चीज़ अनिवार्यतः असम्भव भी है। क़ुरआन में है :

> "जो लोग हमसे मिलने की आशा नहीं रखते और सांसारिक जीवन ही पर निहाल हो गए हैं और उसी पर संतुष्ट हो बैठे, और जो हमारी निशानियों की ओर से ग़ाफ़िल हैं,...।"
>
> (क़ुरआन, 10/7)

यह है इनकार करनेवालों की वास्तविक स्थिति। वे अल्लाह की निशानियों पर विचार नहीं करते, इसी लिए उन्हें घोर निराशा ने जकड़ लिया है। वर्तमान जीवन से आगे की कामना गवाँ बैठे हैं। जो कुछ उन्हें संसार में प्राप्त है उसी पर राज़ी हो गए। वे अपनी गरिमा को भूल गए और परमेश्वर के प्रथम उपहार को ही अन्तिम उपहार समझ बैठे। विचित्र है उनकी यह दयनीय दशा!

रही यह बात की यह संसार यूँ ही चलता आया है और यूँ ही चलता रहेगा, केवल विचारहीनता की परिचायक है। किसी भव्य भवन को देखकर हम यह कहने लगें कि यह सदैव बना रहेगा, इसलिए कि हम इसे गिरते हुए नहीं देख रहे हैं, हास्यास्पद है। एक इंजीनियर उस भवन का परीक्षण करके सरलता से उसकी आयु का अनुमान कर सकता है। इसके अतिरिक्त कोई भी भूकम्प, वज्रपात आदि दैवी आपदा उस भवन को क्षण भर में धराशायी कर सकती है। केवल भवन को भूमि पर खड़ा देखना और अन्य सम्भावनाओं की ओर ध्यान न देना अपनी विचार-शक्ति का हनन करना है। अब तो ताप सम्बन्धी गतियों के द्वितीय नियम (Second Law of Thermo-Dynamics) ने यह सिद्ध कर दिया है कि यह भौतिक ब्रह्माण्ड न तो अनादि कालिक है और न सार्वकालिक। अनिवार्यतः इसका कोई आरम्भ भी है और अन्त भी। अतः आरम्भ और अन्त के मध्य में अवस्थित इस लीलाक्रम को इसके आरम्भ और अन्त से काटकर इसपर विचार करने से कदापि हम किसी सही नतीजे पर नहीं पहुँच सकते।

यह विचार निराधार है कि यह संसार हमेशा से है और ऐसे ही हमेशा चलता रहेगा। इस विचार का भी कोई आधार नहीं कि इस जगत् के पीछे कोई योजना नहीं है, यह भौतिक जगत् है, भौतिकता ही इसका आधार है, न कोई परलोक है और न मरने के पश्चात् कोई अन्य जीवन है और न कोई ईश्वर है जिसके समक्ष हमें पहुँचकर अपने भले-बुरे कर्मों का हिसाब देना हो।

यह केवल एक दावा है जो अपने पीछे कोई दलील और प्रमाण नहीं रखता, और अब तो यह बात स्पष्ट हो चुकी है कि न यह दुनिया सदैव से है ओर न सदैव रह सकती है। भौतिक पदार्थ का ज़ोर भी अब बाक़ी नहीं रहा। पदार्थ (Matter) अब अस्तित्व की आख़िरी कड़ी नहीं रहा। आज का अनुसंधान बताता है कि जिसे हम पदार्थ कहते हैं उसका आधार अभौतिक है। मानव साधारणतया अभौतिक वस्तु को नहीं पकड़

पाता। इसी लिए भौतिकशास्त्र में भौतिक जगत् के बारे में तमाम बातचीत संकेतों (Symbols) के द्वारा की जाती है। जे. एस. हॉल्डेन (J.S. Haldane) ने लिखा है :

> "जीवन और मानव-व्यक्तित्व (Personality) का अस्तित्व इस तथ्य का प्रमाण है कि हमारी दुनिया की केवल भौतिक व्याख्या सम्भव नहीं है और यह व्याख्या असम्भव ही रहती है, चाहे काल (Time) की दृष्टि से कितने ही पीछे और देश एवं दिक् (Space) की दृष्टि से कितने ही ऊँचे क्यों न चले जाएँ। जीवन को पीछे ले जाने से उसकी भौतिक व्याख्या कदापि न मिल सकेगी, न ही मानव-व्यक्तित्व को पीछे ले जाने से हम किसी ऐसे स्थान तक पहुँच पाएँगे जहाँ हम कह सकें कि मानव-व्यक्तित्व इस तरह पदार्थ से पैदा हो गया।" (The Philosophical Basis of Biology P. 122)

अलबर्ट आईंस्टीन (Albert Einstein) के अनुसंधान की दृष्टि से ब्रह्माण्ड जो हमें वस्तुओं का समूह दिखाई देता है एक ठोस वस्तु नहीं जो वायु मण्डल में पड़ी है। यह वस्तु (Thing) है ही नहीं, बल्कि क्रिया (Action) है या घटनाओं (Events) का भवन है।

भौतिकता की स्थिति आज यह है कि पदार्थ को सब कुछ समझ बैठनेवालों के लिए इसमें बड़ा सबक़ है। अब यह कहना बुद्धिमत्ता की बात न होगी कि जो कुछ है यह निर्जीव पदार्थ ही है। रहा यह विचार कि परलोक और ईश्वर की कल्पना अन्धविश्वास है, तो इस प्रकार के विचार रखनेवाले जीवन और जगत् का सूक्ष्म निरीक्षण नहीं करते और न सोच-विचार से काम लेते हैं। ईश्वर और परलोक को माने बिना इस जीवन और जगत् की पहेली हल नहीं होती।

कुछ लोगों का कहना है कि ब्रह्माण्ड की वर्तमान व्यवस्था नश्वर एवं नवोत्पन्न है। एक समय में यह लीला समाप्त हो सकती है। जो व्यक्ति मर गया वह पुनः पैदा नहीं हो सकता। यह तो सत्य है कि

जगत् की वर्तमान व्यवस्था नश्वर है। यह व्यवस्था सदैव बनी नहीं रहेगी। लेकिन यह विचार निर्मूल है कि जो मर गया वह पुनः पैदा नहीं हो सकता। शायद वे ऐसा इसलिए कहते हैं कि उन्होंने किसी मरे हुए को पुनः जीवित होते नहीं देखा। लेकिन यह कोई दलील नहीं है कि जिस घटना को हमने देखा न हो वह सम्भव नहीं हो सकती। हम कितने ही लोगों को दुनिया में पैदा होते देखते हैं। वे नहीं थे और पैदा हो गए। फिर जब वे नहीं होंगे तो फिर क्या पैदा नहीं हो सकते? इसे असम्भव तो नहीं कहा जा सकता। असम्भव हम इसलिए समझ लेते हैं कि साधारणतया हम उन बातों को मानने के आदी बन गए हैं, जिनको देखने का हमें अभ्यास हो जाता है। जिन बातों को हमने नहीं देखा उनका मानना हमारी दृष्टि में मानने की श्रेणी में नहीं आता। हम उनको असम्भव कह देते हैं। यह हमारी असावधानी है। हम सोचते हैं कि यह तो चमत्कार है, भला यह कैसे हो सकेगा! हालाँकि दुनिया की सारी चीज़ें चमत्कार हैं। यदि ये हमें अचानक दिखाई जातीं तो हम विस्मय से भर जाते और आश्चर्यचकित हो जाते। समझते यह तो चमत्कार हो गया। चमत्कार को देखने के पश्चात् चमत्कार की संभावना को स्वीकार करना पड़ता है, किन्तु विस्मय दृष्टि से हमने जगत् को देखा ही नहीं।

पुनर्जीवन सम्भव है। पुनर्जीवन स्वयं जीवन से अधिक आश्चर्यजनक नहीं। जब ईश्वर है तो उसे हर चीज़ की सामर्थ्य भी प्राप्त है। पुनर्जीवन आवश्यक है। आवश्यक की पूर्ति अवश्य होगी। परलोक अवश्य सामने आएगा। वह कुछ और चीज़ नहीं, जीवन का ही अगला चरण है। वह वर्तमान जगत् का ही विकसित रूप है।

कुछ लोग परलोक को मानते हैं और स्वर्गलोक और नरक (जन्नत और दोज़ख़) को भी स्वीकार करते हैं; किन्तु इसके साथ ही उनमें ईश्वर के प्रति जो धारणाएँ पाई जाती हैं; वे अत्यंत विकृत एवं दोषयुक्त हैं। वे ईश्वर को मानव की भाँति पत्नी, पुत्र व संतानवाला और दुख-सुख

और काल से प्रभावित मानते हैं। इससे उस सर्वोच्च सत्ता के प्रति निरादर तो होता ही है लेकिन साथ ही उनकी परलोक और स्वर्ग-नर्क की धारणा निरर्थक होकर रह गई। उदाहरणतः ईसाई समुदाय के लोगों ने ईसा को ईश्वर का पुत्र मान लिया और उनकी धारणा यह है कि ईश्वर ने अपने इकलौते बेटे को सलीब (क्रॉस) पर मृत्यु देकर मानव के गुनाह का प्रायश्चित कर दिया है। अपने बुरे कर्मों के बुरे फल से बचने के लिए बस यही काफ़ी है कि आदमी ईश्वर के पुत्र पर विश्वास करे। फिर इसके साथ वे यह भी मानतें हैं कि मानव जन्मजात पापी है, पैदाइशी गुनाहगार है। यह गुनाह का बोझ इसी उपाय से हट सकता है कि मनुष्य ईश्वर के पुत्र ईसा मसीह (अलै॰) पर ईमान लाए।

यह विचार अत्यन्त हास्यास्पद है। मानव को पैदाइशी गुनाहगार कहना स्वयं एक महापाप है। गुनाह करने के बाद तो आदमी गुनाहगार हो सकता है, किन्तु बिना गुनाह किए मनुष्य गुनाहगार होता है यह न्यायसंगत कैसे हो सकता है? यदि हज़रत आदम (अलै॰) से कोई भूल-चूक हुई भी तो यह कैसे ज़रूरी हो गया कि उनकी सन्तान में सब-के-सब गुनाहगार पैदा हों।

इसके अतिरिक्त इस गुनाह से छुटकारे की जो विधि बताई जाती है कि आदमी ईसा मसीह पर ईमान लाए, तो सवाल यह है कि ईश्वर का कोई बेटा या पुत्र कैसे हो सकता है? वह तो निरपेक्ष एवं परम-सत्ता है। उसका कोई वंशज या पुत्र हो, इसका प्रश्न ही नहीं उठता। फिर गुनाहों से छुटकारे के लिए किसी को सूली पर चढ़ाने की क्या आवश्यकता थी, ईश्वर गुनाह को यूँ ही बिना सूली पर मृत्यु दिए ही क्षमा कर सकता था।

फिर गुनाह और अपराध का व्यक्ति के मनोविकार और अपराध-वृत्ति से गहरा सम्बन्ध है। किसी अन्य के प्रायश्चित करने से उसका सुधार कैसे हो सकता है? जब तक किसी आदमी को अपने किए पर

पछतावा न हो और गुनाह की क्षतिपूर्ति की चेष्टा न करे और वह अपने प्रभु को राज़ी करने का स्वयं प्रयास न करे, गुनाह के प्रभावों से छुटकारा कैसे मिल सकता है?

कुछ लोग इस भ्रम में पड़े हुए हैं कि परलोक में वे महापुरुष उनके काम आ जाएँगे जो ईश्वर के प्रिय हैं या उन्हें ईश्वर के यहाँ ऐसा अधिकार प्राप्त है कि जिसको चाहेंगे नरक की यातना से बचा लेंगे। उनकी सिफ़ारिश को ईश्वर टाल नहीं सकता। जो लोग उन महान् पुरुषों से श्रद्धा रखते हैं, उनका काम नहीं बिगड़ेगा। वे दुनिया में कुछ भी करें; जिन बुज़ुर्गों से वे सम्बद्ध हैं वे उनकी बिगड़ी बना देंगे। इस प्रकार का विचार रखनेवाले आख़िरत को मानकर उसकी वास्तविकता का निषेध करते हैं। यदि ऐसे ही केवल सिफ़ारिश से काम बन सकता तो फिर मनुष्य को दुनिया में भेजने की कोई विशेष आवश्यकता नहीं रहती। इसके लिए फिर इसकी क्या आवश्यकता थी कि मानव को दुनिया के विकट कर्म-क्षेत्र से गुज़ारा जाए। क़ुरआन ने स्पष्ट रूप से बता दिया कि सिफ़ारिशों के सहारे जीना मानव की बड़ी भूल है। अनुचित सिफ़िरिशों से वहाँ काम बनने का नहीं है। वह कहता है :

> "और (ईश्वर कहेगा :) निश्चय ही तुम उसी प्रकार एक-एक करके हमारे पास आ गए जिस प्रकार हमने तुम्हें पहली बार पैदा किया था, और जो कुछ हमने तुम्हें दे रखा था उसे अपने पीछे छोड़ आए, और हम तुम्हारे साथ तुम्हारे उन सिफ़ारिशियों को भी नहीं देख रहे हैं जिनके विषय में तुम दावे से कहते थे कि तुम्हारे मामले में वे भी (ईश्वर के) शरीक हैं।"
>
> (क़ुरआन, 6/94)

> "और उस दिन से डरो जब कोई किसी के काम न आएगा, और न किसी की ओर से कोई सिफ़िरिश क़बूल की जाएगी, और न किसी से कोई फ़िद्या (अर्थदण्ड) लिया जाएगा, और न वे सहायता ही पा सकेंगे।" (क़ुरआन, 2/48)

मुस्लिमों और ईमानवालों को सचेत करते हुए क़ुरआन ने कहा है :

"ऐ ईमान लानेवालो! जो कुछ हमने तुम्हें दिया है उसमें से ख़र्च करो इससे पहले कि वह दिन आ जाए जिसमें न कोई सौदा होगा, न कोई मित्रता, और न कोई सिफ़ारिश।"

(क़ुरआन, 2/254)

एक और स्थान पर बहुदेववादियों के बारे में कहा है :

"और जिन्हें वे उसके (अर्थात् ईश्वर के) और अपने बीच माध्यम ठहराकर पुकारते हैं उन्हें सिफ़ारिश का कुछ भी अधिकार नहीं।" (क़ुरआन, 43/86)

एक अन्य स्थान पर सचेत किया गया है :

"कौन है जो उसके (ईश्वर के) सामने बिना उसकी अनुज्ञा के सिफ़ारिश कर सके?" (क़ुरआन, 2/255)

पुनर्जन्म की धारणा

एक धारणा पुनर्जन्म या आवागमन की भी पाई जाती है। इस धारणा की दृष्टि से मानव अपने भले-बुरे कर्मों का फल पाने के लिए बार-बार इसी संसार में जन्म लेता है, कर्म के अनुसार कभी वह मानव योनि में जन्म लेता है और कभी पशु-पक्षी, कीड़े-मकोड़े, पेड़-पौधे आदि के रूप में दुनिया में आता है। गुनाहों और पापों के प्रभाव से जब आत्मा विकृत हो जाती है और उसमें अत्यन्त बुरी योग्यताओं का आविर्भाव हो जाता है तो वह पशुओं या वनस्पति आदि की श्रेणी में चली जाती है, और कर्म अच्छे हैं तो इससे उसमें अच्छी योग्यता उभरेगी और इसके परिणामस्वरूप वह उच्च श्रेणी में चली जाएगी। सारांश यह है कि आत्मा को बार-बार इसी मृत्युलोक में अपने पिछले कर्मों का फल भोगने के लिए आना पड़ता है।

यह धारणा एक समय में बहुत ही लोकप्रिय रही है। यूनान में भी कुछ लोग इसे मानते थे और रोम में भी इसकी चर्चा रही है। मिस्र के

सम्बन्ध में कुछ खोजी विद्वानों का तो मत यहाँ तक है कि इस धारणा का जन्म ही मिस्र में हुआ है। वहाँ के निवासियों ने सर्वप्रथम ऐसा कहा और विश्वास किया कि मानव-आत्मा अमर है और शरीर की मृत्यु हो जाने पर यह किसी अन्य जीवित वस्तु में, जो जन्म लेनेवाली होती है, प्रवेश कर जाती है। बाह्य प्रभावों से यहूदियों में भी एक समय में यह धारणा प्रविष्ट कर गई थी। अब यह धारणा दुनिया की कुछ जंगली या असभ्य जातियों में पाई जाती है या फिर भारत में ब्राह्मणों, बौद्धों, जैनियों, सिखों आदि में इस धारणा को मान्यता प्राप्त है। शेष सभ्य जातियाँ इस धारणा को रद्द कर चुकी हैं। ज्ञान-विज्ञान की उन्नति ने जीवन-सम्बन्धी जो जानकारी हमें दी है उससे उन समस्त विचारों एवं धारणाओं का निषेध होता है जिनपर पुनर्जन्म की धारणा निर्भर करती है।

पुनर्जन्म या आवागमन की धारणा वेदों में नहीं मिलती; ऐसा वेदज्ञों एवं विद्वानों का मानना है। यह धारणा अवैदिक है। आर्य परलोक में विश्वास रखते थे। उनकी धारणा यह थी कि मृत्यु के पश्चात् मानव को एक दूसरा जीवन मिलता है, जो बुरे लोगों के लिए कष्टदायक और यातनाओं से पूर्ण और अच्छे लोगों के लिए अत्यन्त सुखमय होता है। मन्त्र एवं ब्राह्मणकाल में पितर-लोक को मान्यता प्राप्त थी। आवागमन की धारणा की कोई गुंजाइश न थी। तदपि सूत्र-काल में पितर-लोक की धारणा के साथ हमें यदाकदा आवागमन की धारणा मिलती है। पुराणों का समय आते-आते परलोक और पुनर्जन्म की दोनों धारणाएँ समानरूप से मिलने लगती हैं। हालाँकि ये दोनों परस्पर विरोधी धारणाएँ हैं।

पुनर्जन्म की धारणा को स्वीकार करने से केवल यही नहीं कि यह धारणा परलोक की धारणा से टकराती है, बल्कि इससे स्वयं धर्म को क्षति पहुँचती है। धर्म शिक्षित व्यक्तियों की निगाह में अवैज्ञानिक एवं अबौद्धिक ठहरेगा। धर्म निगाहों से गिर जाएगा। वह मात्र अन्धविश्वास

होकर रह जाएगा। उसमें कोई आकर्षण न होगा। वह कोई शक्ति बनकर जीवन में न उतर सकेगा। जीवन पर उसका कोई रचनात्मक प्रभाव न पड़ सकेगा, बल्कि व्यावहारिक जीवन से उसका कोई सम्बन्ध न होगा और यदि उसका कोई प्रभाव पड़ेगा भी तो वह कोई अच्छा प्रभाव न होगा।

साधारणतया मानव में वर्तमान लोक का कुछ ऐसा मोह बसा होता है कि इस दुनिया से अलग दुख-सुख की कल्पना नहीं कर पाता। वह कर्म और उसके फल को इसी दुनिया में पा लेने का अभिलाषी है। वह इस मृत्यु-लोक को ही अपना सब कुछ समझता है। वह नहीं समझता कि ईश्वर की दयालुता को मृत्युलोक तक सीमित समझना किसी भी प्रकार उचित नहीं हो सकता। जीवन की सम्भावनाएँ इस संसार से बढ़कर हैं। इस संसार में तो जीवन का अंकुर फूटता है, उसके विकसित रूप की यहाँ समाई नहीं। यहाँ मानव की जिज्ञासा बनी ही रहती है। मानव-हृदय तो उस लोक की कामना करता है जो उसकी जिज्ञासाओं और कामनाओं का समुचित उत्तर हो; जहाँ उसे अपनी हर कामना पूरी होती दिखाई दे, जहाँ किसी प्रकार का अवरोध शेष न रहे। जो हमारी शारीरिक अपेक्षाओं के अनुकूल भी हो। जो हमारी कल्पनाओं और अभिलाषाओं का लोक हो। मानव-मन की अभिलाषा ने कितनी कथाओं की रचना की है जो अत्यन्त आकर्षक और रोचक होने के बावजूद अस्वाभाविक घोषित की जाती हैं। उनके प्रिय होते हुए अस्वाभाविक होने का कारण यह है कि उन कथाओं की सकारात्मकता हमारी कल्पनाओं के संसार में तो होती है, किन्तु वर्तमान जगत् के वास्तविक धरातल पर वे काल्पनिक होकर रह जाती हैं और मानव-हृदय पर निराशा की रेखाएँ छोड़ जाती हैं।

पुनर्जन्म की कल्पना को जब हम तर्क की कसौटी पर कसकर देखते हैं तो इसका खोट हमारे सामने आ जाता है और यह धारणा इस योग्य नहीं रहती कि इसे मान्यता दी जा सके। इसके कई कारण हैं :

1. सवाल यह है कि सबसे पहले मानव की रचना हुई जो श्रेष्ठ है या सबसे पहले वनस्पति और पशुओं की रचना हुई? मानव होने के लिए आवश्यक है कि उससे पहले वनस्पति और पशु हों जिनसे मानव की आवश्यकताएँ पूरी हों। यदि वनस्पतियाँ न हों, पशु न हों तो मानव आख़िर क्या खाएगा? उसे सेवन के लिए दूध-दही आदि कहाँ से मिल सकेंगी? और यदि हम सबसे पहले वनस्पति और पशु की सृष्टि को स्वीकार करें, तो समस्या यह खड़ी हो जाएगी कि आख़िर इनकी सृष्टि किन बुरे कर्मों के कारण हुई? इनके पहले हमें मानवों की सृष्टि को स्वीकार करना पड़ेगा जिनको अपने बुरे कार्मों के कारण निम्नकोटि की श्रेणी में आना पड़ा। इस प्रकार हम सृष्टि का आरम्भ न मानव से मान सकते हैं और न पशुओं से।

यदि आवागमन के चक्र को अनादिकालिक और शाश्वत मानते हैं तो यह भी मानना पड़ेगा कि आत्माएँ ही नहीं, बल्कि वे पदार्थ भी अनादिकालिक हैं जिनके द्वारा आत्माओं को विभिन्न प्रकार की काया और शरीर मिला है। और यह भी मानना पड़ेगा कि यह धरती और आकाश और सौर जगत् आदि की व्यवस्था भी अनादिकालिक है, किन्तु तर्क और वैज्ञानिक अनुसंधानों से पता चलता है कि वर्तमान लोक की व्यवस्था न तो अनादिकालिक है और न इसे शाश्वत कहा जा सकता है। इसका एक आरम्भ है और इसका अन्त भी निश्चित है।

किसी चलनेवाली प्रक्रिया या चक्र को अनादिकालिक कहा भी नहीं जा सकता। किसी विशेष कार्य की क्रम-शृंखला को पीछे अनन्त तक नहीं ले ज़ाया जा सकता। यह असम्भव है। इसका कोई न कोई प्रारम्भ मानना ही पड़ेगा। कहीं-न-कहीं जाकर हमें ठहरना ही पड़ेगा। कार्य का आरम्भ तो मानना ही पड़ेगा। अन्त उसका भले ही न हो।

2. पुनर्जन्म की धारणा के अनुसार ईश्वर स्त्री और पुरुष दोनों को आरम्भ में नहीं पैदा कर सकता, क्योंकि यह न्याय के विरुद्ध होगा कि बिना कर्म के अन्तर के आत्माओं को स्त्री-पुरुष दो विभिन्न जातियों में

विभक्त कर दे। अब या तो आरम्भ में सभी को उसने स्त्री बनाया होगा या पुरुष और सबको समान योग्यताएँ और समान स्थितियाँ प्रदान की होंगी। अब प्रश्न यह है कि जब हर पहलू से सब समान थे तो उनके कर्मों में भी समानता होनी चाहिए, और अगले जन्म में भी उनमें हर प्रकार से समानता होनी चाहिए, किन्तु अगला जन्म होगा भी कैसे जबकि कर्मों में समानता के कारण उनका जोड़ा नहीं बन सकता। जब तक कर्मों में अन्तर न हो उसमें से कुछ स्त्री और कुछ पुरुष कैसे हो सकते हैं? फिर स्त्री के बिना पुरुष का जीवन अपूर्ण और इसी प्रकार पुरुष के बिना स्त्री का जीवन अधूरा रहता है। इस दृष्टि से देखा जाए तो प्रारम्भिक जीवन में भी स्त्री-पुरुष दोनों होने चाहिएँ। और पुनर्जन्म की धारणा के अनुसार ऐसा होना असम्भव है कि ईश्वर बिना कर्मों के अन्तर के किसी को स्त्री और किसी को पुरुष बना दे। और यदि वह ऐसा करता है तो वह कर्म के बिना पशु-पक्षी, वनस्पति आदि सब कुछ पैदा कर सकता है। हम क्यों यह समझें कि यह सब कुछ कर्मों का फल है।

3. आत्म-चेतना और भलाई-बुराई का ज्ञान मानव को ही प्राप्त है। पशुओं और वनस्पतियों में न तो आत्म-चेतना (Self-consciousness) होती है और न भलाई या बुराई का उन्हें कोई ज्ञान होता है। ऐसी स्थिति में न तो उनका कोई नैतिक दायित्व बनता है और न कोई नैतिक चरित्र।

यही कारण है कि हम मानव के कर्म और उसके चरित्र को देखकर उसके अपराधी या पुण्यात्मा होने की बात करते हैं, किन्तु किसी पेड़-पौधे या पशु के बारे में हमारा इस प्रकार का निर्णय नहीं होता। हालांकि पुर्नजन्म की धारणा की दृष्टि से तो पशुओं की भी ऐसी स्थिति होनी चाहिए कि उनकी ओर से विचार, भावना और चरित्र का प्रदर्शन हो और वे यदि चाहें तो अपने चरित्र और कर्म के द्वारा ऐसी योग्यता पैदा कर लें कि उनको पुनः मान-योनि प्राप्त हो सके। लेकिन वैज्ञानिक प्रयोगों और अनुभवों ने सिद्ध कर दिया है कि पशुओं और पेड़-पौधों

के द्वारा न तो नैतिक एवं आध्यात्मिक विचारों और भावनाओं की अभिव्यक्ति होती है और न किसी नैतिक या आध्यात्मिक व्यवहार या चरित्र का ही प्रदर्शन होता है। अतः स्पष्ट है कि उनके बारे में यह विचार कि वे अपने अच्छे कर्म और भावनाओं के सहारे निम्न श्रेणी से छूटकर पुनः मानव की उच्च श्रेणी में प्रविष्ट हो सकते हैं; नितान्त उपहासजनक है।

फिर मनुष्य एक मान-योनि में इतने सारे भले या बुरे या मिले-जुले कर्म कर जाता है कि उन्हीं का फल पाने के लिए हज़ारों गुना दीर्घ जीवन अपेक्षित है। और यदि उसे कर्म करने का अवसर बार-बार जुटाया जाए तो फिर पुनर्जन्म के चक्र से उसके मुक्त होने का कोई सवाल ही पैदा नहीं होता।

4. दण्ड या सज़ा के लिए न्यायसंगत बात यह है कि अपराधी को अनिवार्यतः यह पता हो कि उसने पिछले जन्म में ये बुराइयाँ की थीं जिनके कारण उसे यह सज़ा मिल रही है, किन्तु जानवरों और पौधों को तो छोड़िए स्वयं मानव को इसका पता नहीं होता कि वह पिछले जन्म में क्या था और किस कर्म के परिणाम स्वरूप वह मनुष्य बना और सुख या दुख भोग रहा है।

दण्ड का एक पहलू यह भी है, जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती, कि आदमी के अत्याचारों और बुराइयों से जो लोग प्रभावित हुए हों, जिनको उससे क्षति पहुँची हो वे जान सकें कि उनके साथ बुरा व्यवहार करनेवाला क्या दण्ड भोग रहा है, किन्तु यहाँ ऐसा होता दिखाई नहीं देता।

फिर पशुओं और वनस्पतियों आदि का निरीक्षण कीजिए। आप देखेंगे कि उनका जीवन, उनकी शारीरिक शक्ति आदि उनकी अभिरुचि और स्वभाव के अनुकूल ही है, फिर इस स्थिति को दण्ड कैसे कहा जा सकता है?

5. यदि पशुओं की अभिवृद्धि और वनस्पतियों की उपज पाप और गुनाहों का नतीजा है, फिर तो पाप को धन्यवाद देना चाहिए कि उसी के कारण हमारे लिए आहार और सुख उपलब्ध हो रहा है। और यदि हम चाहते हैं कि हमारे यहाँ दूध की नदियाँ बहें और ख़ूब अन्न उपजे, तो पुनर्जन्म की ऐसी धारणा रखनेवालों की नज़र में इसका वास्तविक उपाय यह होगा कि पाप को बढ़ावा दिया जाए और भलाई और पुण्य के मार्ग में अवरोध उत्पन्न किया जाए। लेकिन शायद इस उपाय का समर्थन करने के लिए एक व्यक्ति भी तैयार न होगा।

6. इस पुनर्जन्म की यह भी धारणा है कि जो दुखी और निस्सहाय मनुष्य है, वह अपने पिछले जन्मों के बुरे कर्मों का दण्ड भोग रहा है और ईश्वर उसे उसके पिछले जन्म के दुष्कर्मों का दण्ड दे रहा है। जब एक दुखी और पीड़ित व्यक्ति वास्तव में अपने न्याय का फल पा रहा है तो उसपर दया करनी और उसके साथ सहनुभूति से काम लेना अनुचित ही नहीं, अपराध होगा। मानव के लिए यह कैसे सही हो सकता है कि ईश्वर जिसे दण्ड दे रहा हो, हम उसकी किसी प्रकार की सहायता करें।

यदि कोई पुत्र अपने पिता को मार रहा हो और उसके साथ अशिष्ट व्यवहार कर रहा हो तो हम उसे उसके इस दुर्व्यवहार से कैसे मना कर सकते हैं? यदि हम उसे रोकते हैं तो वह कह सकता है कि जो कुछ हो रहा है, वह तो कर्मों का फल है। इसने पिछले जन्म में मुझे सताया है, उसी का बदला आज मैं इससे ले रहा हूँ।

7. फिर यह भी एक तथ्य है कि आदमी के भले-बुरे कर्मों के प्रभाव उसके जीवन के साथ समाप्त नहीं हो जाते, बल्कि उसके मरने के बाद शताब्दियों तक बल्कि उससे भी अधिक दीर्घकाल तक उसके कर्मों का भला या बुरा प्रभाव वर्तमान रहता है, जिसका उत्तरदायित्व उसी व्यक्ति पर होता है। इसी प्रकार एक नस्ल जो कुछ करती है उसके

प्रभावों का सिलसिला भी उसके बाद की पीढ़ियों में शताब्दियों तक जारी रहता है और वह इसके लिए उत्तरदायी भी होती है। अतः अच्छे कर्मों के मूल्यांकन और बुरे कर्मों की बुराई को आँकने के लिए आवश्यक है कि कर्मों के समस्त प्रभावों को देखा जाए और उनके प्रमाण जुटाए जाएँ और अपराधियों को उन सारे ही लोगों के सामने दण्ड का आदेश सुनाया जाए, जिनको उसके कारण किसी प्रकार की हानि पहुँची हो। यह हानि धन और प्राण संबंधी भी हो सकती है और मान एवं मर्यादा सम्बन्धी भी। फिर सोचिए, क्या किसी ऐसे व्यक्ति को इस वर्तमान लोक में सज़ा दी जानी सम्भव भी है? आप विचार करेंगे तो इसी निष्कर्ष पर पहुँचेंगे कि इस लोक में न किसी को पूरी सज़ा दी जा सकती है और न पूरे तौर पर किसी को पुरस्कृत किया जा सकता है। कारण यह है कि न अभी व्यक्तियों और जातियों के कर्मों और नीतियों के पड़नेवाले प्रभावों की शृंखला का अन्त हुआ है और न आज उन सारे लोगों को एक साथ एकत्र किया जा सकता है जो किसी या किन्हीं के कर्मों से प्रभावित हुए हैं या भविष्य में होंगे। विदित है, ऐसा तो इस दुनिया में सम्भव होता दिखता नहीं। ऐसा तो केवल परलोक ही में हो सकेगा; जहाँ आरम्भ से लेकर प्रलय तक के लोग एकत्र किए जाएँगे और व्यक्तियों और जातियों के भले-बुरे कर्मों के प्रभावों का भी पूरा-पूरा हिसाब किया जा सकेगा।

पुनर्जन्म और मानसिक रोगों के विशेषज्ञ

कभी-कभी इस प्रकार की बातें कही जाती या समाचार-पत्रों में पढ़ने को मिलती हैं कि अमुक व्यक्ति अपने पूर्वजन्म की बातें बताता है। इससे यह समझ लिया जाता है कि पुनर्जन्म की धारणा सत्य है। इस प्रकार की सूचनाओं पर यह प्रश्न किया जा सकता है कि इसका कारण क्या है कि पिछले जन्म की बातें केवल दो-चार व्यक्तियों को ही यांद रहीं, शेष सारे लोगों को अपने पिछले जन्म की घटनाएँ

क्यों याद नहीं रहीं? विशेषज्ञों ने तो अब यह सिद्ध कर दिया है कि इस प्रकार की सूचनाएँ सर्वथा झूठी हैं और उनका विश्लेषण एवं खोज करने पर वे सत्य सिद्ध नहीं हो सकीं। ये नितांत असत्य सूचनाएँ हैं कि कुछ लोगों को अपने पूर्वजन्म की बातें याद हैं। हिन्दुस्तान टाइम्स, (दिल्ली), ने यू.एन.आई. के माध्यम से अपने 7 अक्टूबर सन् 1968 ई. के अंक में यह समाचार प्रकाशित किया कि मनोविज्ञान के विशेषज्ञों (Psychologists) ने कुछ केसों की जाँच-पड़ताल करने के पश्चात् यह मत प्रकट किया है कि कुछ लोग जो अपने पूर्वजन्म की बातें बयान करते हैं, वे अधिकतर मानसिक हिस्टीरिया (Psychic Hysteria) का परिणाम होते हैं। जयपुर के मानसिक रोगों के अस्पताल के सुपरिटेण्डेण्ट डॉक्टर बी.के. व्यास और एक अन्य विशेषज्ञ श्री रत्नसिंह का दावा है कि उन्होंने कुछ केसों का इलाज किया है जिसमें उन्हें सफलता मिली है। डॉ. व्यास ने यू.एन.आई. को इण्टरव्यू देते हुए कहा कि जो लोग पूर्वजन्म की घटनाएँ बयान करते हैं उनकी मानसिक स्थिति साधारणतया सन्तुलित नहीं होती। ये अधिकतर व्यक्तिगत समस्याओं से सम्बद्ध होती हैं। ये लोग मानसिक असन्तुलन के कारण कुछ और बनने के इच्छुक रहते हैं। इस प्रकार मनगढ़न्त क़िस्से बयान करने से कुछ दूसरे लाभ प्राप्त हो जाते हैं। डॉक्टर व्यास ने कुछ केसों के विवरण भी दिए हैं।

पुनर्जन्म का प्रभाव मानव-जीवन पर

पुनर्जन्म की धारणा यही नहीं कि तर्कसंगत नहीं है, बल्कि अव्यवहारिक भी है। जब भी इसे पूर्णतः मान्यता दी गई इसके भयंकर परिणाम सामने आए हैं। विस्तार का भय न होता तो इतिहास में घटित इसके भयंकर परिणामों को दिखाया जा सकता था। आज यदि कोई व्यक्ति पूरे तौर पर इस धारणा का पालन करने लगे तो उसे कोई धर्मात्मा तो क्या एक सज्जन व्यक्ति भी मानने को तैयार न होगा। यही कारण है कि पुनर्जन्म माननेवालों का आचरण भी पूर्णतः इस धारणा के

अनुकूल नहीं होता। वे व्यवहारतः स्वयं अपनी धारणा का खण्डन करते दीख पड़ते हैं और जितना अधिक कोई इस धारणा की अपेक्षाओं और माँगों की उपेक्षा करता है, उतने ही अधिक मानवता के गुण उसमें पैदा होते हैं। उदाहरणार्थ पुनर्जन्म की धारणा के अनुसार हमें दीन-दुखी, असहाय, विधवाओं और लूले-लंगड़े व्यक्तियों के प्रति कदापि दया नहीं दिखानी चाहिए, क्योंकि वे अपनी करनी की सज़ा पा रहे होते हैं। अपराधी की सहायता करनी घोर अपराध, बल्कि सरकारी निर्णय की अवहेलना और द्रोह है। यही कारण है कि महाभारत में स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि गूंगे, कान्तिहीन (कुरूप), अपंग, बौने, नीच वंशवाले और व्रत एवं संस्कार से शून्य (अर्थात जनेऊ धारण न करनेवाले) को दान नहीं देना चाहिए। (महाभारत 12/36/38) इसी में यह भी कहा गया है कि यदि जो बताए गए नियम से हटकर अपात्र को दान देता है वह दान अनर्थकारी होता है। (महाभारत 12/36/39)

अब आप स्वयं विचार करें। यदि कोई व्यक्ति या कोई समाज इस शिक्षा का दृढ़तापूर्वक पालन करने लगे तो क्या दुनिया की दृष्टि में वह व्यक्ति या समाज सभ्य कहलाने का अधिकारी रह सकता है? यही कारण है कि पुनर्जन्म को मानने के बावजूद लोग व्यवहार के क्षेत्र में उसका निर्वाह नहीं कर पाते। क्या यह इस बात का प्रमाण नहीं है कि पुनर्जन्म की धारणा मानव-स्वभाव और मानवीय प्रकृति के सर्वथा प्रतिकूल है। मानव-प्रकृति और इस धारणा में अनुकूलता नहीं पाई जाती।

पुनर्जन्म की धारणा को अपनाने से मानव-जीवन पर अत्यन्त दुखद और भयानक प्रभाव पड़ते हैं। किसी समाज में जिसने इस धारणा को अपनाया हो यदि वे प्रभाव पूर्णरूप से दीख न पड़ते हों तो इसका अर्थ यह होगा कि वह समाज इस धारणा का पूर्णरूप से पालन नहीं कर रहा है। अब हम संक्षेप में कुछ ऐसे प्रभावों और परिणामों की ओर

संकेत करेंगे जो उक्त धारणा के कड़वे फल हैं, जिनको प्राचीन समय में ही नहीं आज भी न्यूनाधिक चखना पड़ रहा है :

1. उक्त धारणा को स्वीकार करने का परिणाम यह होगा कि यह रहस्यमय संसार जिसके माध्यम से प्रभु के मधुमय रहस्यों का उद्घाटन होता है — जो अत्यन्त सुन्दर और विस्मयकारी है, जहाँ पग-पग मन करता है कि प्रभु का गुणगान किया जाए — एक दुखस्थल होकर रह जाए, जिससे छूटने और भागने के लिए फड़फड़ाया जाए, जिसे प्रेम की दृष्टि से देखने के बदले उपेक्षा की निगाह से देखा जाए, जिसे मुक्ति के मार्ग में सबसे बड़ी रुकावट समझा जाए और तकलीफ़ और संकटों को ही नहीं जिसमें मिलनेवाले सुख को भी विषाक्त कहा जाए। क्या यह प्रभु-प्रसाद का निरादर न होगा? क्या यह उपहार और दया के प्रति ऐसी प्रतिक्रिया नहीं है जो हमारी चेतना के लिए मात्र कलंक है?

उक्त धारणा की दृष्टि से वर्तमान लोक और मानव की सहज, उच्च एवं मुक्तावस्था के बीच विरोध है। उक्त धारणा की दृष्टि तो यह है कि प्रत्येक व्यक्ति यहाँ दुःख भुगतने के लिए ही आता है। यह अलग बात है कि कर्म के अनुसार किसी के हिस्से में दुख की मात्रा कम, किसी के हिस्से में अधिक आती है। जो यहाँ सुखी है, वह भी दुःख में है, क्योंकि वास्तविक सुख का वह अभी अधिकारी नहीं बन सका है। यदि वह उसका अधिकारी होता है तो जन्म-मरण से ही उसे रिहाई मिल गई होती। यह रिहाई तो उस रूप में सम्भव है जबकि आत्मा का भौतिक वस्तुओं से कोई लगाव ही न रहे। जब तक भौतिक जीवन से उसे लगाव और रागात्मक सम्बन्ध है, उसे मर-मरकर यहाँ जन्म लेना पड़ेगा और दुःख भोगना होगा।

इससे स्पष्ट है कि अभीष्ट मनोवृत्ति की अपेक्षा यह है कि मानव इस लोक को उपेक्षा की दृष्टि से देखे और इसे कोई महत्त्व न दे। ऐसी मनोवृत्तिवाला व्यक्ति क्या वर्तमान लोक को कुरूप घोषित न

करेगा। ऐसे व्यक्ति से यह आशा कैसे की जा सकती है कि उसके लिए जगत् की प्रत्येक विलक्षण वस्तु सत्य का दर्पण सिद्ध होगी। वह तो अपनी सारी शक्ति अपनी इच्छाओं के दमन में लगाएगा। सहज रूप में वह प्रभु-प्रसाद को ग्रहण करे, इसकी सम्भावना ही कहाँ शेष रहती है।

2. अब कोई व्यक्ति जगत् को उपेक्षा की दृष्टि से देखेगा और उसके दुखमय लोक होने की घोषणा करेगा, उसके लिए इसका कहाँ अवकाश कि वह ईश्वर का कोई उपकार माने, उसके आगे कृतज्ञता दिखाये और उसे धन्यवाद दे। कृतज्ञता की भावना मानव के लिए सबसे बड़ी उपलब्धि है, किन्तु इस जगत् और जीवन को यातना और मात्र कारागार समझने के बाद कृतज्ञता की भावना मानव-हृदय में कैसे उत्पन्न हो सकती है? यह भावना तो उसी समय पैदा हो सकती है जब कि इस जीवन और जगत् को देखने का दृष्टिकोण कुछ और हो, जगत् और जीवन दुख और पाप का चमत्कार न होकर ईश्वर की महानता और उसकी दया और दानशीलता का परिचायक हो, किन्तु पुनर्जन्म की धारणा के अन्तर्गत ऐसा दृष्टिकोण अपनाया ही नहीं जा सकता।

3. उक्त धारणा से मानव की विचारशीलता और कर्मशीलता भी शिथिल होकर रह जाती है। जीवन को कुछ करने का सुअवसर समझने के बाद यदि हम उसे भुगतान और कर्मफल समझने लगें। तो विदित है कि हम अपने जीवन को ईश्वरीय वरदान के रूप में स्वीकार न करेंगे, बल्कि यह सोचेंगे कि हमारी मुद्दत कब पूरी हो कि हम इस कारागार से मुक्त हो सकें। और यही अभिरुचि हमारे धार्मिक होने का लक्षण और प्रमाण होगी। ऐसी स्थिति में जीवन-ऊर्जा को, हमारी संकल्प-शक्ति और कार्य-कुशलता को, धक्का पहुँचेगा और हमारे जीवन में शिथिलता और अकर्मण्यता आ जाएगी। आदमी तो अपने पिछले कर्मों से बँधा है, उसे स्वतन्त्रतापूर्वक आगे बढ़ने का अवसर ही कहाँ। हम कुछ इस प्रकार से सोचने लगेंगे, और यह मनोदशा जीवन के लिए सबसे बढ़कर घातक है।

उक्त धारणा के कारण अहंकार को भी बल मिलेगा। जिन लोगों के पास धन और सुख-सामग्री होगी वह उसे अपने पिछले कर्मों का परिणाम और अपना कारनामा समझेंगे और दीन-दुखियों को उपेक्षा की दृष्टि से देखेंगे। यह नीति आदमी को अभिमानी और अहंकारी तो बना सकती है, किन्तु उसमें वह विनय और नम्रता की भावना उत्पन्न नहीं कर सकती जो मानवता का सबसे बड़ा शृंगार और उसका सबसे बड़ा आभूषण है।

5. जो लोग ग़रीब होंगे या तकलीफ़ में होंगे उनमें हीनता की भावना जन्म लेगी। वे अपनी ग़रीबी और संकट को इस भावना से न देख सकेंगे कि यह तो सामयिक परिस्थिति है जो सदैव रहनेवाली नहीं है और न यह हमारे बुरे और नीच होने का नतीजा है, बल्कि केवल यह हमारी परीक्षा के लिए है कि हम ग़रीबी और दुख में अपने किस चरित्र और भावना का परिचय देते हैं। इस पुनर्जन्म की धारणा के अनुसार एक दुखी और निर्धन व्यक्ति यही सोचेगा कि यह हमारे बुरे कर्मों का फल है, इसे भुगतना ही होगा। इससे छुटकारा कहाँ मिलने का? वह अपने को पापी और पतित समझेगा। वह समझेगा कि ईश्वर की ओर से उसे दण्ड मिल रहा है। ऐसी हालत में न तो वह ईश्वर को धन्यवाद दे सकता है और न उसके मन में प्रेम और भक्ति की भावना उत्पन्न हो सकती है। वह साहस नहीं दिखा सकता, वरन् हीनभावना के भार से दबा ही रहेगा। वह उन लोगों को, जिनकी आर्थिक स्थिति अच्छी है और वे ख़ुशहाल हैं, अपने से उच्च जानेगा और अपने आपको निम्न, और अधम।

6. पुनर्जन्म की धारणा लोगों को परस्पर जोड़ने के बजाय उनमें भेदभाव पैदा करेगी। कुछ लोग जन्मजात अच्छे और कुछ पापी और अपराधी समझे जाएँगे। इस प्रकार मानवता खण्डों में विभक्त होकर रह जाएगी। ऊँच-नीच का भेद-भाव जन्म लेगा। कुछ लोग पवित्र और कुछ अपवित्र घोषित किए जाएँगे, और यह सब धर्म के नाम से होगा।

7. फिर बात यहाँ तक पहुँचेगी कि मानव स्वयं मानव के प्रति द्वेष और वैर-भाव रखेगा। वह यह नहीं समझेगा कि उसके धन में ग़रीबों और मुहताजों का भी हक़ है। वह किसी का हक़ मारकर भी अपनी जगह ख़ुशी महसूस कर सकता है कि हमने किसी पूर्वजन्म का बदला अपने वैरी से ले लिया।

आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति की दृष्टि से लोगों में जो अन्तर दिखाई देगा उसे वह सामाजिक और आर्थिक स्थिति का अन्तर न मानकर पिछले कर्मों का फल समझेगा। सुसम्पन्न वर्ग अपना नाता दैवत्व से जोड़ सकता है और दूसरों को अधम एवं दैत्य घोषित कर सकता है। वह छुआछूत के नियम का पालन करेगा जिससे बढ़कर शायद मानवता के लिए कलंक की कोई दूसरी बात नहीं हो सकती। आप स्वयं विचार करें, क्या यह मानवता का अपमान नहीं है? क्या इससे मानवता को ऊँचा उठाया जा सकता है? क्या इससे मानवों में सच्ची एकता लाई जा सकती है? क्या गिरतों को सँभाला जा सकता है? क्या इस धारणा के साथ मानव परस्पर एक-दूसरे को बिना किसी भेदभाव के गले लगा सकता है?

8. पुनर्जन्म या आवागमन के मानने के पश्चात हमें बहुत-सी बेमेल बातों और असंगतियों को भी स्वीकार करना पड़ेगा। इस धारणा को मानने से स्वयं श्री रामचन्द्र जी की महानता को भी क्षति पहुँचती है। इसलिए कि स्वयं उनके जीवन में भी दुःख और शोक पाया जाता है। सीता जी के लिए उन्हें वन-वन फिरना पड़ता है और चौदह वर्ष के दीर्घ वनवास का संकट वे अलग झेलते दिखाई देते हैं। महाराज युधिष्ठिर और उनके भाई जिनपर आरम्भ से ही अत्याचार हुआ था, उन्हें अपने प्राणों की रक्षा के लिए कितने यत्न करने पड़े। अपने से बढ़कर शक्तिशाली शत्रु से युद्ध करना पड़ा। राज्य प्राप्त करने के पश्चात् भी जो दुखद घटनाएँ सामने आईं उनके कारण जीवन का आनन्द क्षीण ही होता गया। इसी प्रकार महाराजा हरिश्चन्द्र के जीवन को लीजिए जिनको यही नहीं कि अपने राज-पाट को त्यागना पड़ा, बल्कि वे अपनी

पत्नी और पुत्र तक को विवशतापूर्वक बेच देते हैं। दासता की हालत में पुत्र की मृत्यु का शोक सहन करते हैं और पुत्र के लिए व्याकुल पत्नी को देखकर दिल पर पत्थर रखकर रह जाते हैं। प्रह्लाद को सौतेली माता की डाँट-डपट और भर्त्सना से दुखी होकर वन की राह लेनी पड़ी। राजा पाण्डव जो अर्जुन आदि के पिता हैं, क्षय रोग से पीले पड़ गए थे, राजा धृतराष्ट्र जन्मजात नेत्रहीन थे। सोचने की बात है कि क्या इन महान् व्यक्तियों और भक्तों के पूर्वजन्म के ये पापों के कड़वे फल हैं जो इनको चखने पड़े। ऐसा मानकर तो हम इनके महान् चरित्र को जिसे दुख और संकट के परिवेश और पृष्ठभूमि (Back Ground) ने पूर्ण रूप से व्यक्त किया है, कलंकित करने का दुस्साहस करेंगे। दुखों और संकटों ने तो वास्तव में इनको महानता के उच्च स्थान पर प्रतिष्ठित करने में पूरा सहयोग दिया है। इन कथाओं की विषय-वस्तु से ऐसा स्पष्ट दिखाई देता है कि इन कथाओं के पीछे पुनर्जन्म की धारणा बिल्कुल नहीं पाई जाती।

वास्तविकता यह है कि सांसारिक दुःख और संकट को किसी पूर्वजन्म का फल कहना और धन-वैभव को किसी पूर्वजन्म के सत्कर्म का परिणाम घोषित करना ऐसी धारणा है जो मानव-चेतना के लिए बड़े ही कलंक की बात है।

फिर इस संदर्भ में यह बात भी विचार करने की है कि संसार में कितने ही सुखी और धनवान व्यक्ति ऐसे मिलते हैं जिनकी आत्मिक स्थिति अत्यंत शोचनीय होती है, यद्यपि उनके भवन तो उच्च एवं उनका धन-वैभव भी बढ़ा हुआ होता है, किन्तु वे स्वयं चरित्र और स्वभाव की दृष्टि से अत्यंत पतित और कमीने होते हैं। आख़िर ऐसा क्यों है? जब उनके अच्छे होने के कारण उन्हें यहाँ सुख प्राप्त हुआ है, तो उनकी वह अच्छाई कहाँ नष्ट हो गई? इसके विपरीत कितने ही ग़रीब, निर्धन और संकट में पड़े हुए व्यक्ति ऐसे मिलते हैं जो स्वभाव और अपनी आत्मा की दृष्टि से अत्यन्त पवित्र और उच्च होते हैं। प्रश्न यह है कि यदि वे बुरे थे, जिसके कारण उन्हें तकलीफ़ उठानी पड़ रही है, तो उनकी बुराई और उनके शील-स्वभाव की मलिनता कहाँ खो गई?

अध्याय-9

बिखरे हैं मोती कहाँ-कहाँ!

क़ुरआन के अतिरिक्त अन्य धर्म-ग्रन्थों की गवाही

जीवन मृत्यु के पश्चात् के सम्बन्ध में क़ुरआन जिस धारणा की शिक्षा देता है वह परलोकवाद या आख़िरत की धारणा है, जैसाकि ऊपर के विवेचन से स्पष्ट है। क़ुरआन वास्तव में किसी नई कल्पना को स्थापित करने नहीं आया है। वह तो इसलिए अवतरित हुआ है कि उन सच्चाइयों की रक्षा करे जो सनातन और सार्वकालिक हैं, जिन सच्चाइयों और सत्य-धारणाओं की शिक्षा आरम्भ से ईश्वर के संदेशवाहक (पैग़म्बर) देते रहे हैं, जिनकी शिक्षा समस्त आसमानी किताबों और ईश्वरीय ग्रन्थों में दी गई है और जिनका प्रचार मानव-इतिहास के प्रत्येक युग और प्रत्येक देश में हुआ है। किन्तु उन मौलिक सच्चाइयों और वास्तविक धारणाओं को लोग भूलते भी रहे हैं और उनमें अपनी ओर से न्यूनाधिक भी करते रहे हैं, जिसके परिणामस्वरूप विभिन्न मत-मतान्तरों का जन्म हुआ और इतना ही नहीं, बल्कि परस्पर विरोधी बातों तक को मान्यता प्राप्त हो गई। यह ईश्वर की दयालुता है कि उसने इस स्थिति को देर तक बाक़ी नहीं रहने दिया। बल्कि उसने अपना अंतिम ग्रन्थ क़ुरआन उतारकर इसका सुअवसर प्रदान किया कि मानव अंधकार और संशय की स्थिति में न रहे, बल्कि वास्तविक सच्चाई को पा ले।

क़ुरआन वह कसौटी है जिसके द्वारा खरे-खोटे और सत्य-असत्य को परखा जा सकता है। दुनिया के विभिन्न धर्मग्रन्थों में जो कुछ मिलता है, क़ुरआन के द्वारा यह जाना जा सकता है कि उसमें सत्य का कितना अंश शेष है और कितना असत्य उसमें सम्मिलित कर दिया गया है। जिन ग्रन्थों में परस्पर विरोधी बातें पाई जाती हैं वे वास्तव में हमारे

सामने एक विकट समस्या प्रस्तुत करती हैं कि हम उन बातों में किसको सत्य और किसको असत्य समझें। क़ुरआन ऐसे अवसर पर निर्णायक बनकर हमारे सामने आता है। वह बताता है कि उन परस्पर विरोधी बातों में सत्य बात कौन-सी है और असत्य कौन-सी। मृत्यु के पश्चात् कोई जीवन है या नहीं? इस सम्बन्ध में भी जैसा कि ऊपर आ चुका है, विभिन्न मत पाए जाते हैं। क़ुरआन इसकी सूचना स्पष्ट शब्दों में देता है कि मृत्यु के पश्चात् जीवन समाप्त नहीं होता। मृत्यु जीवन की चरम लक्ष्य तक पहुँचने के मार्ग की एक अनिवार्य घटना है। इस घटना से जीवन का अन्त नहीं होता, बल्कि मनुष्य इससे उस गंतव्य और मंज़िल के निकट हो जाता है जहाँ उसे अन्ततोगत्वा पहुँचना है। मृत्यु के पश्चात् एक समय आएगा जब उसे परलोक में प्रवेश प्राप्त होगा। जहाँ उसे अपने कर्मों के अनुसार अच्छा या बुरा स्थान मिलेगा। वह स्वर्ग या नरक को प्राप्त होगा।

क़ुरआन का समझना उनके लिए सरल हो जाता है जिन्होंने पिछली आसमानी किताबों और प्राचीन धर्मग्रन्थों का अध्ययन किया हो, भले ही वे आसमानी किताबें और धर्मग्रन्थ अपने मौलिक रूप में आज अवशेष न हों। पिछली आसमानी किताबों के अध्ययन से मनुष्य धर्म के वर्ण्य-विषय, आसमानी किताबों की वर्णनशैली आदि से परिचित हो जाता है और यह चीज़ क़ुरआन को समझने में सहायक सिद्ध होती-है।

परलोकवाद के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि जब क़ुरआन किसी नई धारणा के प्रतिपादन के लिए नहीं आया है, तो क्या परलोकवाद की पुष्टि प्राचीन धार्मिक साहित्यों से होती है जिसे क़ुरआन प्रस्तुत कर रहा है? क्या इस धारणा के चिह्न प्राचीन ग्रन्थों में मिलते हैं? यहाँ हम इसी प्रश्न के बारे में कुछ कहना चाहते हैं।

जब हम प्राचीन धार्मिक ग्रन्थों का अवलोकन करते है तो हमें परलोकवाद के चिह्न मिलते हैं, इसके समर्थन में हमें प्राचीन धार्मिक

साहित्यों में बहुत कुछ सामग्री मिलती है। यहाँ संक्षेप में हम यही दिखाना चाहते हैं कि परलोक की धारणा सार्वभौमिक और सर्वमान्य धारणा है। इसे अभारतीय धारणा समझना बहुत बड़ी भूल है। इस धारणा को स्वीकार करने का अर्थ यह कदापि नहीं होता कि हम कोई भारतीय और विदेशी धारणा को अंगीकार कर रहे हैं, यद्यपि सत्य के विषय में तो सिरे से यह देखने की आवश्यकता ही नहीं है कि वह भारतीय है या अभारतीय। सत्य यदि भारतीय न भी हो अर्थात् भारत में उसका प्रचलन न भी रहा हो, फिर भी उसे स्वीकार करना हमारा कर्तव्य होता है। इसी प्रकार असत्य-धारणा चाहे कितनी ही भारतीय क्यों न हो उसे त्यागना ही हमारा परम धर्म होगा।

भारतीय धर्म-ग्रन्थ और परलोक की धारणा

अब हम भारतीय धर्म-ग्रन्थों से परलोक-विषयक धारणा की चर्चा करनी चाहेंगे, ताकि हमारे पाठक यह भली-भाँति देख सकें कि परलोकवाद की पुष्टि किस प्रकार भारतीय धर्म-ग्रन्थों से होती है। कोई धर्म-ग्रन्थ कभी किसी देश का या जाति विशेष का नहीं होता। उसके परिचय के लिए इतना कहना ही पर्याप्त है कि वह धार्मिकता का द्योतक है। यहाँ पर वेद, उपनिषद, ब्राह्मण, पुराण आदि ग्रन्थों को भारतीय हम केवल इस अर्थ में कह रहे हैं कि इनका भारत से विशेष सम्बन्ध है। इनका आविर्भाव भारत-भूमि पर हुआ है, इसके अतिरिक्त इन्हें भारतीय कहने से हमारा कुछ और आशय कदापि नहीं है।

मृत्यु

वेदों से मालूम होता है कि मृत्यु से मनुष्य की आत्मा नष्ट नहीं होती, वह मृत्यु के पश्चात् भी शेष रहती है। वेदों में मृत्यु के 101 प्रकारों का उल्लेख मिलता है। अथर्ववेद में है—

"ये मृत्यव एकशतं या नाष्ट्रा अतितार्याः।।"

(8/2/27)

अर्थात् "जो एक सौ एक मृत्यु हैं, वे पार करने योग्य, नाश करनेवाली हैं।"

इसी से संबंधित उपनिषद् में कहा गया है—

शतं चैका च हृदयस्य नाड्यस्तासां मूर्धानमभिनिःसृतैका।
तयोर्ध्वमायन्नमृतत्वमेति विष्वङ्ङ्या उत्क्रमणे भवन्ति।।

(कठो॰ 2/3/16)

"हृदय में एक सौ एक नाड़ियों का समूह है, उसमें से एक मूर्धा (कपाल) का भेदन करके बाहर निकलती है। उसके द्वारा उर्ध्वगमन करनेवाला साधक अमृतत्व को प्राप्त करता है।[1] अन्य अवशिष्ट नाड़ियाँ प्राणोत्सर्ग में सहायक होती हैं।"

अंतिम संस्कार

वेदों से मुर्दों को गाड़ने की प्रथा का प्रमाण मिलता है। शव को दफ़न करते समय पढ़े जानेवाले कतिपय श्लोक उद्धृत हैं—

इदमिद् वा उ नापरं दिवि पश्यसि सूर्यम्।
माता पुत्रं यथा सिचाभ्येऽनं भूम ऊर्णुहि।।

(अथर्व 18/2/50)

"हे मृत पुरुष! यही है, दूसरा नहीं है। जो द्युलोक में तू सूर्य देखता है। जिस प्रकार पुत्र को माता अपने आँचल से ढाँपती है उसी प्रकार हे पृथ्वी! तू इस मृत पुरुष को चारों ओर से ढाँप।"

अभि त्वोर्णोमि पृथिव्या मातुर्वस्त्रेण भद्रया।

(अथर्व॰ 18/2/52)

[1] अर्थात् पुण्यात्मा की आत्मा शरीर से इसी प्रकार विलग होती है।

"हे प्रेत (मृतक)! तुझे माता पृथ्वी के कल्याणकारी वस्त्र से आच्छादित करता हूँ, अर्थात् पृथ्वी में तुझे गाड़ता हूँ।"

पितर-लोक

मृत्यु के पश्चात् और परलोक (आख़िरत) से पूर्व जो अन्तराल पाया जाता है, उस अवधि में मनुष्य कहाँ कैसे रहता है, इस विषय पर भी वेद में प्रकाश डाला गया है। इस सिलसिले में वेद में पितर-लोक की धारणा मिलती हैं। अर्थात् वह लोक जहाँ मरने के पश्चात् हमारे पूर्वज और अन्य लोग पहुँचे हैं। अथर्ववेद में है—

जीवानामायुः प्र तिर त्वमग्ने पितॄणां लोकमीप गच्छन्तु ये मृत।
सुगार्हपत्यो वितपन्नरातिमुषामुषां श्रेयसी धेह्यस्मै।।

(अथर्व. 12/2/45)

"हे अग्ने! तू जीवों की आयु निर्विघ्नता के साथ पार कर दे तथा जो मर चुके हैं वे पितर-लोक में चले जावें। उत्तम गार्हपत्य अग्नि शत्रु को ताप देवे। प्रत्येक ऊषा काल इसके लिए कल्याणमय कर देवे।"

मृतक को संबोधित करके कहा गया है :

शुम्भन्तां लोकाः पितृषदनाः।
पितृषदने त्वा लोक आ सादयामि।।

(अथर्व 18/4/67)

"जिनमें पितर बैठते हैं ऐसे लोक शोभायमान हों। तुझे जिसमें पितर बैठते हैं उस लोक में बिठलाता हूँ।"

मृतात्मा पितर-लोक पहुँचे और आनन्द से रहे, इस हेतु वेद में सचेत करते हुए कहा गया है—

एतदा रोह वय उन्मृजानः स्वा इह वृहदु दीदयन्ते।
अभि प्रेहि मध्यतो माप हास्थाः पितॄणां लोकं प्रथमो यो अत्र।।

(अथर्व. 18/3/73)

"अपने को शुद्ध करता हुआ इस अंतरिक्ष में चढ़। यहाँ तेरे बन्धु-बांधव बहुत प्रकाशमान हो रहे हैं अर्थात् वे बहुत उन्नत हुए हैं, उनकी तू चिंता मत कर। उन बन्धुबांधवों के मध्य से जा। पितरों के लोक का त्याग मत कर जो कि पितरलोक यहाँ मुख्य प्रसिद्ध है।"

ये चेह पितरो ये च नेह याँश्च मिद्म याँ॥ उ च न प्रविद्म।

त्वं वेत्थ यति ते जातवेदः स्वधाभिर्यज्ञ॑ सुकृतं जुषस्व।।

(यजु. 19/67)

"इस लोक में वर्तमान पितर, इस लोक से परे स्वर्ग आदि लोकों में वर्तमान पितर और जिन्हें हम जानते हैं तथा जिन्हें हम नहीं जानते, वे सब जितने भी हैं, उन्हें हे अग्ने! तुम ही जानते हो। अतः स्वधा के द्वारा इस श्रेष्ठ अनुष्ठान का सेवन करो।"

वेद से ज्ञात होता है कि पितरलोक में नेक लोगों को तेजस्वी शरीर प्रदान किया जाता है—

सं गच्छस्व पितृभिः सं यमेनेष्टापूर्तेन परमे व्योमन्।

हित्वायावद्यं पुनरस्तमेहि सं गच्छस्व तन्वा सुवर्चाः।।

(ऋ. 10/14/8)

"हे पिता! श्रेष्ठ स्वर्ग में अपने पितरों के साथ मिलो वैसे ही अपने यज्ञदान आदि पुण्य कर्म के फल से भी मिलो, पापाचारण को छोड़कर फिर गृह में प्रवेश करो और तेजस्वी शरीर को प्राप्त कर।"

वेदों में पितरों के प्रति सम्मान का भाव रखने, उनको नमस्कार करने और स्वधा (भोजन प्राप्ति) हेतु दुआ का भी प्रावधान है।[1]

पितरों को यज्ञ आदि में भी आमंत्रित करने और उन्हें यथोचित स्थान देने का उल्लेख वेदों एवं ब्राह्मण ग्रंथों में पाया जाता है।[2]

---

[1] देखें : ऋ-10/15/2, यजु. 19/68, 2/7 आदि

[2] देखें : ऋ-10/12/6, 10/15/9, 10/15/11, यजु. 19/52, 19/62, अथर्व. 18/1/52, 18/4/63, 18/4/36, 18/3/44, 18/4/40 शत. ब्रा. 2/4/2/2, 2/4/2/20 इत्यादि —संपादक

यह पितरलोक कहाँ स्थित है? इसका उत्तर भी वेदों में मिलता है। वेदों के अध्ययन से पता चलता है कि यह पितरलोक अंतरिक्ष में स्थित है, इस भाव के कई मंत्र वेद में पाए जाते हैं। उनमें से कुछ प्रस्तुत हैं—

स्वधा पितृभ्यो अन्तरिक्षसद्भ्यः (अर्थर्व. 18/4/79)

"अंतरिक्ष में बैठनेवाले पितरों के लिए स्वधा हो।"

उत्तिष्ठ प्रेहि प्र द्रवौकः कृणुष्व सलिले सधस्थे।
तत्र त्वं पितृभिः संविदानः सोमेन मदस्व सं स्वधाभिः।।

(अथर्व. 18/3/8)

"उठ जा, दौड़ जहाँ सब इकट्ठे रहते हैं, ऐसे अंतरिक्ष में घर बना। वहाँ अंतरिक्ष में तू अन्य पितरों के साथ मिला हुआ एकमत्य को प्राप्त हुआ। सोम से अच्छी तरह आनंदित हो और स्वधाओं से अच्छी प्रकार तृप्त हुआ आनंदित हो।"

ये नः पितुः पितरो ये पितामहा य आविविशुर्वान्तरिक्षम्।
तेभ्यः स्वराड सुनीर्तिर्नो अद्य यथावशं तन्वऽःकल्पयाति।।

(अथर्व 18/3/59)

"जो हमारे पिता के पितर और जो पितामह (दादा) जो कि विस्तृत अंतरिक्ष में प्रविष्ट हुए हैं : उनके लिए स्वयं प्रकाशमान प्राणदाता परमात्मा हमारे शरीरों को कामना के अनुकूल समर्थ करता है।"

पितरलोक को इस्लामी परिभाषा में "आलमे-बरज़ख़" कहा जाता है। विवरण में भले ही कुछ अन्तर हो, किन्तु दोनों का केन्द्रीय भाव एक प्रतीत होता है। अरबी में 'बरज़ख़' दो वस्तुओं के बीच के परदे या ओट को कहते हें। उपनिषद् की परिभाषा में इसे संध्या कहा गया है। क्योंकि यह इस लोक के जीवन को पारलौकिक जीवन से मिलाता है।

तस्य वा एतस्य पुरुषस्य द्वे एव स्थाने भवत,
इदं च परलोकस्थानं च सन्ध्यं तृतीयँ।
स्वप्नस्थानं तस्मिन्सन्ध्ये स्थाने तिष्ठन्नेते,
उभे स्थाने पश्यतीदं च परलोक स्थानं च।।

(बृहदारण्यकोपनिषद, 4/3/9)

"इस मनुष्य के लिए दो ही स्थान हैं, एक यह इहलोक और दूसरा परलोक। तीसरे बीच वाले का नाम संध्या है। वह निद्रा का स्थान है। इस मध्यवर्ती स्थान में रहकर पुरुष इहलोक और परलोक का दर्शन करता है।"

प्रलय की धारणा भारतीय धर्मग्रन्थों में

एक समय आएगा कि जगत् की वर्तमान व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो जाएगी। न यह आकाश रहेगा और न ये आकाश के चमकते सितारे ही रहेंगे। यह सब आख़िरत का समय आने से पूर्व होगा। इसके पश्चात् संसार का नव-निर्माण होगा। मरे हुए लोग जीवित किए जाएँगे। उनके भले-बुरे कर्मों का हिसाब लिया जाएगा। लोग अपने कर्म के अनुसार जन्नत या जहन्नम (स्वर्ग या नरक) में प्रवेश करेंगे। जगत् की वर्तमान व्यवस्था के नष्ट होने को क़ियामत या प्रलय कहा जाता है। प्रलय की धारणा क़ुरआन और बाइबल के अतिरिक्त भारतीय धर्म-ग्रन्थों में भी मिलती है :

श्री विष्णुमहापुराण में प्रलय का चित्र इस प्रकार खींचा गया है—

स चाग्निः सर्व्वतो व्याप्य आदत्ते तज्जलं तदा।
सर्व्वमापूर्य्य तेजोभिस्तदा जगदिदं शनैः।।
अर्च्चिर्भिः संवृते तस्मिन तिर्य्यगूर्द्धव मधस्तथा।
ज्योतिषोऽपि परं रूपं वायुरत्ति प्रभाकरम्।।
प्रलीने च ततस्तस्मिन वायुभूतेऽखिलात्मनि।
प्रनष्टे रूपतन्मात्रे हतरूपो विभावसुः।।

प्रशाम्यति तदा ज्योतिर्वायुर्दोधूयते महान्।
निरालोके तदा लोके वाय्ववस्थे च तेजसि।।

(6/4/19-22)

"उस (प्रलय) काल में जलसमूह सर्वप्रथम पृथ्वी के गुण-गन्ध को अपने में लीन कर लेता है। जब पृथ्वी का गुणगन्ध समाप्त हो जाता है, तब पृथ्वी का प्रलय हो जाता है। गन्धतन्मात्र गुण के नष्ट होने से पृथ्वी जल में मिल जाती है। रस से जल उत्पन्न हुआ है, अतएव जल को रसात्मक जानना चाहिए। उस समय बढ़ा हुआ जल अत्यन्त वेग से महाशब्द करता हुआ समस्त भुवन को प्लावित कर देता है, यह जल कभी स्थिर होता है और कभी बहने लगता है। बाद में तरंगमालाओं से परिपूर्ण जल चारों दिशाओं में फैल जाता है। अनन्तर जल का गुणरस का अग्नि शोषण कर लेती है तथा अग्नि द्वारा शोषित होकर रस तन्मात्र का विनष्ट हो जाने से जल समूह विलय प्राप्त होता है और वह रसहीन जलमण्डल तेज में प्रवेश कर जाता है, इसके बाद क्रमशः तेज अतिशय प्रबलरूप धारणकर समस्त भुवन में व्याप्त हो जाता है। वह अग्नि सभी ओर व्याप्त होकर जल मण्डल को ग्रसित कर लेती है और क्रमशः अपने तेजों से इस जगत् को व्याप्त कर लेता है। उस समय अग्नि द्वारा ऊपर-नीचे तथा सभी का संहार हो जाता है, जब वायुमण्डल तेज के आधार प्रभाकर सूर्य को ग्रास कर लेता है। तेज समूह को नष्ट होने पर समस्त भुवन वायुमय हो जाता है। और समस्त तेज अपने रूप का विनाश होने से शान्ति-भाव को प्राप्त करता है। उस समय केवल वायु ही चारों ओर प्रवाहित होती है, तथा उस तेज समूह को वायु में प्रवेश करने पर समस्त भुवन अन्धकारमय बन जाता है।

इसी महापुराण में महाप्रलय के संदर्भ में वर्णन करते हुए आगे कहा गया है—

एवं सप्त महाबद्धे! क्रमात् प्रकृतयस्तु वै।
प्रत्याहारे तु ताः सर्व्वाः प्रविशन्ति परस्परम्।।

(श्री विष्णु महापुराण 6/4/30)

"इस प्रकार पृथ्वी आदि के क्रम से जो सात आवरण कहे गए हैं, ये सातों आवरण समूह प्रलय काल में पूर्वत् परस्पर अपने-अपने कारणों में लीन हो जाते हैं।"

इसी प्रकार श्रीमद्भागवत महापुराण में आया है–

परः सांवर्तको वाति धूम्रं खं रजसाऽऽवृतम्।
ततो मेघ कुलान्यङ्ग चित्रवर्णन्यनेकशः।।
शतं वर्षाणि वर्षन्ति नदन्ति रभसस्वनैः।
तत एकोदकं विश्वं ब्रह्माण्ड विवरान्तरन्।।
तदा भमेर्गन्धगुणं ग्रसन्त्याप उदप्लवे।।
ग्रस्तगन्धा तु पृथिवी प्रलयत्वाय कल्पते।।
अपां रसमथो तेजस्ता लीयन्तेऽथ नीरसाः।
ग्रसते तेज सो रूपं वायुस्तद्रहितं तदा।।
लीयते चानिले तेजो वायोः खं ग्रसते गुणम्।
स वै विशति खं राजंस्ततश्च नभसो गुणम्।।

(12/4/12-17)

"उस समय प्रलय हेतुक जब प्रचण्ड वायु बहती है तब आकाश, धूम और थूल से भर जाता है। उसके बाद अनेक प्रकार का विचित्र वर्णमाला मेघ समुदाय शतवर्ष गरजता तथा बरसता है। उस समय ब्रह्माण्ड मध्यगत सारा विश्व जलमग्न हो जाता है। उस समय जल पृथ्वी के गुणगन्ध को ग्रहण कर लेता है और जल से आप्लव होने पर निर्गन्ध पृथ्वी का प्रलय हो जाता है। जल के गुणरस को तेज खींच लेता है और वह रस विहीन होकर तेज में मिल जाता है तथा वायु तेज के गुणरूप को ले लेता है। वह तेज रूप रहित होकर वायु में मिल जाता है तथा वायु के गुण स्पर्श को आकाश ग्रस लेता है। वह वायु स्पर्श विहीन होकर आकाश में लीन हो जाता है।"

उपरोक्त उद्धरणों से अनुमान लगाया जा सकता है कि प्रलय की धारणा किसी न किसी रूप में भारतीय धर्मग्रंथों में भी पाई जाती है, और इस प्रकार प्रलय की पुष्टि क़ुरआन के अतिरिक्त भारतीय ग्रन्थों से भी होती है।

प्रलय के पश्चात् जब एक नवीन लोक की रचना होगी तो मानव का ठिकाना या तो स्वर्ग लोक में होगा या वह नरक में जाने को विवश होगा। इसका निर्णय उसके कर्म को देखकर किया जाएगा। स्वर्ग और नरक की धारणा भी क़ुरआन की प्रस्तुत की हुई कोई नई धारणा कदापि नहीं है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि क़ुरआन किसी नवीन धारणा के प्रतिपादन के लिए आया ही नहीं है, वह तो केवल सत्य की पुष्टि और उसकी रक्षा के लिए अवतरित हुआ है। सत्य जहाँ कहीं भी है क़ुरआन उसकी पुष्टि करता है, असत्य जिस रूप में भी हो वह असत्य है, क़ुरआन के द्वारा उसका निषेध होगा।

वेदों से परलोक की अर्थात् स्वर्ग और नरक की पूर्णरूप से पुष्टि होती है। वेद इससे भिन्न धारणा का खण्डन करते हैं। आवागमन की धारणा की पुष्टि वेदों द्वारा नहीं होती। श्री सत्यप्रकाश विद्यालंकार लिखते हैं :

> "वेदों में आवागमन का सिद्धान्त नहीं है, इस बात पर तो मैं जुआ भी खेल सकता हूँ।" —आवागमन, पृष्ठ 104

डॉ. राधाकृष्णन ने भी यही मत प्रकट किया है कि वेदों में पुनर्जन्म की धारणा नहीं पाई जाती। यही मत कई हिन्दू विद्वानों का और मैक्स मूलर का भी है, जिन्होंने वेदों पर काम किया है। वेदों से एक अन्तिम दिन की धारणा की पुष्टि होती है जबकि लोग अपने कर्मों का बदला पा सकेंगे—

अथा ते अन्तमानां विद्याम समतीनाम्।
मा नो अतिख्य आ गहि।।

(ऋ. 1/4/3)

"वे अन्तिम दिन का विस्मरण कर विद्या और बुद्धि का तिरस्कार कर हमारी निश्चित की हुई सीमा को पकड़ रहे हैं।"[1]

सुशंसो बोधि गृणते यविष्ठ्य मधुजिह्वः स्वाहुतः।

[1] श्लोक का यह अनुवाद विद्वान लेखक दुर्गाशंकर सत्यार्थी के लेख "वेद और पुनर्जीवन" से उद्धृत है।

प्रस्कण्वस्य प्रतिरन्नायुर्जीवसे नमस्या दैव्यं जनम्।।

(ऋ० 1/44/6)

"अपने हित के लिए मधुर जिह्वा प्राप्तकर लोग अपनी शंकाओं की गणना करते हैं। देवों को नमस्कार करनेवालों से कहो : तुम्हें फिर से आयु एवं जीवन प्राप्त होना निश्चित है।"[1]

अहरहरयावं भरन्तोऽश्वायेव तिष्ठते घासमस्मै।
रायस्पोषेण समिषा यदन्तोऽग्ने मा ते प्रतिवेशा रिषाम।।

(यजु० 11/75)

"दिन-प्रतिदिन घोड़े के लिए जैसे घास निश्चित की जाती है, धन के रक्षक भी अन्तिम दिन हे अग्नि! वे क्रोधपूर्वक मुझसे पूछे जाएँगे। क्रोध पूर्वक!"[2]

परलोक में जो जीवन मानव को प्राप्त होगा उसे वेदों में दिव्य-जन्म कहा गया है क्योंकि उसमें मृत्यु नहीं होगी।

होतारमग्ने अतिथि वरेण्यं मित्रं न शेवं दिव्याय जन्मने।।

(ऋग्वेद 1/58/6)

"हे अग्नि! दिव्य-जन्म हवन करनेवाले को नहीं, प्रत्येक समय संसार के मित्र का वरण करनेवाले को है।"[3]

इस प्रकार हम देखते हैं कि वेद दो ही जन्मों की पुष्टि करते हैं। वर्तमान जन्म और मरने के पश्चात् मिलनेवाले दूसरे जन्म (दिव्य-जन्म) की ही पुष्टि वेदों से होती है।

डॉ० फ़रीदा चौहान लिखती हैं :

"वेदों में पुनर्जन्म मिलता तो ज़रूर है लेकिन उसमें इस जन्म के बाद सिर्फ़ एक और जन्म का विवरण है, हज़ारों जन्मों का नहीं।" (पुनर्जन्म और वेद० पृष्ठ 93)

ऋग्वेद में है :

वह्निं यशसं विदथस्य केतुं सुप्राव्यै दूतं सद्योअर्थम्।

---

1 उपर्युक्त
2 उपर्युक्त
3 'वेद और पुनर्जीवन' से उद्धृत

द्विजन्मानं रयिमिव प्रशस्तं रातिं भरद् भृगवे मातरिश्वा ॥

(ऋ. 1/60/1)

> "आग के महत्त्व को जानने के लिए सूर्य को प्राप्त करने की कोशिश करो। हमारे द्वारा प्रशस्त दोनों जन्मों को माननेवाले भरत, भृग, मातरिश्वा (सभी हुए) हैं।"

वेदों में प्रायः केवल दो ही लोकों अर्थात् इहलोक एवं परलोक का ही उल्लेख मिलता है। उदाहरणार्थ—

इमं च लोकं परमं च लोकम्।

(अथर्व. 19/54/5)

अर्थात् "इस लोक को और परमलोक (अर्थात् परलोक) को"

अशिता लोकाच्छिनत्ति ब्रह्मगवी ब्रह्मज्यमस्माच्चामुष्माच्च।

(अथर्व. 12/5/38)

> अर्थात् "जो मनुष्य ब्रह्मचारियों पर अत्याचार करके वेदविरुद्ध चलता है, उसके यह लोक और परलोक दोनों बिगड़ जाते हैं।[1]

स्वर्गलोक और भारतीय विचार-धारा

कठोपनिषद् में बताया गया है कि पितर लोक में आत्मा की स्थिति स्वप्न के सदृश होती है। वर्तमान लोक में स्थिति जागरण की मानी गई है। किन्तु पूर्ण जागरण की स्थिति परलोक की है। परलोक में प्रवेश पाने के अधिकारी वे लोग होंगे जो ईश्वरीय अनुग्रह के पात्र होंगे, शेष व्यक्तियों का ठिकाना नरक है। स्वर्ग सुख का स्थान है। वेदों में इसके अन्य कई नाम भी आए हैं। स्वर्ग इस वर्तमान जीवन के अतिरिक्त है। वेद के अनुसार यह विचार सत्य नहीं है कि स्वर्ग केवल आनन्द और ख़ुशी का नाम है, बल्कि स्वर्ग एक विशेष लोक है। स्वर्ग वर्तमान लोक से उच्च और उत्तम है।

ऋग्वेद में उस परमलोक अर्थात् स्वर्गलोक के संबंध में कहा गया है—

---

[1] अनुवाद क्षेमकरणदास त्रिवेदी (अथर्व. हिन्दी भाष्य; सा. आ. प्र. सभा, दिल्ली)

यत्र ज्योतिरजस्रं यस्मिन लोके स्वर्हितम्।
तस्मिन् मां धेहि पवमानाऽमृते लोके अक्षित इन्द्रायेन्द्रो परि स्रव।।

(ऋ॰ 9/113/7)

"हे पवित्र सोम! जहाँ अखण्ड तेज है और जिस लोक में सूर्य-स्वर्ग-सुख स्थित है, उस अमर और अक्षीण लोक में मुझे रख। हे सोम! तू इन्द्र के लिए बह।"

यत्रानन्दाश्च मोदाश्च मुदः प्रमुद आसते।
कामस्य यत्राप्ताः कामास्तत्र माममृतं कृधीन्द्रायेन्दो परिस्रव।।

(ऋ॰ 9/113/11)

"हे सोम! आनन्द और स्नेह जिस लोक में वर्तमान रहता है और जहाँ सभी कामनाएँ इच्छा होते ही पूर्ण हो जाती हैं, उसी अमरलोक में मुझे निवास दो। हे सोम! तुम इन्द्र के लिए क्षरित होकर उन्हें तृप्त करो।"

स्वर्ग लोके एषां बहु स्त्रैणं।।

(अथर्व॰ 4/34/2)

"स्वर्ग लोक में इस (पवित्र हृदय व्यक्ति) को बहुत सुख होता है।"

घृतह्रदा मधुकूलाः सुरोदकाः क्षीरेण पूर्णा उदकेन दध्ना।
एतास्त्वा धारा उप यन्तु सर्वाः स्वर्गे लोके मधुमत्पिन्वमाना।।

"घी के प्रवाहवाली मधुर रसके तटवाली निर्मल जल से युक्त जल, दही और दूध से परिपूर्ण ये सब धाराएँ तुझे प्राप्त हों। स्वर्गलोक में मधुर रस को देनेवाली सब नदियाँ तेरे समीप उपस्थित हों।"

सोऽऽरिष्ट न मरिष्यसि न मरिष्यसि मा विभेः।
न वै तत्र म्रियन्ते नो यन्त्यधमं तमः।।

(अथर्व॰ 8/2/24)

"हे अहिंसित मनुष्य! वहाँ (स्वर्ग में) तू नहीं मरेगा, नहीं मरेगा। अतः मत डर। वहाँ नहीं मरते हैं तथा हीन अंधकार के प्रति भी नहीं जाते हैं।"

स्वर्गलोका अमृतेन विष्ठाः।।

(अथर्व. 18/4/4)

"स्वर्गलोक अमरता से व्यापत है।"

ऋतस्य पन्थामनु पश्य साध्वङ्गिरसः सुकृतो येन यन्ति। तेभिर्याहि पथिभिः स्वर्ग यत्रादित्या मधु भक्षयन्ति तृतीये नाके अधिविश्रयस्व।।

(अथर्व. 18/4/3)

"हे मानव! ऋत के इस मार्ग को अच्छी तरह से जान और जिस मार्ग से अच्छे कर्म करनेवाले अंगिरस जन जाते हैं उन मार्गों से स्वर्ग को जा। जहाँ कि अर्थात जिस स्वर्ग में कि अखण्डनीय सामर्थ्यवाले श्रेष्ठ कर्म करनेवाले जन अमृत को खाते हैं अर्थात् आनन्द भोगते हैं। तीसरा जो स्वर्गलोक है उसमें जाकर विश्रांति ले—आराम कर।"

यत्र ज्योतिरजस्रं यस्मिन् लोके स्वर्हितम्।
तस्मिन् मां धेहि पवमानाऽमृते लोके अक्षित इन्द्रायेन्द्रो परि स्रव।।

"हे पवित्र सोम! जहाँ अखण्ड तेज है और जिस लोक में सूर्य स्वर्ग-सुख स्थित है, उस अमर और अक्षीण लोक में मुझे रख। हे सोम्। तू इन्द्र के लिए बह।"

कठोपनिषद् में है :

स्वर्ग लोके न भयं किंचनास्ति न तत्र त्वं न जरया बिभेति।
उभे तीर्त्वाशनायापिपासे शोकातिगो मोदते स्वर्ग लोके।।

(1/1/12)

"स्वर्गलोक भयकारक नहीं है। वहाँ मृत्यु रूप का भी भय नहीं रहता, न वहाँ वृद्धावस्था डराती है। स्वर्ग-लोक में मनुष्य

भूख-प्यास को पारकर, शोक से निवृत्त होकर आनन्द प्राप्त करते हैं।"

कर्मपुराण में है—

नाधयो व्याधयस्तत्र जरामृत्युभयं न च।
क्रोधलोभविनिर्मुक्ता मायामात्सर्यवर्जिताः।।

(पू. 49/42)

"वहाँ न तो मानसिक व्यथाएँ होती हैं और न शारीरिक। वृद्धावस्था और मृत्यु का भय भी नहीं होता। (वहाँ के लोग क्रोध तथा लोभ से रहित होते हैं। माया और मात्सर्य उसका स्पर्श भी नहीं करते।"

ऊपर के उद्धरणों से स्पष्ट है कि स्वर्ग सुख और आनन्द का लोक है। वहाँ मनुष्य को हर प्रकार की सुख-सामग्री प्राप्त होगी। वर्तमान लोक कर्म और परीक्षा का स्थल है, स्वर्ग में मानव अपने शुभ कर्मों का फल प्राप्त कर सकेगा। स्वर्ग वर्तमान लोक से उत्तम लोक है।

स्वर्ग के अधिकारी कौन?

स्वर्ग अर्थात अमरलोक (जन्नत) के पात्र कौन लोग होंगे? इस सम्बन्ध में भी भारतीय धर्मग्रंथ स्पष्ट प्रकाश डालते हैं। उनसे ज्ञात होता है कि इसके पात्र वे लोग होंगे जो ईशपरायण, सच्चरित्र एवं सुकर्मी होंगे, जिनके हृदय विशाल एवं उदार होंगे। वेद में है—

यो ददाति शितिपादमविं लोकेन संमितम्।
स नाकमभ्यारोहति यत्र शुल्को न क्रियते अबलेन बलीयसे।।

(अथर्व. 3/29/3)

"जो यजमान सब फल देनेवाली भेड़ का दान करता है, वह दुख रहित स्वर्ग का भागी (पात्र) होता है। उस लोक में निर्बल व्यक्ति को सबल का शासन नहीं मानना पड़ता।"

नाकस्य पृष्ठे अधितिष्ठतिश्रितो यः पृणाति स ह देवेषु गच्छति।।

(ऋग्वेद 1/125/5)

"अपने आश्रितों को जो धनधान्य से पूर्ण करता है वह स्वर्ग में जाकर रहता है, वह देवों में जाकर विराजमान होता है।"

शतपथ ब्राह्मण में हैं—

"वह अब औद्ग्रभण आहुतियों को देता है। औद्ग्रभण आहुतियों की ही सहायता से देवों ने अपने आपको इस लोक से स्वर्ग लोक में उठाया। उद्गर्भ से औद्गर्भण बना। इसी प्रकार यजमान भी औद्ग्रभण आहुतियों के द्वारा अपने आपको इस लोक से स्वर्ग लोक को ले जा।" (6/6/1/12)

उपनिषद् में है—

न संदृशे तिष्ठति रूपमस्य न चक्षुषा पश्यति कश्चनैनम्।
हृदा मनीषी मनसाऽभिक्लृप्तो य एतद्विदुर मृतास्ते भवन्ति।।

(कठो॰ 2/3/9)

"जो ब्रह्म को इस प्रकार जानते हैं कि—ब्रह्म का यथार्थ रूप अपने समक्ष प्रकट नहीं होता। परमेश्वर के दिव्य स्वरूप को कोई इन चर्मचक्षुओं से नहीं देख सकता। मन को वश में करनेवाली विवेक बुद्धि तथा तद्भाव सम्पन्न हृदय द्वारा बारम्बार चिन्तन-मनन करने से ही उसका सम्यक् दर्शन हो सकता है।— वे अमृतत्व (अर्थात् स्वर्ग) को प्राप्त करते हैं।

यही शिक्षा श्वेताश्वतरोपनिषद् (4/20) में भी पाई जाती है।

महाभारत में है—

दानेन तपसा चैव सत्येन च युधिष्ठिर।
ये धर्ममनुवर्तन्ते ते नराः स्वर्गगामिनः।।

(13/23/85)

"जो दान, तपस्या और सत्य के द्वारा धर्म का अनुष्ठान करते हैं वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं।"

भयात्पापात्तथा बाधाद् दारिद्याद व्याधिधर्षणात्।
यृत्कृते प्रतिमुच्यन्ते ते नराः स्वर्गगामिनः।।

(महाभारत, 13/23/87)

"जिनके प्रयत्न से मनुष्य भय, पाप, बाधा, दरिद्रता तथा व्याधिजनित पीड़ा से छुटकारा पा जाते हैं, वे लोग स्वर्ग में जाते हैं।"

क्षमावन्तश्च धीराश्च धर्मकार्येषु चोत्थिताः।
मंगलाचारसम्पन्नाः पुरुषाः स्वर्गगामिनः।।

(महाभारत, 13/23/88)

"जो क्षमावान, धीर, धर्मकार्य के लिए उद्यत रहनेवाले और मांगलिक आचार से संपन्न हैं वे पुरुष भी स्वर्गगामी होते हैं।"

मातरं पितरं चैव शुश्रूषन्ति जितेन्द्रियाः।
भ्रातृणां चैव सस्नेहास्ते नराः स्वर्गगामिनः।।

(महाभारत, 13/23/93)

"जो जितेन्द्रिय होकर माता-पिता की सेवा करते हैं तथा भाइयों पर स्नेह रखते हैं, वे लोग स्वर्ग लोक में जाते हैं।

स्वर्ग का आनन्दमय दृश्य

स्वर्ग में वह सब कुछ है जिसकी कामना किसी के मन में हो सकती है। उदाहरणार्थ इन श्लोकों (मंत्रों) को लें :

तस्मा आपो घृतमर्षन्ति सिन्धवस्तस्मा इयं दक्षिणा पिन्वते सदा।

(ऋ. 1/125/5)

"नदियाँ उस (दानी पुरुष) के लिए (स्वर्ग में) जल रूप घृत प्रवाहित करती हैं। उसकी दी हुई दक्षिणा सदा बढ़ती रहती है।"

सहस्रधारेऽव ता असश्चतस्तृतीये सन्तु।

(ऋ. 9/74/6)

"हज़ारों नहरें मधु के स्वादवाली तीसरे आकाश (स्वर्ग) में चलती हैं।"

घृतह्रदा मधुकूलाः सुरोदकाः क्षीरेण पूर्णा उदकेन दध्ना।
एतास्त्वा धारा उपयन्तु सर्वाः स्वर्गलोके मधुमत्पिन्व माना।
उपत्वा तिष्ठन्तु पुष्करिणीः समन्ताः।।
चतुरः कुम्भांश्चतुर्धा ददामि क्षीरेण पूर्णा उदकेन दध्ना।
एतास्त्वा धारा उपयन्तु सर्वाः स्वर्गलोके मधुमत्पिन्वमाना।

उपत्वा तिष्ठन्तु पुष्करिणीः समन्ताः।।

(अथर्व. 4/34/6-7)

"घी के प्रवाहवाली, मधुर रस के तटवाली, निर्मल जल से युक्त, जल, दही और दूध से परिपूर्ण ये सब धाराएँ तुझे प्राप्त हों। स्वर्ग लोक में मधुर रस को देनेवाली सब नदियाँ तेरे समीप उपस्थित हों। दूध, दही और उदक से भरे हुए चार घड़ों को चार प्रकार से प्रदान करता हूँ। ये सब धाराएँ तुझे प्राप्त हों, स्वर्ग लोक में मधुर रस को देनेवाली सब नदियाँ तेरे समीप उपस्थित हों।"

भोजा जिग्युः सुरभिं योनिमग्रे भोजा जिग्युर्वध्वं या सुवासाः।
भोजा जिग्युरन्तः पेयं सुराया भोजा जिग्युर्ये अहूताः पयन्ति।।

(ऋ. 10/107/9)

"दानदाता लोग सुगंधपूर्ण गृह को प्रथम प्राप्त करते हैं। दान दाता स्त्री को प्राप्त करते हैं, जो उत्तम वस्त्रोंवाली है। दानदाता लोग यश की अगाध गहराई को प्राप्त करते हैं। जो बिना बुलाए अर्थात् अकस्मात अनाहूत जो अपत्तियाँ विघ्न बाधाएँ आती हैं उनको दानदाता लोग जीतते हैं।"

महाभारत के अनुसार वास्तव में स्वर्ग पुण्यकर्मों से मिलनेवाला देवलोक है। इन्द्रपुरी को इसमें प्रधानता प्राप्त है। वहीं नन्दनवन है जहाँ इच्छानुसार रूप धारण करके अप्सराओं के साथ विहार करते हुए निवास करते हैं।[1] वहाँ जीर्णता शोक और थकावट नहीं है; न वहाँ कोई भय है। वहाँ ठहरने के लिए सुन्दर-सुन्दर महल और बैठने के लिए उत्तमोत्तम सिंहासन बने हुए हैं। गन्धर्व और अप्सराएँ नृत्य, वाद्य और गीतों द्वारा मनोरंजन करती हैं।[2]

[1] महाभारत 1/89/16-19

[2] महाभारत 2/7/3-24

महाभारत में ही आदि पर्व के अध्याय 92 में प्रतर्दन को स्वर्ग की शुभसूचना देते हुए ययाति कहते हैं—

मधुच्युतो घृतपृक्ता विशोका
स्ते नातवन्तः प्रतिपालयन्ति।।

(महाभा॰ 1/92/15)

अर्थात् "वे (स्वर्ग के लोक) सब-के-सब अमृत के झरने बहाते हैं एवं घृत से युक्त हैं। उनमें शोक का सर्वथा अभाव है। वे सभी लोक आपकी प्रतिक्षा कर रहे हैं।"

स्वर्ग सदैव के लिए मिलेगा

वेदों से ज्ञात होता है कि स्वर्ग-लोक से वापसी न होगी। मुक्ति शाश्वत होगी। स्वर्गगामी सदैव सुख में रहेंगें। ऋग्वेद में है—

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्।

(ऋ॰ 7/59/12)

"हे मनुष्यो! जिस अच्छे प्रकार पुण्यरूप यशयुक्त पुष्टि बढ़ानेवाले तीनों कालों में रक्षण करने या तीन अर्थात् जीव कारण और कार्यों की रक्षा करनेवाले परमेश्वर को हम लोग उत्तम प्रकार प्राप्त होवें उसकी आप लोग भी उपासना करिए और जैसे मैं बंधन से ककड़ी के फल के सदृश मरण से छूटूँ वैसे आप लोग भी छूटिए, जैसे मैं मुक्ति से न छूटूँ वैसे आप भी मुक्ति की प्राप्ति से विरक्त मत होइए।"

उपनिषदों से भी मालूम होता है कि ब्रह्मलोक या स्वर्ग-लोक पहुँचकर आत्माएँ वापस नहीं आतीं। कठोपनिषद में है—

यदिदं किं च जगत्सर्वं प्राण एजति निःसृतम्।
महद्भयं वज्रमुद्यतं य एतद्विदुरमृतास्ते भवन्ति।।

(2/3/2)

"यह संपूर्ण विश्व उस प्राणरूप ब्रह्म से ही निःसृत (प्रकट) होकर उसी में गतिशील है। जो उस महान भंयकर प्रहरोद्यत वज्र की तरह ब्रह्म को जानते हैं, वे अमृतत्व को प्राप्त करते हैं। अर्थात् पलटकर इहलोक को नहीं आते।"

नरक की धारणा भारतीय धर्मग्रन्थों में

पारलौकिक जीवन में नरक उन लोगों का ठिकाना माना गया है जो सत्य के विरोधी और चरित्रहीन होंगे। वैदिक दृष्टि से नरक अन्धकारमय है, जहाँ पापी और गुनाहगार प्रवेश करेंगे। यजुर्वेद में है—

असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृताः।
ताँस्ते प्रेत्यापि गच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः।।

(यजुर्वेद 40/3)

वे दुनियाँए बिना सूर्य की हैं, हर ओर अन्धकार छाया हुआ है। उनमें वे जाते हैं जो आत्महत्या करते हैं।"

अन्धं तमः प्रविशन्ति येऽसंभूतिमुपासते।
ततोभूय इव ते तमो य उ सम्भूत्यारताः।।

(यजुर्वे. 40/9)

"जो लोग परमेश्वर को छोड़कर अनादि अनुत्पन्न सत्व, रज और तमोगुणमय प्रकृतिरूप जड़ वस्तु को उपास्यभाव से जानते हैं वे आवरण करने वाले अंधकार को पूर्णतः प्राप्त होते हैं और जो महत्त्वादि स्वरूप से परिणाम को प्राप्त हुई सृष्टि में रमण करते हैं वे वितर्क के साथ उससे अधिक वैसे अविद्यारूप अंधकार को प्राप्त होते हैं।"

ईशावास्योपनिषद् में भी नरक को घोर अंधकार माना गया है। कहा गया है कि अविद्या[1] की उपासना करनेवाले घोर अन्धकार में प्रवेश करते हैं।

इसी प्रकार पुराणों में भी नरक के संबंध में सविस्तार उल्लेख मिलता है। श्रीमद्भागवत महापुराण में कहा गया है कि नरक हज़ारों प्रकार के हैं। पाँचवें सकन्ध में है—

ह्यनाद्यविद्यया कृतका मानां तत्परिणामलक्षणाः
सृतयः सहस्रशः प्रवृत्तास्तासां

(भा॰ महा॰ पु॰ 5/26/3)

"अनादि अविद्या से किए गए कर्मों के परिणामस्वरूप नरक भी हज़ारों प्राप्त होते हैं।"

इसी महापुराण में हज़ारों प्रकार के नरकों में से प्रमुख नरकों का उल्लेख भी कर दिया गया है। उन प्रमुख नरकों की संख्या अट्ठाइस बताई गए है। पाँचवें स्कन्ध में हैं—

तामिस्रोऽन्धतामिस्रो रौरवो महा रौरवः कुम्भीपाकः
काल सूत्र मसिपत्रवनं सूकरमुखमन्धकूपः कृमिभोजनः
सन्दंशस्तप्त सूर्मिर्वज्रकण्ट कशाल्मली वैतरणी पूयोदः
प्राणरोधो विशसनं लालाभक्षः सारमेयादनमवीचिरयः पानमिति।
किंचक्षारकर्दमो रक्षोगणभोजनः शूलप्रोतो दन्दशूकोऽवटनिरोधनः
पर्यावर्तनः सूचीमुखमित्यष्टाविंशतिर्नरका विविधयातनाभूमयः।।

(भाग॰ महा॰ पु॰ 5/26/7)

---

[1] अविद्या' विद्या का विरोधी भाव है— "अविद्या तत्वविद्या विरोधिनी" अर्थात्— अविद्या द्वारा यथार्थ का बोध नहीं हो पाता। झाड़ी को भूत, रस्सी को साँप और सीपी को चाँदी की प्रतीत करानेवाली अविद्या ही है। वेदांत दर्शन में इसके अनेक पर्याय मिलते हैं। यथा—अज्ञान, माया, अव्यक्त, अव्याकृत प्रधान, प्रकृति, आकाश, अध्यास, शक्ति, उपाधि इत्यादि। आचार्य शंकर जी ने माया को अविद्या माना है और कहा है कि माया के ही प्रभाव से सभी प्राणी संसार सागर में डूबते-उतराते रहते हैं। कबीर ने भी अविद्या को माया माना है और कहा है—'माया महाठगनी हम जानी'—। कुरआन में तो अविद्या से बचने के स्पष्ट निर्देश हैं। इसके लिए क़ुरआन में 'जह्ल' शब्द प्रयुक्त हुआ है। —संपादक

"तामिस्र अन्धतामिस्र, रौरव, महारौरव, कुम्भीपाक, कालसूत्र, असीपत्रवन, सूकरमुख, अन्धकूप, कृमिभोजन, सन्दंश, तप्तसूर्मि, वज्रकण्टक, शालमली, वैतरणी, पूयोद, प्राणरोध, विशसन, लालाभक्ष, सरमेयादन, अवीचि, अयः पान ये इक्कीस और मतान्तर से और सात ये हैं—क्षारकर्दम, रक्षोगण भोजन, शूलप्रोत, दन्दशूक, अवटनिरोधन, पर्यावर्तन, सूचीमुख ये (सात और इक्कीस मिलकर) अट्ठाइस नरक विविध यातनाओं के स्थान हैं।"

आगे इसी महापुराण (5/26/8-36) में यह भी वर्णन कर दिया गया है कि कौन-सा नरक किस अपकर्म के बदले मिलता है।

विष्णु महापुराण के द्वितीय अंश के छठे अध्याय में भी उपरोक्त प्रकार के नरकों का वर्णन आया है और बताया गया है कि किस पाप के बदले कौन, किस नरक में जाता है।

इसके अतिरिक्त सुखसागर में भी नरक के संबंध में इसी प्रकार का वर्णन मिलता है।

वेदों में नरक की यातनाओं की ओर स्पष्ट संकेत करते हुए कहा गया है कि—

इन्द्रासोमा समघशंसमभ्य घं तपुर्ययस्तु चरुरग्निवाँ इव।।

(ऋ. 7/104/2)

"हे इन्द्र और सोम! पाप करने के लिए प्रसिद्ध महापापी दुष्ट को मिलकर विनष्ट करो। वह दुष्ट दुख से तप जाने पर अग्नि में डाली हुई मात की आहुति के समान जलकर विनष्ट हो जावे।"

इन्द्रासोमा दुष्कृतो वव्रे अन्तरनारम्भणे तमसि प्र विध्यतम्।
यथा नातः पुनरेकश्चनोदयत् तद् वामस्तु सहसे मन्युमच्छवः।।

(ऋ. 7/104/3)

"हे इन्द्र और सोम! दुष्ट कर्म करनेवालों को अगाध (अर्थात् धोर) अंधकार में विद्ध करो (अर्थात् डाल दो) जिससे एक भी

फिर से वहाँ से न आ सके। वह तुम दोनों का उत्साहपूर्ण बल शत्रुविजय के लिए समर्थ हो।"

सर्वान् कामान् यमराज्ये वशा प्रददुषे इ दुहे।
अथाहुर्नारकं लोकं निरुन्धानस्य याचिताम्।।

(अथर्व. (12/4/36)

"वशा (कामना योग्य वेदवाणी) न्यायकारी (परमेश्वर) के राज्य में अपने बड़े दानी के लिए सब श्रेष्ठ कामनाएँ पूरी करती है और उस माँगी हुई को रोकनेवाले का लोक (घर) नरक, वे बताते हैं।"

वरणेन प्रव्यथिता भ्रातृव्या मे सबन्धवः ।
असूर्त रजो अप्यगुस्ते यन्त्वधमं तमः ।।

(अथार्व. 10/3/9)

"मेरे बान्धवों के साथ शत्रुगण वरण मणि के कारण पीड़ित होकर अन्धकारमय धूलिमय स्थान को प्राप्त हों। ये निकृष्ट अन्धकार को प्राप्त हों।"

अभ्रातरो न योषणो व्यन्तः पतिरिपो न जनयो दुरेवाः।
पापासः सन्तो अनृता असत्या इदं पदमजनता गभीरम।।

(ऋ. 4/5/5)

"बंधुबांधवों से रहित स्त्री जिस प्रकार कुमार्ग पर चलती है, उसी प्रकार कुमार्ग पर चलनेवाले अथवा पति से द्वेष करनेवाली स्त्रियाँ जिस प्रकार दुराचारिणी हो जाती हैं, उसी प्रकार दुराचारी ऋत अर्थात् नैतिक नियमों का उल्लंघन करनेवाले, असत्य बोलनेवाले पापियों ने इस अगाध नरक स्थान को उत्पन्न किया है।"

स्पष्ट है कि नरकगामी यही नहीं कि नरक में यातना पाएँगे, बल्कि उनकी यह यातना सदैव के लिए होगी जिस प्रकार स्वर्गवासी सदैव के लिए स्वर्ग में जाएँगे।

इन उल्लेखों से स्पष्ट है कि भारतीय धर्म की वास्तविक धारणा परलोकवाद की है, आवागमन की कल्पना बाद की मिलावट है। परलोकवाद को मानना वास्तव में किसी अभारतीय धारणा को स्वीकार करना नहीं है, बल्कि भारतीय मौलिक धारणा वस्तुतः परलोकवाद की ही धारणा है।

इसी प्रकार जैन और बौद्ध धर्म-ग्रन्थों में भी स्वर्ग और नरक का उल्लेख मिलता है।

बाइबल की गवाही

बाइबल में यद्यपि बहुत कुछ मिलावट कर दी गई है, फिर भी उससे आख़िरत अर्थात् परलोकवाद की पुष्टि होती है। हम यहाँ बाइबल से कुछ उद्धरण प्रस्तुत करना चाहेंगे :

मृत्यु के पश्चात् और आख़िरत से पूर्व की स्थिति

"इबराहीम के दीर्घायु होने के कारण अर्थात् पूरे बुढ़ापे की अवस्था में प्राण छूट गए। और वह अपने लोगों में जा मिला।"

(उत्पत्ति, 25/8)

"यह आज्ञा जब याक़ूब अपने पुत्रों को दे चुका, तब अपने पाँव खाट पर समेट प्राण छोड़े, और अपने लोगों में जा मिला।"

(उत्पत्ति, 49/33)

"एक धनवान मनुष्य था जो बैंगनी कपड़े और मलमल पहनता था और प्रतिदिन सुख-विलास और धूम-धाम के साथ रहता था। एक ग़रीब मनुष्य था। उसका नाम लाजर था। उसका शरीर घावों से भरा हुआ था। वह प्रतिदिन उसकी ड्योढ़ी पर छोड़ दिया जाता था। वह चाहता था कि धनवान की मेज़ पर की जूठन से अपना पेट भरे। कुत्ते भी आकर उसके घावों को चाटते थे। एक दिन ग़रीब लाजर मर गया। स्वर्गदूतों ने उसे ले जाकर इबराहीम की गोद में पहुँचाया। वह धनवान भी मरा और गाड़ा गया। अधोलोक में वह पीड़ा में पड़ा था। वहाँ से उसने अपनी आँखें ऊपर कीं और दूर से इबराहीम की गोद में

लाजर को देखा। उसने पुकार कर कहा, 'हे पिता इबराहीम, मुझ पर दया कर और लाजर को मेरे पास भेज दे, ताकि वह अपनी अंगुली का सिरा पानी में भिगोकर मेरी जीभ को ठण्डी करे, क्योंकि मैं नरक की इस ज्वाला में तड़प रहा हूँ।' तब इबराहीम ने कहा, 'हे पुत्र! स्मरण कर कि तू अपने जीवन में अच्छी वस्तुएँ भोग चुका है, और लाजर बुरी वस्तुएँ। परन्तु अब वह यहाँ शान्ति पा रहा है और तू तड़प रहा है। इन सब बातों के अतिरिक्त हमारे और तुम्हारे बीच एक भारी गड्ढा ठहराया गया है कि जो यहाँ से उस पार तुम्हारे पास जाना चाहें, वे न जा सकें, और न कोई वहाँ से इस पार हमारे पास आ सकें। धनवान ने कहा, 'तो हे पिता, मैं तुझसे विनती करता हूँ कि तू उसे मेरे पिता के घर भेज दे। मेरे पाँच भाई हैं, वह उनके सामने इन बातों की गवाही दे, ऐसा न हो कि वे भी इस पीड़ा की जगह में आएँ।' इबराहीम ने उससे कहा, 'उनके पास तो मूसा और नबियों (ईशसंदेष्टाओं) की पुस्तकें हैं, वे उनकी सुनें।' धनवान ने कहा, 'नहीं' हे पिता इबराहीम, यदि कोई मरे हुओं में से उनके पास जाए, तो वे मन फिराएँगे।' इबराहीम ने उससे कहा कि जब वे मूसा और नबियों की नहीं सुनते तो यदि मरे हुओं में से कोई जी भी उठे, तो भी उसकी नहीं मानेंगे।"

(लूका, 16/19-31)

बाइबल में प्रलय का उल्लेख

एक बड़ा भूकम्प आया, और सूर्य कम्बल की तरह काला, और पूरा चन्द्रमा रक्त के समान लाल-सा हो गया। आकाश के तारे पृथ्वी पर ऐसे गिर पड़े जैसे बड़ी आँधी से हिलकर अंजीर के पेड़ में से कच्चे फल झड़ते हैं। आकाश ऐसे सरक गया, जैसे पत्र लपेटने से सरक जाता है; हर जगह एक पहाड़ और टापू, अपने-अपने स्थान से टल गए।" (प्रकाशित वाक्य, 6/12-14)

"उन दिनों के कष्ट के तुरन्त बाद सूर्य अंधकारमय हो जाएगा, और चन्द्रमा प्रकाश नहीं देगा। तारे आकाश से गिर पड़ेंगे और आकाश की शक्तियाँ हिलाई जाएँगी।" (मत्ती, 24/29)

"निबटारे की तराई में भीड़ की भीड़ है। क्योंकि निबटारे की तराई में प्रभु का दिन निकट है। सूर्य और चन्द्रमा अपना-अपना प्रकाश न देंगे और न तारे चमकेंगे।" (योएल, 3/24-15)

बाइबल और परलोकवाद

मरने के पश्चात् लोग पुनः जीवित किए जाएँगे और अपने कर्मानुसार फल पाएँगे, इसका विवरण बाइबल में भी मिलता है :

"वह तुरही की बड़ी आवाज़ के साथ अपने स्वर्ग दूतों को भेजेगा, और वे आकाश के इस छोर से उस छोर तक, चारों दिशा से उसके चुने हुए विश्वासियों को इकट्ठा करेंगे।"

(मत्ती, 24/31)

अचरज मत करो, क्योंकि वह समय आ रहा है जब क़ब्र में पड़े हुए व्यक्ति उसके शब्द सुनेंगे और बाहर निकलेंगे। जिन्होंने भलाई की है, वे जीवन के पुनरुत्थान (मृतकोत्थान) के लिए जी उठेंगे, और जिन्होंने बुराई की है, वे दण्ड के पुनरुत्थान के लिए जी उठेंगे।" (यूहन्ना, 5/28-29)

"मैंने आकाश और नई पृथ्वी को देखा; क्योंकि पहला आकाश और पहली पृथ्वी नष्ट हो गई थी। समुद्र भी न रहा।"

(यूहन्ना का प्रकाशित वाक्य, 21/1)

"सब जातियाँ उसके सामने उपस्थित की जाएँगी। जैसे चरवाहा भेड़ों को बकरियों से अलग करता है, वैसे ही वह लोगों को एक-दूसरे से अलग करेगा।....तब राजा अपनी दाहिनी ओर के लोगों से कहेगा...आओ, उस राज्य के अधिकारी हो जाओ, जो जगत् के आदि से तुम्हारे लिए तैयार किया गया है। क्योंकि मैं भूखा था, और तुमने मुझे खाने को दिया। मैं प्यासा था और तुमने

मुझे पानी पिलाया। मैं परदेशी था और तुमने मुझे अपने घर में ठहराया। मैं नंगा था और तुमने मुझे कपड़े पहनाए। मैं बीमार था और तुमने मेरी सुधि ली। मैं बन्दीगृह में था और तुम मुझसे मिलने आए। तब धर्मी उसको उत्तर देंगे, हे प्रभु, हमने कब आपको भूखा देखा और भोजन खिलाया? या प्यासा देखा और पानी पिलाया? हमने कब आपको परदेशी देखा और अपने घर में ठहराया? हमने कब आपको नंगा देखा और कपड़े पहनाए? हमने कब आपको बीमार या बन्दीगृह में देखा और आपको मिलने आए? तब राजा उन्हें उत्तर देगा, मैं तुमसे सच कहता हूँ कि तुमने जो मेरे इन छोटे-से-छोटे भाइयों में से किसी एक के साथ किया, वह मेरे साथ किया। तब वह बाईं ओर के लोगों से कहेगा, हे श्रापित लोगो! मेरे सामने से निकलो और उस अनन्त आग में जा पड़ो, जो शैतानों और उसके दूतों के लिए तैयार की गई है। क्योंकि मैं भूखा था और तुमने मुझे खाना नहीं दिया। मैं प्यासा था और तुमने मुझे पानी नहीं पिलाया। मैं परदेशी था और तुमने मुझे अपने घर में नहीं ठहराया। मैं नंगा था और तुमने मुझे कपड़े नहीं पहनाए। मैं बीमार था और बन्दीगृह में था और तुमने मेरी सुधि नहीं ली। तब वे उत्तर देंगे कि हे प्रभु, हमने आपको कब भूखा या प्यासा या परदेशी, या नंगा या बीमार या बन्दीगृह में देखा और आपकी सेवा नहीं की? तब वह उन्हें उत्तर देगा, मैं तुमसे सच कहता हूँ कि यदि तुमने इन छोटे-से-छोटे में से किसी एक के साथ नहीं किया, तो मेरे साथ भी नहीं किया। और ये दण्ड भोगेंगे (नरक में जाएँगे) परन्तु धर्मी अनन्त जीवन में प्रवेश करेंगे।" (मत्ती, 24/32-46)

"वह समय आ पहुँचा है कि मरे हुओं का न्याय किया जाए और तेरे सेवक नबियों (ईश-संदेष्टा) और पवित्र लोगों को और उन छोटे-बड़ों को जो तेरे नाम से डरते हैं, बदला दिया जाए। पृथ्वी के बिगाड़नेवाले नष्ट किए जाएँगे। परमेश्वर का जो मन्दिर स्वर्ग में है, वह खोला गया। उसके मन्दिर में उसकी

वाचा का सन्दूक़ दिखाई दिया, और बिजलियाँ और शब्द और गर्जन और भूडोल हुए और बड़े ओले पड़े।"

(यूहन्ना का प्रकाशितवाक्य, 11/18-19)

"मैंने छोटे-बड़े सब मृतकों को सिंहासन के सामने खड़े हुए देखा। पुस्तकें खोली गईं फिर एक और पुस्तक खोली गई, अर्थात् जीवन की पुस्तक, जैसे उन पुस्तकों में लिखा हुआ था, उनके कामों के अनुसार मृतकों का न्याय किया गया। समुद्र ने उन मृतकों को जो उनमें थे दे दिया, और मृत और अधोलोक ने उन मरे हुओं को जो उनमें थे दे दिया। उनमें से हर एक के कामों के अनुसार उसका न्याय किया गया।"

(यूहन्ना का प्रकाशितवाक्य, 20/12-13)

"हे जवान, अपनी जवानी में आनन्द कर और अपनी जवानी के दिनों में मग्न रह; अपनी मनमानी कर और अपनी आँखों की दृष्टि के अनुसार चल। परन्तु यह जान रख कि इन सब बातों के विषय में परमेश्वर तेरा न्याय करेगा।" (सभोपदेशक, 11/9)

"अन्त की बात यह है कि परमेश्वर का भय मान और उसकी आज्ञाओं का पालन कर, क्योंकि मनुष्य का सम्पूर्ण कर्तव्य यही है। क्योंकि परमेश्वर सब कामों और सब गुप्त बातों का, चाहे वे भली हों या बुरी, न्याय करेगा।" (सभोपदेशक, 12/13-14)

"मनुष्य के मार्ग प्रभु की दृष्टि से छिपे नहीं हैं और वह उसके सब मार्गों पर ध्यान करता है। दुष्ट अपने ही अधर्म के कर्मों से फँसेगा, और अपने ही पाप के बन्धनों में बँधा रहेगा। वह शिक्षा प्राप्त किए बिना मर जाएगा और अपनी ही मूर्खता के कारण भटकता रहेगा।" (नीतिवचन, 5/21-23)

"और जो भूमि के नीचे सोए रहेंगे उनमें से बहुत-से लोग जाग उठेंगे। कितने तो सदा के जीवन के लिए और कितने अपनी नामधराई और सदा तक अत्यन्त घिनौने ठहरने के लिए। तब सिखानेवालों की चमक आकाशमण्डल की-सी रहेगी, और जो

बहुतों को धर्मी बनाते हैं वे सर्वदा तारों की नाई प्रकाशमान रहेंगे।" (दानिय्येल, 12/2-3)

"मैं तुमसे कहता हूँ कि दाख का यह रस उस दिन तक कभी न पीऊँगा, जब तक तुम्हारे साथ अपने पिता (ईश्वर) के राज्य में नया न पीऊँ।" (मत्ती, 26/29)

"कोई वस्तु छिपी नहीं जो प्रकट नहीं की जाएगी और न कुछ गुप्त है जो प्रकाश में नहीं आएगी।" (मरकुस, 4/22-23)

"तेरे मरे हुए लोग जीवित होंगे, मुरदे उठ खड़े होंगे। हे मिट्टी में बसनेवालो, जागकर जय-जयकार करो! क्योंकि तेरी ओस ज्योति से उत्पन्न होती है, और पृथ्वी मुर्दों को लौटा देगी।"

(यशायाह, 23/19)

"अतः हममें से हर एक व्यक्ति परमेश्वर को अपना-अपना लेखा देगा।" (रोमियो, 14/12)

बाइबल में स्वर्ग की धारणा

बाइबल में स्वर्ग लोक अर्थात् जन्नत का भी चित्रण मिलता है। यहाँ कुछ उद्धरण प्रस्तुत किए गए हैं:

"देख, परमेश्वर का निवास मनुष्यों के बीच में है; वह उनके साथ निवास करेगा और वे उसके निज लोग होंगे और परमेश्वर स्वयं उनके साथ रहेगा। वह उनका परमेश्वर होगा। वह उनकी आँखों से सब आँसू पोंछ डालेगा। इसके बाद न मृत्यु रहेगी, और न शोक, न विलाप न पीड़ा रहेगी। पहली बातें समाप्त हो गईं।" (प्रकाशित वाक्य, 21/3-4)

"उसके सेवक उसकी सेवा करेंगे। वे उसके मुख से सदा दर्शन करेंगे। उसका नाम उनके माथों पर लिखा हुआ होगा। फिर कभी रात न होगी। उन्हें दीपक और सूर्य के प्रकाश की आवश्यकता न होगी, क्योंकि प्रभु परमेश्वर उन्हें प्रकाश देगा और वे युगानुयुग राज्य करेंगे।" (प्रकाशितवाक्य, 22/3-5)

"धन्य वे हैं, जो अपने वस्त्र धो लेते हैं। उन्हें जीवन के पेड़ के पास आने का अधिकार मिलेगा और वे फाटकों से होकर नगर में प्रवेश करेंगे। परन्तु कुत्ते, टोन्हें, व्यभिचारी, हत्यारे, मूर्तिपूजक और झूठ का चाहनेवाला, और गढ़नेवाला झूठा व्यक्ति नगर से बाहर रहेगा।" (प्रकाशितवाक्य, 22/14-15)

"मैंने उसमें कोई मन्दिर (पवित्र स्थान) न देखा, क्योंकि स्वयं सर्वशक्तिमान प्रभु परमेश्वर और मेमना उसका मन्दिर है। उस नगर में सूर्य और चन्द्रमा के प्रकाश की आवश्यकता नहीं, क्योंकि परमेश्वर के तेज से उसमें उजाला हो रहा है और मेमना उसका दीपक है। जाति-जाति के लोग उसकी ज्योति में चलेंगे-फिरेंगे और पृथ्वी के राजा अपने-अपने वैभव का सामान उसमें लाएँगे। उसके फाटक दिन को कभी बन्द न होंगे और वहाँ रात न होगी। लोग राष्ट्रों की महिमा और वैभव का सामान उसमें लाएँगे। उसमें कोई अपवित्र वस्तु या घृणित काम करनेवाला, झूठ गढ़नेवाला, किसी रीति से प्रवेश न करेगा; परन्तु वे लोग जिनके नाम मेमने के जीवन की पुस्तक में लिखे हुए हैं, उसमें प्रवेश करेंगे।" (प्रकाशितवाक्य, 21/22-27)

"अपने लिए स्वर्ग में धन इकट्ठा करो, जहाँ न तो कीड़ा, और न कोई उसे नष्ट करते हैं, जहाँ चोर न सेंध लगाते और न उसे चुराते हैं। क्योंकि जहाँ तेरा धन है वहाँ तेरा मन भी लगा रहेगा।" (मत्ती, 6/20-21)

"स्वर्ग का राज्य उन दस कुँवारियों के समान होगा, जो अपनी मशालें लेकर दूल्हे से भेंट करने को निकलीं। उनमें पाँच मूर्ख और पाँच समझदार थीं। मूर्खों ने अपनी मशालें तो लीं, परन्तु अपने साथ तेल नहीं लिया। परन्तु समझदारों ने अपनी मशालों के साथ अपनी कुप्पियों में तेल भी भर लिया। जब दूल्हे के आने में देर हुई, तब वे सब ऊँघने लगीं और सो गईं। आधी रात को धूम मची और पुकार सुनाई दी कि देखो दूल्हा आ रहा

है, उससे भेंट करने के लिए चलो। तब वे सब कुँवारियाँ उठकर अपनी मशालें ठीक करने लगीं। मूर्खों ने समझदारों से कहा, 'अपने तेल में से कुछ हमें भी दो, क्योंकि हमारी मशालें बुझी जा रही हैं। परन्तु समझदारों ने उत्तर दिया, संभव है तेल हमारे और तुम्हारे लिए पूरा न हो; भला तो यह है कि तुम तेल बेचने वालों के पास जाकर अपने लिए तेल मोल ले लो।' जब वे तेल मोल लेने को जा रही थीं, तब दूल्हा आ पहुँचा, जो कुँवारियाँ तैयार थीं, वे उसके साथ ब्याह के घर में चली गईं। द्वार बन्द हो गया। कुछ समय बाद दूसरी कुँवारियाँ भी आईं। वे कहने लगीं, 'हे स्वामी, हे स्वामी, हमारे लिए द्वार खोलिए।' उसने उत्तर दिया, 'मैं तुमसे सच कहता हूँ, मैं तुम्हें नहीं जानता। इसलिए जागते रहो, क्योंकि तुम न उस दिन को जानते हो, न उस पल को।" (मत्ती, 25/1-13)

"आत्मा और दुल्हिन दोनों कहती हैं, 'आः' सुननेवाला भी कहे 'आः' जो प्यासा हो, वह आए और जो कोई चाहे वह जीवन का जल बिना मूल्य चुकाए ले ले।" (प्रकाशितवाक्य, 22/17)

"मैं तुमसे सच कहता हूँ कि बहुत लोग पूर्व और पश्चिम से आकर अब्राहम (इबराहीम) इसहाक़ और याक़ूब के साथ स्वर्ग के राज्य में बैठेंगे। परन्तु राज्य की सन्तान बाहर अंधकार में डाल दी जाएँगी : वहाँ वे रोएँगे और दाँत पीसेंगें।" (मत्ती, 8:11-12)

नरक की धारणा और बाइबल

स्वर्ग के अतिरिक्त बाइबल में नरक की धारणा का उल्लेख भी हुआ है–

"उनमें से हर एक के कामों के अनुसार उनका न्याय किया गया। मृत्यु और अधोलोक भी आग की झील में डाले गए। यह आग की झील दूसरी मृत्यु है। जिस किसी का नाम जीवन की पुस्तक में लिखा हुआ न मिला, वह आग की झील में डाला गया।" (प्रकाशित वाक्य, 20/13-15)

हज़रत ईसा मसीह यहूदी धर्मनेताओं को सम्बोधित करते हुए कहते हैं :
"हे साँपो, हे करैतों के बच्चो, तुम नरक के दण्ड से कैसे बच सकोगे?" (मत्ती 23/33)

"जो कोई उस प्रभु और उसकी मूर्ति की पूजा करे और अपने माथे या अपने हाथ पर उसकी छाप ले, तो वह परमेश्वर के प्रकोप की चोखी मदिरा जो उसके क्रोध के कटोरे में डाली गई है, पिएगा और पवित्र स्वर्गदूतों (फ़रिश्तों) के सामने और मेमने के सामने आग और गन्धक की पीड़ा में पड़ेगा। उसकी पीड़ा का धुआँ युगानुयुग उठता रहेगा जो उस पशु और उसकी मूर्ति की पूजा करते हैं, और जो उसके नाम की छाप लेते हैं, उनको रात-दिन चैन न मिलेगा। (प्रकाशित वाक्य, 14/9-12)

'तू अधोलोक में उस गढ़्ढ़े की तह तक उतारा जाएगा। जो तुझे देखेंगे, तुझको ताकते हुए तेरे विषय में सोच-सोचकर कहेंगे, क्या यह वही पुरुष है जो पृथ्वी को चैन से रहने न देता था और राज्य-राज्य में घबराहट डाल देता था, जो जगत् को जंगल बनाता और उसके नगरों को ढा देता था और अपने बन्धुओं को घर जाने नहीं देता था।" (यशायाह, 14/15-17)

परलोक से सम्बन्धित बाइबल के उद्धरणों से विदित है कि इस सिलसिले में बाइबल और क़ुरआन के मध्य बड़ा साम्य पाया जाता है। अर्थात् क़ुरआन ने परलोक के विषय में जो सूचनाएँ दी हैं वे बाइबल के अनुरूप ही हैं। इस सम्बन्ध में बाइबल और क़ुरआन में कोई मतभेद नहीं पाया जाता। क़ुरआन की तरह बाइबल से भी ज्ञात होता है कि मृत्यु के पश्चात मनुष्य का अन्त नहीं हो जाता बल्कि मनुष्य की आत्मा जीवित रहती है और वह अपने कर्म के अनुसार अधोलोक में या फिर सुखद स्थिति में रहती है। क़ियामत के दिन ईश्वर के आज्ञाकारी बन्दे स्वर्ग में प्रवेश करेंगे, इसके विपरीत ईश-विमुख लोगों का ठिकाना नरक होगा जहाँ वे निरंतर यातनाग्रस्त रहेंगे। कोई न होगा जो उन्हें नरक की यातना से छुटकारा दिला सके। और न उन्हें इसका अवसर मिल सकेगा कि वे संसार में लौटकर ईश्वर की इच्छा के अनुसार अपना

सुधार कर सकें। पैग़म्बरों की शिक्षाओं की उपेक्षा उनका एक ऐसा अपराध होगा जो अक्षम्य होगा।

बाइबल में क़ुरआन की तरह प्रलय का उल्लेख भी मिलता है। अर्थात क़ियामत के पहले चरण में बड़ा भूकम्प होगा। जगत् की वर्तमान व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो जाएगी, नक्षत्र और सूर्य-चंद्र सबकी आभा समाप्त हो जाएगी। क़ुरआन की तरह सूर या तुरही का उल्लेख भी बाइबल में किया गया है। सूर की आवाज़ से क़ब्र के मुर्दे जी उठेंगे। एक नई दुनिया सामने होगी। अच्छे और बुरे एक-दूसरे से अलग कर दिए जाएंगे। अच्छे लोग वही होंगे जिन्होंने ईश-दासता में जीवन व्यतीत किया होगा और मानवों के साथ जिनका व्यवहार अच्छा रहा होगा। जो दूसरों के काम आने को अपने लिए सौभाग्य की बात समझते रहे होंगे। धर्म इसके सिवा और क्या है कि आदमी एक ओर ईश्वर के प्रति उसके जो कर्तव्य होते हैं उनका पालन करे और दूसरी ओर वह अपने उस दायित्व की भी उपेक्षा न करे जो उसका दायित्व मानवों के प्रति होता है।

क़ियामत के दिन सब कुछ प्रकट हो जाएगा। बाइबल में स्वर्ग का जो चित्रण किया गया है वह क़ुरआन ही की तरह मनोरम है। ईश्वर जन्नतवालों के साथ होगा। वह अपने भक्तों के आँसू पोंछेगा। फिर न उसकी वहाँ कभी मृत्यु होगी और न उन्हें कोई शोक या भय होगा। ईश्वर के प्रकाश से सभी कुछ प्रकाशित होगा।

स्वर्ग की तरह नरक का चित्रण भी बाइबल में प्रस्तुत किया गया है जो अत्यंत भयावह है। बहुदेववाद में ग्रस्त लोगों को कभी क्षमा न किया जा सकेगा। वे सदैव नरक की यातना में ग्रस्त रहेंगे। वे मृतप्राय होंगे। और आग की झील उनका निवास स्थान होगा। सुखमय जीवन से वे सदैव के लिए वंचित होंगे। वे ईश्वर के क्रोध के अतिरिक्त और कुछ न देख सकेंगे।

इस तरह परलोक सम्बन्धी उल्लेख जो बाइबल में मिलता है क़ुरआन के अत्यंत अनुरूप है।

अध्याय-10

अमृत स्पर्श या.......?

परलोक को न मानने का प्रभाव मानव-जीवन पर

परलोकवाद की धारणा सामान्य लोकोत्तर दार्शनिक धारणाओं में से नहीं है, जिसके मानने या न मानने का हमारे व्यावहारिक जीवन पर कोई प्रभाव न पड़ता हो। परलोकवाद का हमारे जीवन से गहरा सम्बन्ध है। इसे मानने या न मानने का सांसारिक जीवन और उसके मामलों पर मौलिक रूप से प्रभाव पड़ता है। परलोक को मानने और न मानने से मानव के दृष्टिकोण में मौलिक परिवर्तन आ जाता है। यदि वह परलोक को मानता है तो स्वभावतः सांसारिक जीवन और उसके मामलों के सम्बन्ध में उसका दृष्टिकोण उस दृष्टिकोण से नितान्त भिन्न होगा जो परलोक के न मानने की दशा में होगा।

परलोक में विश्वास न रखनेवाला अपने को अनुत्तरदायी समझेगा और वह अपनी ज़िन्दगी का जो कार्यक्रम भी बनाएगा उसमें वह कदापि इस बात का ध्यान नहीं रखेगा कि किसी अन्य जीवन में उसके कर्मों का कोई परिणाम निकलनेवाला है। वह तो केवल यही देखेगा कि उसके किस कर्म का अच्छा परिणाम वर्तमान जीवन में सामने आ सकता है और कौन-सा कर्म वर्तमान जीवन के लिए हानिकारक है। उसकी दृष्टि में हानिकारक बात वह होगी जिससे उसे वर्तमान जीवन में हानि पहुँचती हो और वह उस कार्य को लाभदायक समझेगा जिससे दुनिया में उसे नुक़सान पहुँचने का भय हो। विषपान से बचेगा, क्योंकि वह जानता है कि विष विनाशकारी चीज़ है, उसका सेवन करके वह जीवित नहीं रह सकता। किन्तु झूठ, अन्याय, विश्वासघात आदि से वह बस उसी हद तक बचने की कोशिश करेगा जिस हद तक इनसे उसे सांसारिक हानि

पहुँचने की आशंका होगी। जहाँ वह यह देखेगा कि झूठ बोलने से वह अपना काम निकाल सकता है और इससे उसे दुनिया में कोई नुक़सान भी नहीं पहुँच सकता, वह झूठ बोलकर अपना काम चला लेगा। जहाँ वह देखेगा कि दूसरे को धोखा देने में उसके फ़ायदे हैं और नुक़सान कुछ भी नहीं, उसे दूसरों को धोखा देने में कोई संकोच न होगा। ऐसे व्यक्ति की निगाह में रुपया-पैसा, रोटी और कपड़े का तो मूल्य होगा, किन्तु आवश्यक नहीं कि न्याय, सच्चाई, सेवा और जन-प्रेम का भी उसकी निगाह में कोई मूल्य हो। वह तो केवल यह देखेगा कि उसका अपना हित किस बात में है। जिसमें उसे अपना हित दिखाई देगा वह उसी को अपना लेगा। सच्चाई या न्याय में यदि उसे अपनी हानि दिखाई देगी तो वह आसानी से उसे त्यागकर झूठ या अन्याय का पालन करेगा।

परलोक को न माननेवाले व्यक्ति केवल संसार में तत्काल प्राप्त होनेवाले लाभ और सुख को देखते हैं, चाहे वह लाभ और सुख क्षणिक एवं सामाजिक ही क्यों न हों। उनकी दृष्टि किसी स्थायी और शाश्वत परिणाम पर नहीं होती। इस कारण उनकी नीतियों में कोई स्थायित्व और सुदृढ़ता नहीं होती। वे किसी भी मार्ग में वहीं तक चल सकते हैं जहाँ तक उन्हें अपने हित और सांसारिक लाभ दिखाई देते हैं। उससे आगे बढ़ने और किसी बड़े त्याग और सेवा-कार्य की उनसे आशा नहीं की जा सकती। ऐसे लोग केवल दुनिया के बाह्य रूप को ही देखते हैं और उनकी दृष्टि में केवल उनके आरम्भिक और ऊपरी फ़ायदे ही होते हैं और वे उन्हीं के आधार पर अपनी नीति और मत निर्धारित करते हैं। क़ुरआन में है :

> "वे सांसारिक जीवन के केवल बाह्य रूप को जानते हैं, किन्तु आख़िरत की ओर से वे बिलकुल असावधान हैं।" (क़ुरआन, 30/7)
>
> "और जिन्हें सांसारिक जीवन ने धोखे में डाले रखा है।"
>
> (क़ुरआन, 7/51)

वे संसार ही को सब कुछ समझ बैठते हैं। तात्कालिक लाभों पर अपने जीवन को दाँव पर लगा देते हैं। हालाँकि जिसको वे अपने जीवन में प्रधानता दे रहे होते हैं, वह नश्वर होता है। जिस चीज़ पर वे राज़ी होते हैं, वह राज़ी होने की चीज़ नहीं होती। मनुष्य को तो उससे बढ़कर जो चीज़ हो सकती है उसकी कामना करनी चाहिए और उसके लिए प्रयत्नशील होना चाहिए, किन्तु परलोक को न मानने के कारण उनकी दृष्टि अत्यन्त संकुचित होकर रह जाती है और उन्हें जो कुछ संसार में मिल रहा होता है उसी के लिए वे अपना दामन पसारे हुए होते हैं। इससे आगे के लिए उनके पास न कोई साहस ही होता है और न कोई अभिलाषा ही। उनकी चेतना अत्यंत कुण्ठित और उनकी मानसिक दशा अति शोचनीय होती है। क़ुरआन में अल्लाह ने स्पष्ट शब्दों में कहा है—

> "जो लोग हमसे मिलने की आशा नहीं रखते और सांसारिक जीवन ही पर निहाल हो गए हैं और उसी पर संतुष्ट हो बैठे, और जो हमारी निशानियों की ओर से असावधान हैं, ऐसे लोगों का ठिकाना आग (नरक कुण्ड) है, उसके बदले में जो वे कमाते रहे।" (क़ुरआन, 10/7-8)

ऐसे ही लोगों को सम्बोधित करते हुए क़ुरआन कहता है—

> "कुछ नहीं! बल्कि तुम लोग शीघ्र मिलनेवाली चीज़ (दुनिया) से प्रेम रखते हो और आख़िरत (परलोक) को छोड़ रहे हो।" (क़ुरआन, 75/20-21)

> "नहीं बल्कि तुम तो संसारिक जीवन को प्राथमिकता देते हो हालाँकि आख़िरत (परलोक) अधिक उत्तम और शेष रहनेवाली है।" (क़ुरआन, 87/16-17)

परलोक को न माननेवालों का नैतिक दृष्टिकोण ही कुछ और होता है। चीज़ों का मूल्यांकन करने में वे धोखा खाते हैं। कर्म के अन्तिम परिणाम को न देखकर केवल तात्कालिक लाभों ही पर उनकी निगाह

टिकी हुई होती है। इसके कारण उनके सारे ही प्रयास व्यर्थ जाते हैं। क़ुरआन में है :

> "क्या वे यह समझते हैं कि हम जो उनकी सहायता धन और संतान से किए जा रहे हैं, तो ये उनके लिए भलाइयों में कोई जल्दी कर रहे हैं? नहीं, बल्कि उन्हें इसका एहसास नहीं है।"
>
> (क़ुरआन, 23/55-56)

> "कहो : क्या हम तुम्हें उन लोगों की ख़बर दें जो अपने कर्मों की दृष्टि से सबसे बढ़कर घाटा उठानेवाले हैं? ये वे लोग हैं जिनका प्रयास सांसारिक जीवन में अकारथ गया, और वे यही समझते हैं कि वे बहुत अच्छा कर्म कर रहे हैं। यही वे लोग हैं जिन्होंने अपने प्रभु की आयतों का और उससे मिलने का इनकार किया, अतः उनके कर्म उनके जान को लागू हुए, तो हम क़ियामत के दिन उन्हें कोई वज़न न देंगे।"
>
> (क़ुरआन, 18/103-105)

परलोक को न माननेवाला दुनिया ही को सब कुछ समझने की ग़लती करता है। अतः उससे यह आशा करनी व्यर्थ है कि वह सत्य-धर्म को स्वीकार करेगा और वह अपने जीवन में सच्चाई ला सकेगा। उसके समक्ष उच्च-से-उच्च नैतिक आदर्श प्रस्तुत कीजिए। किन्तु वह तो वही कहेगा और वही करेगा जिसमें उसका भौतिक एवं इहलौकिक लाभ होगा। वह क्या जाने सत्य-धारणाओं को, वह क्या समझे सत्कर्म और भलाई के कामों को, वह क्या जाने त्याग और बलिदान को, वह तो बस यही जानता और यही समझने की स्थिति में है कि वह जीवन में जितना भी सुख और सुविधाएँ प्राप्त कर सके, उससे न चूके। आनेवाले जीवन को वह हँसी में उड़ाने की चेष्टा करता है। हालांकि शाश्वत जीवन और उसकी उपब्धियाँ उसकी प्रतीक्षा कर रही होती हैं। वह उनसे विमुख होकर अपना ही सर्वनाश करता है। क़ुरआन ऐसे लोगों के विषय में बड़े मार्मिक ढंग से कहता है :

"जो लोग धरती में नाहक़ बड़े बनते हैं, मैं अपनी निशानियों की ओर से उन्हें फेर दूँगा, यदि वे प्रत्येक निशानी देख लें तब भी वे उसपर ईमान नहीं लाएँगे। यदि वे (चेतनता का) सीधा मार्ग देख लें तो भी वे उसे अपना मार्ग नहीं बनाएँगे, लेकिन यदि वे पथभ्रष्टता का मार्ग देख लें तो उसे अपना मार्ग बना लेंगे। यह इसलिए कि उन्होंने हमारी आयतों को झुठलाया और उनसे ग़ाफ़िल रहे। और जिन लोगों ने हमारी आयतों को और आख़िरत के मिलन को झूठा जाना, उनका सारा किया-धरा उनकी जान को लागू हुआ। जो कुछ वे करते रहे हैं क्या उसके अतिरिक्त वे किसी और चीज़ का बदला पाएँगे?"

(क़ुरआन, 7/146-147)

फिर परलोक को न मानने से मानव का सम्पूर्ण नैतिक और व्यावहारिक जीवन भ्रष्ट होकर रह जाता है। अहंकार और उद्दण्डता के अतिरिक्त कुछ भी उसके हिस्से में नहीं आता। क़ुरआन में है :

"तबाही है डंडी मारनेवालों के लिए, ज़ो नापकर लोगों से लेते हैं तो पूरा-पूरा लेते हैं, और जब उन्हें नाप या तौलकर देते हैं तो घटाकर देते हैं। क्या ये लोग नहीं समझते कि इन्हें जी उठना है?" (क़ुरआन, 83/1-4)

"तुम्हारा पूज्य इष्ट अकेला पूज्य इष्ट है। परन्तु जो लोग आख़िरत (परलोक) को नहीं मानते उनके दिल इनकार करते हैं, और वे अपने आपको बड़ा समझते हैं।" (क़ुरआन, 16/22)

संसार और भौतिक सुखों को ही सब कुछ समझनेवालों और सांसारिक चीज़ों के पीछे दौड़नेवालों के स्वभाव कठोर हो जाते हैं। वे निर्दयता और अन्याय की जो भी नीति अपनाएँ, कम है। और यदि वे कोई नेक काम करेंगे भी तो केवल लोगों को दिखाने के लिए करेंगे। वास्तविकता यह है कि जो व्यक्ति जीवन के मार्मिक, मधुर एवं सुदृढ़ पहलुओं को मानने से इनकार कर देता है और जीवन के केवल पाशविक पहलू ही को देखता है, उसके जीवन में कोमलता, सहृदयता,

दर्द और संवेदनशीलता के भाव के लिए आधार ही क्या शेष रहता है! वह परलोक अर्थात् जीवन की उच्चतम मनोरम न्याय-संगत संभावनाओं की उपेक्षा करता है। यदि वह यह समझता है कि उसने केवल पारलौकिक जीवन का निषेध किया है तो यह उसकी भूल है। उसने परलोक को ही नहीं झुठलाया, अपितु वर्तमान जीवन को विषाक्त बना दिया, उसमें कटुता का बीज बो दिया। उसका सर्वस्व छीन लिया और उसकी आत्मा का हनन किया। फिर यह कैसे कहा जा सकता है कि उसने वर्तमान जीवन का सच्चा सुख प्राप्त कर लिया। क़ुरआन ऐसे लोगों की मनोवृत्ति और चरित्र पर प्रकाश डालते हुए कहता है :

> "क्या तुमने देखा उस व्यक्ति को जो कर्मों का बदला दिए जाने को झुठलाता है? वही तो है जो अनाथ को धक्के देता है और मुहताज को खिलाने के लिए नहीं कहता।" (क़ुरआन, 107/1-3)

ऐसे लोग यदि दिखावे की नमाज़ भी पढ़ें तो वह निरर्थक है। इसी लिए क़ुरआन आगे कहता है :

> "तबाही है ऐसे नमाज़ियों के लिए जो अपनी नमाज़ से ग़ाफ़िल (असावधान) हैं, जो दिखावे का कार्य करते हैं और मामूली-मामूली चीज़ भी माँगे नहीं देते।" (क़ुरआन, 107/4-7)

यह कृपणता और तंगदिली इसलिए है कि लोग नहीं जानते कि ईश्वर के अपार भण्डार और अनश्वर सम्पत्ति के लिए अधिकारी वही होंगे जिनमें कृपणता नहीं, वरन् जो दानशील हैं, जो ईश-प्रसन्नता के लिए, परलोक की सफलता के लिए और आत्मिक विकास के लिए अपना सर्वस्व लुटा देने का साहस रखते हैं। यह साहस परलोक को माने और जीवन के वास्तविक स्वरूप को जाने बिना कैसे हो सकता है? क़ुरआन सचेत करता है :

> "जो लोग उस चीज़ में कृपणता से काम लेते हैं जो ईश्वर ने उन्हें उदार-कृपा से प्रदान की है, वे यह न समझें कि यह उनके हित में अच्छा है, बल्कि यह उनके लिए बुरा है। जिस चीज़ में

उन्होंने कृपणता से काम लिया होगा, वही आगे क़ियामत (पुनरुज्जीवन) के दिन उनके गले का तौक़ बन जाएगा।"

(क़ुरआन, 3/180)

यदि वर्तमान जीवन की भौतिक वस्तुओं के पुजारी सांसारिक सुख-भोग के पीछे लालायित हैं और जो सुख-सामग्री उन्हें प्राप्त है उसपर फूले नहीं समा रहे हैं, तो यह कोई बड़े श्रेय और सफलता की बात नहीं है। काश! उन्हें मालूम होता कि जिस चीज़ को वे अत्यन्त प्रिय समझ रहे हैं उसने उन्हें उस चीज़ से ग़ाफ़िल कर रखा है जो वास्तव में चाहने की चीज़ थी!

"बस्तियों में अधर्मियों की चलत-फिरत तुम्हें किसी धोखे में न डाले। यह तो थोड़ी सुख-सामग्री है। फिर तो उनका ठिकाना जहन्नम (नरक) है, और वह बहुत ही बुरा ठिकाना है। किन्तु जो लोग अपने प्रभु से डरते रहे, उनके लिए ऐसे बाग़ होंगे जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी, वे उनमें सदैव रहेंगे। यह ईश्वर की ओर से पहला आतिथ्य-सत्कार होगा। और जो कुछ ईश्वर के पास है, वह नेक और वफ़ादार लोगों के लिए बहुत अच्छा है।" (क़ुरआन, 3/196-198)

परलोक को मानने का प्रभाव मानव-जीवन पर

परलोक को मानने के बाद आदमी उन समस्त दोषों से बच जाता है जिनमें परलोक न माननेवाले ग्रस्त हो जाते हैं। आख़िरत या परलोकवाद को स्वीकार करने से मानव पर जो अच्छे प्रभाव पड़ते हैं उनका वर्तमान जीवन की दृष्टि से भी बड़ा महत्त्व है। आख़िरत को माननेवाला आख़िरत में तो सफल होगा ही, इस लोक में भी उसे जो पवित्रता और महानता प्राप्त होती है वह किसी अन्य उपाय से उपलब्ध नहीं को सकती। यहाँ संक्षेप में उन प्रभावों का उल्लेख किया जा रहा है जो परलोक को स्वीकार करने से मानव-जीवन पर पड़ते हैं :

1. आख़िरत (परलोक) को स्वीकार करने के पश्चात् मानव-जीवन अत्यंत व्यापक एवं विस्तृत हो जाता है। उसमें किसी प्रकार की तंगी शेष नहीं रहती। आदमी की दृष्टि अत्यन्त व्यापक हो जाती है। वह सामयिक और तात्कालिक लाभों का पुजारी न बनकर अपनी निगाह उस चीज़ पर टिकाता है जो शाश्वत और नित्य है। वह ऐसी ख़ुशी और आनन्द का अभिलाषी होता है जो स्थायी और अनश्वर है।

आप जानते हैं कि जिस समाज में व्यक्तियों का लक्ष्य निकट के हितों की प्राप्ति हो उसमें कभी स्थायित्व और संतुलन नहीं आ सकता। समाज में असंतोष रहेगा। जब प्रत्येक व्यक्ति दुनिया के धन और वैभव ही को अपना लक्ष्य बना ले, जबकि ये चीज़ें संसार में सीमित मात्रा में होती हैं, तो विदित है कि हर व्यक्ति के हिस्से में समान रूप से धन और वैभव नहीं आ सकेंगे। इसका परिणाम यह होगा कि समाज में असंतोष उभरेगा और इसे किसी भी प्रकार से स्वस्थ समाज का लक्षण नहीं कहा जा सकता। किन्तु समाज के लोग यदि आख़िरत की ज़िन्दगी पर यक़ीन रखते हों तो ऐसा नहीं होगा। ऐसे समाज में एक ओर तो धनवान व्यक्ति ग़रीब और दीन-दुखियों पर अपना माल ख़र्च करेंगे और दूसरी ओर आख़िरत को प्रधानता देने के कारण साधारण लोगों के मन में धन के लिए कोई ईर्ष्या और द्वेष का भाव उत्पन्न न होगा। क़ुरआन में इस तथ्य का चित्रण इस प्रकार किया गया है :

> "जो लोग सांसारिक जीवन के चाहनेवाले थे उन्होंने कहा, 'क्या ही अच्छा होता, जैसा कुछ क़ारून को मिला है, हमें भी मिला होता! वह तो बड़ा भाग्यवान है।' परन्तु जिन्हें ज्ञान प्राप्त था उन लोगों ने कहा : अफ़सोस तुमपर! ईश्वर का प्रतिदान उत्तम है उस व्यक्ति के लिए जो ईमान लाए और अच्छा कर्म करे, और यह बात उन्हीं के दिलों में पड़ती है जो धैर्यवान होते हैं।"
>
> (क़ुरआन, 28/79-80)

2. आख़िरत को माननेवाले कभी निराशाग्रस्त नहीं होते। उन्हें एक ओर परमेश्वर पर पूरा भरोसा होता है, दूसरी ओर उनकी निगाह में पारलौकिक जीवन होता है। दुनिया की तकलीफ़ और मुसीबत को वे इतना महत्त्व नहीं देते कि वे निराशाग्रस्त होकर रह जाएँ। बड़ी-से-बड़ी

मुसीबत और कष्टों को झेलने की सामर्थ्य उन्हें प्राप्त होती है। वे कभी-भी कर्तव्य-पथ से विचलित नहीं होते। उनके पास आख़िरत के यक़ीन की वह ताक़त होती है, जिससे वे हर आपदा और संकट को झेल लेते हैं और अपने दायित्व को पूरा करने में लगे रहते हैं। क़ुरआन में हैं कि जादूगर जब हज़रत मूसा (अलै०) के प्रभु (अल्लाह) पर ईमान लाए और सत्य-धर्म को स्वीकार कर लिया तो अत्याचारी सम्राट फ़िरऔन को यह बात बहुत बुरी लगी। उसने धमकी देते हुए कहा :

> "इससे पहले कि मैं तुम्हें अनुमति दूँ, तुम उस पर ईमान ले आए! यह तो एक चाल है जो तुम लोग नगर में चले हो, ताकि इसके निवासियों को इससे निकाल दो। अच्छा तो अब तुम्हें जल्द ही मालूम हुआ जाता है! मैं तुम्हारे हाथ-पाँव विपरीत दिशाओं से काट दूँगा, फिर तुम सबको सूली पर चढ़ाकर रहूँगा। वे बोले : हम तो अपने प्रभु पालनकर्ता ही की ओर पलटेंगे।" (क़ुरआन, 7/123-125)

यही आख़िरत पर विश्वास की शक्ति थी कि जादूगर तनिक भी भयभीत न हुए और अपनी जगह अडिग रहे।

3. आख़िरत पर सच्चा ईमान लानेवाला कभी साहसहीन और निष्क्रिय नहीं हो सकता। वह सदैव कर्मक्षेत्र में अपने कर्तव्यों के पालन में लगा रहेगा। वह जानता है कि परलोक की सफलता इसपर निर्भर करती है कि दुनिया में बिगाड़ के बदले बनाव पैदा करे, अशान्ति की जगह शान्ति की भूमिका निभाए, धरती को बुराइयों से मुक्त करे, निर्बल और असहायों के काम आए और अत्याचारियों को अत्याचार से रोककर उन्हें सीधे मार्ग पर लाए और उन्हें ईश्वर का आज्ञाकारी सेवक बनाने की कोशिश करे। अतः उसका प्रयास तबाही और बुराई को जन्म देनेवाला न होगा, बल्कि उसकी कोशिश सुधार, विकास एवं रचनात्मक कार्य के लिए होगी।

इहलौकिक जीवन को ही सब कुछ समझनेवाले तो सांसारिक सुख और धन-दौलत पाकर सन्तुष्ट हो सकते हैं। उनमें शिथिलता और

अकर्मण्यता आ सकती है, किन्तु आख़िरत (परलोक) को माननेवाला व्यक्ति जानता है कि अभी हम राह में हैं। अभी मंज़िल तक नहीं पहुँचे हैं, इसलिए वह कर्म में तल्लीन होगा। फिर वह यह भी समझता है कि वह दुनिया में सत्य के लिए जितना अधिक कार्य कर सकेगा उसके अनुसार आख़िरत में उसे उच्च स्थान मिल सकेगा। अतः वह बड़े-से-बड़ा काम करके भी दम न लेगा, बल्कि यही कहेगा कि अभी बहुत कुछ करने को शेष है। ईश्वर की सेवा और बन्दगी का हक़ हम अभी कहाँ अदा कर सके हैं। क़ुरआन ऐसे ही लोगों के बारे में कहता है :

> "यही वे लोग हैं जो भलाइयों में जल्दी करते हैं, और उन (भलाइयों) के लिए अग्रसर रहते हैं।" (क़ुरआन, 23/61)

4. आख़िरत को माननेवाला और पारलौकिक जीवन में विश्वास रखनेवाला अपने समय और माल की क़ुरबानी दे सकता है, बल्कि आवश्यकता पड़ने पर वह सत्य के लिए अपनी जान तक की क़ुरबानी दे सकता है, और बिना किसी लौकिक बदले के दे सकता है। हज़रत उसमान (रज़ि॰) ने अकाल (Famine) के समय अपना अनाज बिना कोई क़ीमत लिए ही बाँट दिया था, हालांकि ऐसे मौक़े पर आम व्यापारी अधिक-से-अधिक दाम वुसूल करने की कोशिश करते हैं। हज़रत ख़ुब्बैब (रज़ि॰) सूली पर जान दे देते हैं और मुख से कोई बात निकलती है तो यही :

> "जब मैं अल्लाह के मार्ग में जान दे रहा हूँ तो मुझे क्या परवाह कि किस पहलू गिरता हूँ।"

पैग़म्बर के एक साथी खजूरें खा रहे थे। खजूरें फेंक कर मैदान में कूद पड़े। वे यह सहन न कर सके कि वे खजूरें खाएँ और ईश्वर के पथ पर जान देकर जन्नत में पहुँचने में कुछ भी विलम्ब हो। वे जानते थे कि उन्होंने ईश्वर से जो सौदा किया है वह घाटे का सौदा नहीं है :

"ईश्वर ने ईमानवालों से उनके प्राण और उनके माल इसके बदले में ख़रीद लिए हैं कि उनके लिए जन्नत है : वे अल्लाह के मार्ग में लड़ते हैं, तो वे मारते भी हैं और मारे भी जाते हैं।"

(क़ुरआन, 9/111)

5. आख़िरत को माननेवाला सत्यानुगामी होता है। कोई भी चीज़ उसे सत्य से विचलित नहीं कर सकती :

"तुम उन लोगों को ऐसा कभी नहीं पाओगे जो ईश्वर और परलोक (आख़िरत) पर ईमान रखते हैं वे उन लोगों से मित्रता रखते हों जिन्होंने ईश्वर और उसके संदेष्टा (रसूल) का विरोध किया, यद्यपि वे उनके अपने बाप हों या उनके अपने बेटे हों, या उनके अपने भाई या उनके अपने परिवारवाले ही हों।"

(क़ुरआन, 58/22)

6. पारलौकिक जीवन को मानने के बाद हानि-लाभ, सफलता-असफलता का मानदण्ड बदल जाता है। जिसको लोग हानि या घाटा समझते हैं, उसे आदमी सफलता और प्राप्ति समझता है और जिसको दुनिया सफलता और लाभ जानती है, वह उसे घाटे की बात जानता है। उसे भोजन करने की अपेक्षा दूसरों को भोजन कराकर अधिक तृप्ति होती है। स्वयं पहनने के बदले ग़रीबों को कपड़ा पहनाकर वह अधिक आनन्द पाता है। उसे मालूम है कि वह जो कुछ भलाई के लिए ख़र्च कर रहा है वह वास्तव में आगे के लिए जमा कर रहा है। यात्रा-पथ में धन बरबाद करने के बजाय वह उसे अपनी वास्तविक मंज़िल के लिए सुरक्षित कर रहा है। क़ुरआन की यह शिक्षा उसके समक्ष होती है :

"ऐ ईमान लानेवालो! ईश्वर का डर रखो। और प्रत्येक व्यक्ति को यह देखना चाहिए कि उसने कल के लिए (आख़िरत के लिए) क्या भेजा है। और अल्लाह का डर रखो। जो कुछ भी तुम करते हो निश्चय ही ईश्वर उसकी पूरी ख़बर रखता है।"

(क़ुरआन, 59/18)

7. आख़िरत को स्वीकार करने के पश्चात् सम्मान और अपमान का मानदण्ड भी बदल जाता है। फिर तो आदमी की निगाह में इज़्ज़तवाला और आदरणीय वह होता है जो ईश्वर की दृष्टि में इज़्ज़तवाला है। जिसे आख़िरत में सम्मान प्राप्त होनेवाला है, चाहे दुनिया उसे आदर देती हो या न देती हो, वह ग़रीबों और मुहताजों की उपेक्षा नहीं कर सकता। उसकी निगाह दुनिया पर नहीं आख़िरत (परलोक) पर होती है। वह जानता है कि ईश्वर धन और रूप को नहीं, हृदय को देखता है। क़ुरआन ने स्पष्ट शब्दों में कहा है :

> ''ईश्वर के यहाँ तुममें सबसे अधिक प्रतिष्ठित वह है जो तुममें सबसे अधिक (ईश्वर का) डर रखता है।'' (क़ुरआन, 49/13)
>
> ''शक्ति ईश्वर और उसके संदेष्टा (रसूल) और ईश्वर के सच्चे भक्तों (मोमिनों) के लिए है, परन्तु कपटाचारी जानते नहीं।''
>
> (क़ुरआन, 63/8)

8. आख़िरत पर यक़ीन रखनेवाला चरित्रवान होता है। उसका चरित्र ऐसा नहीं होता कि उसे जिस तरफ़ चाहे मोड़ा जा सके या उसमें संकल्प और चरित्र की दृढ़ता न हो। उसका चरित्र दुर्बल और डगमग चरित्र (Easy Going Character) नहीं होता। उसके चरित्रबल पर विश्वास किया जा सकता है। पारलौकिक जीवन की धारणा एक स्थायी और शाश्वत मूल्य के रूप में उसके जीवन का मेरुदण्ड (Backbone) होती हैं। यह चीज़ उसे चरित्र-बल प्रदान करती है। उसके जीवन में किसी प्रकार के द्वन्द्वात्मक तत्त्व नहीं पाए जाते। ऐसा नहीं होता कि उसका जीवन परस्पर विरोधी बातों से युक्त हो और वह तुच्छ इच्छाओं और वासनाओं के वशीभूत होकर रह गया हो। ऐसा सम्भव नहीं कि नैतिकता की माँग और सामाजिक मर्यादा कुछ कहती हो और उसकी लौलुपता उसे किसी अन्य दिशा में घसीट रही हो और वह कभी इधर झुकता हो और कभी उधर मुड़ जाता हो। चरित्र के बिना यह संभव है कि आदमी से कभी कोई नेकी का काम हो जाए, किन्तु उसका दिल गुनाहगार ही रहेगा, नेकी या भलाई उसके व्यक्तित्व या चरित्र की

परिचायक न होगी, जब भी अवसर मिलेगा वह बुराई से बाज़ नहीं रह सकता। वह घी, दूध, मक्खन, तेल आदि में मिलावट कर सकता है। उनमें ऐसी चीज़ें डाल सकता है जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हों। अजीब बात तो यह है कि दवाओं तक में वह मिलावट कर जाता है, जिससे रोग से मुक्त होने के बदले इसकी भी सम्भावना रहती है कि रोगी अपने जीवन ही से मुक्त हो जाए। अतः आख़िरत पर विश्वास न हो तो आदमी जो बुराई भी करे वह कम है।

जब तक मनुष्य आन्तरिक द्वन्द्वों से मुक्त न हो, उसकी इच्छाएँ शुभ और स्थायी न हों और उसके यहाँ भावनाओं और कर्मों के मध्य एकसरता और सामंजस्य न पाया जाए, वही अपनी इच्छाओं और वाह्य प्रभावों के हाथों का खिलौना होता है। उसके जीवन की प्रत्येक श्वास संयोग के परदे में छिपी होती है। किसी क्षण भी उसकी नीति बदल सकती है। साधारणतया समझौतों और सन्धियों के विषय में हम यह समझते हैं कि उनके अनुसार समाज का प्रत्येक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के साथ जुड़ जाता है, हालाँकि वास्तविक रूप से यह उसी समय सम्भव है जबकि समाज का प्रत्येक व्यक्ति सबसे पहले स्वयं अपने आपसे जुड़ा हो। उसी स्थिति में यह आशा की जा सकती है कि जब वह किसी समझौते के अन्तर्गत किसी अन्य व्यक्ति से सम्बन्ध स्थापित करेगा तो वह विश्वसनीय सम्बन्ध होगा।

9. आख़िरत या परलोक को माननेवाला जीवन को उसकी सम्पूर्णता और साकाल्य (Totality) में देखता है। उसका जीवन अपनी समग्रता से सम्बद्ध हो जाता है। वह जीवन के खण्डित रूप के पीछे नहीं दौड़ता। उसकी दृष्टि में वैयक्तिकता से लेकर उसका समष्टीय स्वरूप एक होता है और उसके आगे बढ़कर वह जीवन को परलोक तक विस्तृत देखता है। वह परलोक को जीवन की अन्तिम और श्रेष्टतम सम्भावना मानता है। उसे इसका पता होता है कि वास्तविकता की दृष्टि से आख़िरत (परलोक) ही यथार्थ है और वर्तमान लोक उसकी मात्र

प्रतिच्छाया है। समग्र को पाने के लिए आवश्यक है कि मानव परलोक के लिए जिये और परलोक ही के लिए मरे। वह अपने को परलोक की दिशा (Direction) में रखता है, ताकि जीवन के मूल स्रोत से उसका सम्बन्ध बना रहे और उसका जीवन खण्डित होकर न रहे। क्योंकि सफलता का मात्र साधन वही है। इसलिए स्वभावतः उसकी दृष्टि में किसी प्रकार की तंगी और संकीर्णता शेष नहीं रहती। उसका हृदय विशाल हो जाता है और उसे धैर्य और सहनशीलता जैसी शक्ति मिल जाती है जो चरित्र की यथार्थ आत्मा है। उसमें सारे ही नैतिक गुण अपने आप आ जाते हैं। जीवन की समग्रता आख़िरत या पारलौकिक जीवन है। जो लोग उसके लिए एकाग्र हो गए, जिन्होंने उसे गंतव्य और मंज़िल समझा, सफल वही रहे। क़ुरआन में है :

> "हमारे बन्दो! इबराहीम, और इसहाक़ और याक़ूब को भी याद करो जो हाथोंवाले और नेत्रवान (अर्थात् शक्ति और ज्ञान चक्षुवाले) थे। निस्संदेह हमने उन्हें एक विशिष्ट बात के लिए चुन लिया था, और वह वास्तविक घर (आख़िरत) की याद थी।"
> (क़ुरआन, 38/45-46)

10. आख़िरत (परलोक) को माननेवालों में वीरता और निर्भयता के गुण भी होते हैं। वह यदि डरता है तो केवल एक परमेश्वर से डरता है। ईश्वरीय भय के कारण दूसरे सभी डर उसके हृदय से निकल जाते हैं। ईश्वर के सामने दूसरे सभी उसे निर्बल दिखाई देने लगते हैं। वह जानता है कि उसका मामला वास्तव में ईश्वर से है। उसी के पास उसे लौटकर जाना है। फिर और किसी का भय कैसा? फिर वह यह समझता है कि आख़िरत की ज़िन्दगी ईश्वर के हाथ में है, उसे कोई छीन नहीं सकता। फिर उसे डर किस बात का हो? यह निडरता उसमें वीरता का ऐसा सूत्रपात करती है जिसका कोई जवाब नहीं!

इसी वीरता और निर्भयता के कारण उसे ऐसा आत्मसम्मान प्राप्त होता है कि वह किसी के आगे हीन-भाव प्रकट नहीं करता। हीन-भावना उसके भीतर से मूलरूप से निकल जाती है। उसे उच्च-भावना और विचारों की जो सम्पदा प्राप्त होती है उसके कारण बड़े-से-बड़े धनवान

और विश्व-प्रसिद्ध व्यक्तित्व भी उसकी निगाह में नहीं जँचते। वह जानता है कि जो जीवन के रहस्य से अनभिज्ञ है और सांसारिक जीवन ही को सब कुछ समझता और उसी के लिए प्रयत्नशील है; उसकी दशा तो अत्यन्त दयनीय है। उसके मुक़ाबले में अपने को हीन समझने का कोई कारण नहीं। वह सबसे बेपरवाह होता है और अपनी जगह सन्तुष्ट होता है। उसे न किसी का लोभ होता है और न वह किसी की आशा में रहता है। एक ईश्वर से आशा दूसरी समस्त आशाओं से उसे मुक्त कर देती है। वह झूठी आशाओं के साथ नहीं जीता। किन्तु यह संतोष, यह निडरता और यह आत्म-सम्मान की भावना उसे अभिमानी नहीं बनाती। ईश्वर की महानता का ज्ञान और उसके समक्ष अपनी निर्बलता की अनुभूति उसमें जो गुण उत्पन्न करती है, वह अंहकार नहीं, विनय है। वह गर्व और क्रूरता नहीं, नम्रता, दया और प्रेम है। इस सम्बन्ध में क़ुरआन की ये आयतें दृष्टव्य हैं

> "ईश्वर से डरते रहो और भली-भाँति जान लो कि तुम्हें उससे (अर्थात् ईश्वर से) मिलना है, और ईमान लानेवालों को शुभ-सूचना दे दो।" (क़ुरआन, 2/223)

> "ईश्वर का डर रखो, और जान लो कि तुम उसी की सेवा में इकट्ठे किए जाओगे।" (क़ुरआन, 2/203)

परलोक तो ईश्वर से मुलाक़ात है, उसकी सेवा में उपस्थित होना है, उसका साक्षात्कार प्राप्त करना है। फिर आख़िरत के माननेवाले का संसार क्यों न मधुमय और व्यापक हो! फिर वह ईश्वर को छोड़कर क्यों किसी का डर रखे? उसमें हीन भावना क्यों उत्पन्न हो? वह तो ईश्वर से, जो आनन्दमय और दयावान है, अपना सम्पर्क बनाए रखता है। उसकी दानशीलता का मुक़ाबला कौन करेगा?

> "तुम उन लोगों को, जो ईश्वर के मार्ग में मारे गए हैं, मुर्दा न समझो; बल्कि वे अपने प्रभु के पास जीवित हैं, रोज़ी पा रहे हैं। ईश्वर ने अपनी उदार-कृपा से जो कुछ उन्हें प्रदान किया है, वे उसपर बहुत प्रसन्न हैं और उन लोगों के लिए भी ख़ुश हो रहे हैं जो उनके पीछे रह गए हैं, अभी उनसे मिले नहीं हैं कि उन्हें भी न कोई भय होगा और न वे दुःखी होंगे।" (क़ुरआन, 3/169-170)

मालूम हुआ कि परमेश्वर के लिए जान खपानेवाले मरने के बाद और आख़िरत से पहले भी ऐसी स्थिति में होते हैं कि उन्हें मरा हुआ नहीं कहा जा सकता। वे जीवित होते हैं। जीवन उनसे छिनता नहीं। जीवन का तो शरीर से भिन्न अपना स्वतंत्र अस्तित्व है। शरीर के विलग होने से जीवन नष्ट नहीं हो जाता। ईश्वरीय मार्ग पर चलनेवाले दुनिया की परिभाषा में भले ही मरे हों, किन्तु उन्हें तो अमरता प्राप्त होती है। वे मरकर न केवल यह कि जीवित रहते हैं, बल्कि उन्हें ईश्वर की ओर से अनुकूल आहार भी मिलता रहता है। ईश्वर ने उन्हें वह कुछ दे रखा होता है कि वे ख़ुशियाँ मना रहे होते हैं। उन्हें अपने उन साथियों और भाइयों के विषय में भी शुभ-सूचनाएँ पहुँचती रहती हैं जो उनके पीछे दुनिया में रह गए होते हैं, उन्हें आख़िरत में जो चीज़ें और सम्मान प्राप्त होगा वह अलग है। ये चीज़ें तो उन्हें तत्काल ही मृत्यु के पश्चात् प्राप्त हो जाती हैं।

जब वस्तुस्थिति यह हो और आदमी को इसका विश्वास भी हो तो आप स्वयं अनुमान कर सकते हैं कि उसकी मनोदशा क्या होगी। क्या वह मृत्यु से डरकर सत्य-पथ पर चलना छोड़ देगा? क्या वह दुनिया का लोभी हो सकता है? क्या उसके भीतर वीरता के अंकुर न फूट निकलेंगे? क्या उसमें उदारता, धैर्य और सहनशीलता के गुण पैदा न हो जाएँगे? क्या वह आत्म-गौरव और स्वाभिमान का प्रतीक न बन जाएगा? क़ुरआन में है :

> "यह माल और बेटे तो केवल सांसारिक जीवन की शोभा हैं, जबकि शेष रहनेवाली नेकियाँ ही तेरे प्रभु की दृष्टि में फल की दृष्टि से उत्तम हैं।" (क़ुरआन, 18:46)

अब आप स्वयं सोच सकते हैं कि यदि कोई इस बात को पा जाए जो इस आयत में बयान हुई है तो क्या वह न समझेगा कि धन, सम्पत्ति और आदमी की वास्तविक कमाई तो नेकियाँ और भले कार्य हैं? मनुष्य अपने रुपये लगाकर अपने कारोबार और व्यापार में लाभ की आशा करता है, फिर वह ज़्यादा-से-ज़्यादा नेकियाँ और भलाई के कार्य करके उस उत्तम की आशा क्यों न करे जिसकी सूचना उसका प्रभु उसे दे रहा है? क्या वह नेकियों में आगे न होगा? क्या उसका व्यवहार लोगों के

साथ भलाई और सहृदयता का न हो जाएगा? क्या वह दया और प्रेमभाव में पीछे रह सकता है? क्या उसमें दानशीलता और सहिष्णुता न पाई जाएगी? क्या वह संसार के लिए प्रकाश-स्तम्भ और मार्गदर्शक न होगा?

11. पारलौकिक जीवन को स्वीकार करनेवाला मनुष्य भी मनुष्य ही होता है। उससे भूल-चूक भी सम्भव है, किन्तु वह बुराई पर देर तक क़ायम नहीं रहता। वह शीघ्र ही सावधान हो जाता है और प्रायश्चित करता और क्षतिपूर्ति की कोशिश करता है। ऐसे लोग बड़े सौभाग्यशाली हैं। उनपर भी ईश्वर की अपार कृपा और दया होगी। कुरआन में है :

> "बढ़ो अपने प्रभु पालनहार की क्षमा और उस जन्नत की ओर जिसका विस्तार आकाशों और धरती जैसा है। यह उन लोगों के लिए तैयार है जो (ईश्वर) का डर रखते हैं। उन लोगों के लिए जो ख़ुशहाली और तंगी की प्रत्येक अवस्था में (भले कामों में) ख़र्च करते रहते हैं, और क्रोध को रोकते हैं, और लोगों को क्षमा करते है— और ईश्वर उत्तमकारों से प्रेम करता है। और जिनका हाल यह है कि जब वे कोई गुनाह कर बैठते या ज़ुल्म कर बैठते हैं तो तत्काल वे ईश्वर को याद करके अपने गुनाहों की क्षमा चाहने लगते हैं— और कौन है सिवाय ईश्वर के जो गुनाहों को क्षमा कर सके? और जानते-बूझते वे अपने किए पर अड़े नहीं रहते।" (क़ुरआन, 3/133-135)
>
> "(मेरी ओर से) कह दो : ऐ मेरे वे बन्दो, जिन्होंने अपने आप पर ज़्यादती की! ईश्वर की दयालुता से निराश न हो, निस्सन्देह ईश्वर सारे गुनाहों को क्षमा कर देता है। निस्संदेह वह बड़ा क्षमाशील और दया करनेवाला है।" (क़ुरआन, 39/53)

मतलब यह है कि मनुष्य से ग़लती हो सकती है, किन्तु ईश्वर और आख़िरत पर ईमान लानेवाले ग़लती पर अड़े नहीं रहते। एक ओर वे अधिक-से-अधिक शुभ कर्म करते हैं और दूसरी ओर यदि उनसे कोई गुनाह हो जाता है तो तत्काल उन्हें ईश्वर याद आ जाता है। वे उससे अपने गुनाहों और ग़लतियों के लिए क्षमा की प्रार्थना करते हैं। ईश्वर भी उनपर दया दर्शाता है और उन्हें क्षमा कर देता है। इस प्रकार ईश्वर और आख़िरत पर विश्वास रखनेवालों के लिए किसी दशा में भी निराशा

की सम्भावना नहीं रहती। यदि वे कभी ठोकर खाकर गिरते भी हैं तो तुरन्त उठ भी जाते हैं। यह बड़ी विशेषता है जो उन्हें प्राप्त होती है। वे ईश्वर की क्षमाशीलता और दयालुता पर पूरा भरोसा रखते हैं।

यह भी मालूम हुआ कि जन्नत या स्वर्ग का मार्ग मानव-समाज से अलग होकर नहीं जाता कि यह कहा जाए कि परलोक के मानने का अर्थ यह है कि मनुष्य सांसारिक और सामाजिक दायित्वों से विमुख होकर सबसे अलग रहे और मानव-समाज सम्बन्धी ज़िम्मेदारियों को भुला दे या उन्हें उन लोगों के लिए छोड़ दे जो न ईश्वर में विश्वास रखते हैं और न पारलौकिक जीवन को मानते हैं।

> "और जो देते हैं, जो कुछ करके देते हैं, और हाल यह होता है कि दिल उनके काँप रहे होते हैं इसलिए कि उन्हें अपने प्रभु की ओर पलटना है। यही वे लोग हैं जो भलाइयों में जल्दी करते हैं और यही उनके लिए अग्रसर रहनेवाले हैं।" (क़ुरआन, 23/60-61)

आख़िरत को माननेवालों और उसकी चिन्ता करनेवालों की यह हालत होती है जो इन आयतों में बयान हुई है। वे भलाई करके और भलाई के कामों में अग्रसरता दिखाकर सन्तुष्ट नहीं हो जाते और किसी प्रकार का अभिमान और अहंकार उन्हें नहीं घेरता, बल्कि वे हर हालत में डरते रहते हैं कि मालूम नहीं आख़िरत में हमारी नेकियाँ स्वीकार भी होती हैं या नहीं। ऐसे लोगों के पवित्रात्मा होने में क्या सन्देह हो सकता है!

अन्त में अपने पाठकों से हम यह कहना चाहेंगे कि आख़िरत या परलोक की समस्या वास्तव में हमारे जीवन की समस्या है। अतः हमारा यह कर्तव्य है कि हम इस विषय को गम्भीरता के साथ लें और इस सम्बन्ध में अपना सही मत निर्धारित करें और जीवन को उसी के अनुसार बनाने के लिए प्रयत्नशील हों। ऐसा न हो कि समय निकल जाए और हम अपनी सफलता के लिए कुछ भी न कर सकें।

● ● ●